हिन्दी अंक 20 : अप्रैल, 2019
चौ-मासिक, बेंगलूरु

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी

लर्निंग कर्व

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

पाठ्यपुस्तकें

सम्पादकीय टीम
चन्द्रिका मुरलीधर
मधुमिता सुधाकर
निमरत खण्डपुर
प्रेमा रघुनाथ
शोभा लोकनाथन कवुरी

सलाहकार
हृदय कान्त दीवान
सचिन मुले
एस. गिरिधर
उमाशंकर पेरिओडी

हिन्दी अंक सम्पादन
राजेश उत्साही

कवर फोटो
टीम कथावना, 2015 के सौजन्य से

डिजाइनिंग
Banyan Tree
98458 64765

हिन्दी अंक लेआउट
आदर्श प्रा.लि., भोपाल, मध्यप्रदेश

मुद्रण
एससीपीएल, बेंगलूरु - 560 062
+91 80 2686 0585 /
+91 98450 42233
www.scpl.net

कृपया ध्यान दें :

इस अंक में प्रकाशित लेख मूलतः अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व (अँग्रेज़ी) अंक 3, अप्रैल, 2019 के लेखों के हिन्दी अनुवाद हैं। यह अप्रैल, 2026 में ई-कॉपी के रूप में तैयार एवं ऑनलाइन प्रकाशित हुआ है। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं, उनसे अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

"अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक प्रकाशन है। इसका उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक-अध्यापकों, स्कूल प्रमुखों, शिक्षा अधिकारियों, अभिभावकों और गैर-सरकारी संगठनों तक ऐसे प्रासंगिक और विषयगत मुद्दों में पहुँच बनाना है जो उनके रोज़मर्रा के काम से सम्बन्धित हैं। लर्निंग कर्व शैक्षिक जगत के विभिन्न दृष्टिकोणों, अभिव्यक्तियों, परिप्रेक्ष्यों, नई जानकारियों और नवाचार की कहानियाँ प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका मूल विचार 'शैक्षणिक' और 'अभ्यासकर्ता' के मध्य सन्तुलन हेतु उन्मुख पत्रिका के रूप में स्थापित होना है।"

सम्पादक की क़लम से

स्कूलों में पाठ्यपुस्तकों के बारे में ज़्यादा सोच-विचार नहीं किया जाता, सिवाय इसके कि यह एक ऐसी किताब है जिसे परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए पढ़ और सीख लेना चाहिए, भले ही वह समझ में आए या न आए। हाँ लेकिन, स्कूल में नए सत्र की शुरुआत में नई पुस्तकों का आगमन बहुत उत्साह की बात होती थी। आज के बदलते परिदृश्य में पाठ्यपुस्तकों ने एक नई भूमिका और ज़िम्मेदारी सम्हाल ली है। हमने भी यह समझ लिया है कि पाठ्यपुस्तक का क्या मतलब होना चाहिए, उसे कैसा होना चाहिए और उसे क्या करना चाहिए। वे शिक्षक के हाथों में महत्त्वपूर्ण संकायों को विकसित करने व तर्कसंगत शक्तियों का प्रयोग करने का साधन हैं। उन्हें धर्मनिरपेक्ष होना चाहिए। पाठ्यपुस्तकों को वर्ग, जाति, सम्प्रदाय, जेंडर व भौतिक और सामाजिक वातावरण को लेकर हर उस मुद्दे की जाँच करने के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए जिनका हम आज समाज में सामना कर रहे हैं।

अपने इस विशाल देश की विविधता को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि ऐसा करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। जिन मूलभूत मूल्यों को हम अपने समाज में बढ़ावा देना चाहते हैं, उन्हें सम्बोधित करना कोई आसान काम नहीं है, ख़ासकर ऐसे समाज में जिसमें समानताएँ तो हैं लेकिन अभी भी कई मायनों में विविधताएँ भी हैं। पाठ्यपुस्तकों में – हमारी साझी विरासत, पर्यावरण की रक्षा, जिज्ञासा, पूछताछ और चिन्तन को प्रोत्साहित करके वैज्ञानिक मनोवृत्ति को विकसित करने आदि मुद्दों के साथ ही हमारी रचनात्मक कलाओं को पोषित करने को भी सम्बोधित करना चाहिए : यह सूची तो ऐसी है जो हमारे जीवन के हर पहलू को छूती है, लोकतंत्र और समानता को ज़िन्दा रखती है और साथ ही वैयक्तिकता एवं विभिन्न विकल्पों का सम्मान दोनों को बढ़ावा देती है।

इन बदलावों में एनसीईआरटी और एससीईआरटी सबसे आगे रहे हैं, उन्होंने इन किताबों में उन तमाम अपेक्षित माँगों को शामिल किया है, जिनका उपयोग ज्ञान और मौलिकता के साथ किया जाए तो वे समाज को बदलने की ताक़त रखती हैं। विद्वत्तापूर्ण समितियों ने अन्तराल को पाटने के रास्ते खोजे हैं और आज की पाठ्यपुस्तकें बहुत विचार-विमर्श और चर्चा का परिणाम हैं। इनमें भारत के कई पहलुओं को सम्बोधित किया गया है, जिससे पाठ्यपुस्तकें केवल दो ज़िल्दों के बीच मुद्रित सामग्री बनकर नहीं रह गई हैं, जिसे 'रटकर' दुबारा प्रस्तुत कर दिया जाए। अकथित मक़सद, आदेशात्मक अपारदर्शी तरीक़ों वाली महँगी-महँगी पाठ्यपुस्तकें, मूल पाठ्यपुस्तक को स्पष्ट करने या उसे आसान बनाने वाली गाइड पुस्तकें – सभी ने चर्चा और चिन्तन को बढ़ावा देने वाली सहयोगात्मक सामग्री के लिए मार्ग प्रशस्त किया है।

इस अंक में इन्हीं मुद्दों पर विचारशील लेख प्रस्तुत किए गए हैं। जैसे कि वर्तमान में पाठ्य-पुस्तकें कैसी हैं, उन्हें कैसा होना चाहिए, उनका इष्टतम उपयोग करने के तरीक़े क्या हैं, वे विज्ञान और पर्यावरण विज्ञान शिक्षण के लिए कौन-से नए विचार उत्पन्न कर सकती हैं आदि। इस प्रक्रिया में कई लेखकों के व्यक्तिगत अनुभव शामिल हैं और उनके लेख बहुत मूल्यवान हैं क्योंकि उनके लेखों से यह समझ उत्पन्न होनी शुरू होती है कि शिक्षक पाठ्यपुस्तकों का सर्वोत्तम उपयोग किस प्रकार कर सकते हैं।

हम राजेश उत्साही और उनकी टीम को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने हमेशा की तरह हिन्दी लेखों का अनुवाद किया।

मैं अपने पाठकों के साथ एक जानकारी साझा करना चाहती हूँ कि अब हम भारत के समाचार पत्रों के साथ पंजीकृत हो गए हैं और पाठकों को इस अंक के संख्यांकन में बदलाव देखने को मिलेगा जो अब कालक्रमानुसार जारी रहेगा।

हम इस पत्रिका को विचारोत्तेजक और उपयोगी बनाने में आपके फीडबैक और भागीदारी का स्वागत करते हैं। अपने विचार साझा करने के लिए कृपया नीचे दी गई आईडी पर ई-मेल भेजें।

प्रेमा रघुनाथ
सम्पादक, लर्निंग कर्व
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org

अनुवाद : नलिनी रावल
पुनरीक्षण : सात्विका ओहरी
कॉपी एडिटर : कामिनी उपाध्याय

इस अंक में

पाठ्यपुस्तक विकास प्रक्रियाएँ : कुछ चिन्तन, कुछ सबक़ 7
अरविन्द सरदाना

लोकतंत्र को आगे बढ़ाने में पाठ्यपुस्तकों की भूमिका 13
हृदय कान्त दीवान

पर्यावरण अध्ययन पाठ्यपुस्तक : आरम्भ से अन्त तक 21
चन्द्रिका मुरलीधर और रोनिता शर्मा

पाठ्यपुस्तकों को स्कूल तक ले जाना 27
पार्थसारथी मिश्रा

सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक : मानसिकता में परिवर्तन? 32
दीप्ति प्रिया मेहरोत्रा

वार्तालाप की एक कक्षा 39
अमृता मसीह

दिल्ली शिक्षाक्रान्ति : 'प्रगति' शृंखला 42
अंजू घावरी

पाठ्यपुस्तक की मदद से आत्मकथा पर काम 45
छोटे लाल

एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों के साथ काम करने का अनुभव 47
ज्योत्स्ना लाल और हैदर मेहदी रिज़वी

ग्रामीण राजस्थान में प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों को प्राथमिक स्तर की अँग्रेज़ी पढ़ाना 51
एकता धनकर, ज्योत्स्ना लाल, शिप्रा सुनेजा, वर्धना पुरी

लेखन के माध्यम से पाठ्यपुस्तक के विचार का विस्तार 58
मुरारी झा

शिक्षक-शिक्षार्थी के आपसी सम्बन्धों के निर्माण के लिए उपकरण के रूप में पाठ्यपुस्तकें : एक परिप्रेक्ष्य 63
राजराजेश्वरी टी.

हनीकॉम्ब' की विषय-सामग्री में सन्दर्भ की पड़ताल 66
रवि प्रताप सिंह

पाठ्यपुस्तकों का दायरा बढ़ाकर, सोच का दायरा बढ़ाना 72
साची खण्डपुर

प्रारम्भिक कक्षाओं में पाठ्यपुस्तकों के साथ काम करने का अनुभव 74
सौरभ सोम, अर्चना द्विवेदी, मोनू कुमार और प्रमोद काण्डपाल

विज्ञान की पाठ्यपुस्तक से सवाल 79
उमाशंकर

कक्षा में भारत 83
विजयाश्री पीएस

पाठ्यपुस्तक विकास प्रक्रियाएँ : कुछ चिन्तन, कुछ सबक़

अरविन्द सरदाना

कई वर्षों तक मेरे साथ काम करने वाले सहयोगियों में से एक ने हाल ही में बातचीत के दौरान टिप्पणी की, "आप अभी भी सरकारों के द्वारा पाठ्यपुस्तक का निर्माण करवाने में विश्वास करते हैं?" यह बात थोड़ी मज़ाक में और थोड़ी गम्भीरतापूर्वक कही गई थी। चूँकि मध्य प्रदेश में हम तीन दशक तक काम करते रहे, लेकिन इसके बावजूद भी होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम, सामाजिक विज्ञान और प्राशिका जैसे प्रयोगों की कोई संस्थागत स्मृति नहीं है। 2002 में औपचारिक रूप से इन्हें समाप्त कर दिया गया और एक तरह से मानो इन्हें दफ़न कर दिया गया। वर्तमान पाठ्यपुस्तकों को देखकर लगता है कि हम 1980 के दशक का प्रतिबिम्ब देख रहे हैं। लगता है कि हम फिर से उसी जगह पर आ खड़े हुए हैं। पाठ्यक्रम विकल्प और प्रस्तुति आज भी ज्ञान, शिक्षणशास्त्र और शिक्षकों की भूमिका पर वही विचार दर्शाते हैं जिन्हें हमने एक बार बदलने की कोशिश की थी। लेकिन अन्य राज्यों और राष्ट्रीय स्तर पर किए जाने वाले प्रयासों के लिए यह बात सही नहीं है। राज्य स्तर पर पाठ्यचर्या सम्बन्धी प्रक्रियाओं को शुरू करने वाली टीमों का हिस्सा बनने के लिए कई अन्य राज्य सरकारों द्वारा हमें आमंत्रित किया गया। इसी तरह से एनसीईआरटी द्वारा 2005 के आस-पास विज्ञान और गणित में विशेष रूप से तैयार की गई पाठ्यपुस्तकों का उपयोग अन्य राज्यों द्वारा किया जा रहा है। मध्य प्रदेश ने भी इन पाठ्यपुस्तकों को अपनाया है। इस प्रकार से समान विचार अलग-अलग तरीक़े से, और शायद अधिक स्थाई रूप में भी, सामने आए हैं। इस पर बहस हो सकती है। मेरे सहयोगी कठोरता से प्रत्युत्तर दे सकते हैं कि राज्य के सन्दर्भ का ध्यान रखने की दिशा में कोई भी प्रयास नहीं किया गया है। सामाजिक विज्ञान को छोड़ दिया गया, जो इस विषय को दी जाने वाली प्राथमिकता को दर्शाता है।

क्या पाठ्यपुस्तक विकास प्रक्रिया अनुभव के बीजों की छिटका बुआई का एक तरीक़ा है, जिसे सींचने पर निश्चित रूप से प्रतिक्रिया होगी? बेशक, हमारे पास यह जानने का कोई तरीक़ा नहीं है कि क्या इसे रौंद दिया जाएगा या यह एक पूर्ण विकसित पेड़ न सही, एक छोटा पौधा बनकर तो विकसित होगा ही। ईमानदारी के नाते, 2002 में मध्य प्रदेश में एकलव्य के कार्यक्रमों को बन्द करने के अलावा, आइए, हम राज्य के उन प्रयासों की भी गिनती करें जिन्हें हाल ही में, अर्थात 1995 के बाद, दफ़ना दिया गया है।

इनमें राजस्थान में लोक जुम्बिश (1998), असम एससीईआरटी पहल (2000), गुजरात एससीईआरटी विज्ञान पहल (2002), दिल्ली एससीईआरटी प्रयास (2003), और आईसीआईसीआई फ़ाउण्डेशन के नेतृत्व में राजस्थान एससीईआरटी प्रयास (2010) शामिल हैं। अगर हम इस बात को समझने की कोशिश करें कि इन्हें बन्द क्यों कर दिया गया, तो हमें कुछ जानकारी मिल सकती है क्योंकि तभी हम उनके पीछे मौजूद कारणों को समझ पाएँगे। संस्थागत स्मृति जीवित नहीं रहती, लेकिन क्या अनुभव के बीज किसी सुप्त अवस्था में दफ़न हो जाते हैं और नए अवसर मिलने पर अकसर पुनर्जीवित हो जाते हैं? क्या वे दीर्घकालिक परिवर्तन में योगदान करते हैं? राज्य स्तर पर जिन दिग्गजों के साथ हमने बाद में कार्य किया, उनके मन में यह समझ डीपीईपी की प्राथमिक विद्यालय शिक्षा पर हुई कार्यशालाओं, लोक जुम्बिश तथा अन्य कार्यक्रमों की वजह से विकसित हुई थी। पाठ्यचर्या सम्बन्धी प्रक्रियाएँ ऐसी प्रक्रियाएँ हैं जहाँ प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोण और बातचीत के बीच संघर्ष चलता रहता है और जिनका रास्ता कभी भी आसान या एक समान नहीं होता। साथ ही यह देखकर बहुत तक़लीफ़ और निराशा होती है कि जिन प्रयासों को करने में बरसों लग जाते हैं,

उन्हें राजनीतिक और नौकरशाही स्तर पर बदलावों के कारण समाप्त कर दिया जाता है। भले ही हमने पच्चीस वर्षों से भी अधिक समय तक इन कार्यक्रमों को क़ायम रखा, फिर भी एक प्रश्न जो हमने ख़ुद से पूछा वह यह है कि क्या एकलव्य में यह हमारा भोलापन था कि हमने सूक्ष्म प्रयोगात्मक स्तर से प्रणाली में स्थूल परिवर्तनों तक एक रेखीय संक्रमण की उम्मीद की? सी.एन.सुब्रमण्यम के शब्दों में-

"विडम्बना यह थी कि नई पाठ्यपुस्तकों के प्रकाशित होते ही नवाचार की भावना क्षीण-सी होने लगी और कक्षा-कक्ष की प्रक्रियाओं के 'पैकेज', शिक्षक उन्मुखीकरण, विकेन्द्रीकरण आदि के अन्य घटक पीछे रह गए। इसका मतलब यह हुआ कि नए विचारों को शायद ही कभी ज़मीनी स्तर पर लागू किया गया।"

फ़िलहाल आज जो लोग संघर्ष कर रहे हैं, उनको रणनीतिक प्रयासों के बारे में ऐसे कौन-से सुझाव दिए जा सकते हैं जो पाठ्यक्रम सम्बन्धी इन पहलों को बड़े लक्ष्य की ओर ले जाएँ?

केवल पाठ्यपुस्तकों का नहीं बल्कि एक कार्यक्रम का विकास

एकलव्य अनुभव से प्राप्त मुख्य सबक़ यह था कि यह सामाजिक विज्ञान के एक कार्यक्रम का विकास था। पाठ्यपुस्तकें उसका एक हिस्सा थीं, जो बहुत महत्त्वपूर्ण थीं और जिसके लिए बहुत कौशल या प्रयास की आवश्यकता थी, लेकिन वे अन्तिम उद्देश्य नहीं थीं। कक्षा प्रक्रियाओं में परिवर्तन भी उतना ही महत्त्वपूर्ण घटक था। यह केवल शिक्षक संवाद और प्रशिक्षण सत्रों के द्वारा ही सम्भव था– परिप्रेक्ष्य, मूल्यों और नई सामग्री पर एक संवाद। ये प्रशिक्षण सत्र एक वर्ष में पन्द्रह से बीस दिनों तक चलते थे। इसके साथ ही, चूँकि सामग्री को आज़माया जा रहा था, इसलिए नियमित रूप से कक्षा का अनुवर्तन और शिक्षकों के साथ बातचीत भी की जा रही थी। इन तत्वों के बिना कक्षा-कक्ष की प्रक्रिया नहीं बदल सकती है।

इसके विपरीत, एनसीईआरटी और एससीईआरटी प्रक्रियाओं में पाठ्यपुस्तक विकास टीमों को एक सख़्त समय-सीमा का पालन करना पड़ता है। यह एक प्रमुख बाधा है। मूल्यांकन के लिए कुछ न्यूनतम प्रशिक्षण और परिवर्तन बताए जाते हैं। लेकिन जैसा कि हमारा अनुभव है, यह कारगर नहीं होते। वास्तव में देखा जाए तो वे विकास टीम के लिए आवश्यक लक्ष्यों के रूप में शिक्षक संवाद के अन्य तत्वों से न तो निपट पाते हैं और न ही उनका निर्माण करते हैं (*बत्रा*)। इस ज़रूरत को स्वीकार किया जाता है और समझा भी जाता है, लेकिन कार्यान्वयन के लिए कोई योजना या रणनीति नहीं है। संविधान में राज्य नीति के हमारे निदेशात्मक सिद्धान्तों की तरह इसे पूरी तरह से वांछनीय कार्य के रूप में छोड़ दिया गया है जिसे पाठ्यपुस्तक विकास के बाद की प्रक्रिया के रूप में लिया जाना है। निष्पादन के लिए एक प्रामाणिक योजना के बिना ही पाठ्यों में विचार सन्निहित कर दिए जाते हैं। लेकिन वास्तव में इसे अनदेखा कर दिया जाता है। ऐसा क्यों होता है?

संस्थागत निर्वात

देखा जाए तो एक स्तर पर, विशेषकर सीबीएसई विद्यालयों के सम्बन्ध में, एक संस्थागत निर्वात की स्थिति उत्पन्न हुई है। सीबीएसई से सम्बद्ध विद्यालय देश भर में फैले हुए हैं और इनकी दो श्रेणियाँ हैं – एक, केन्द्रीय और नवोदय विद्यालयों जैसे सरकारी विद्यालयों की और दूसरी, निजी रूप से प्रबन्धित विद्यालयों की जो 'एनसीईआरटी पाठ्यक्रम के अनुसार' लेबल वाली पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करते हैं और जहाँ पर शिक्षक उन्मुखीकरण या प्रशिक्षण का कार्य संस्थान के प्रबन्धन पर छोड़ दिया जाता है। इस बात पर ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि क़रीब 25,000 सीबीएसई विद्यालयों में से लगभग 23,000 निजी तौर पर प्रबन्धित हैं। केन्द्रीय विद्यालयों के अपने संगठन हैं और कई निजी विद्यालयों के अपने नेटवर्क हैं, जैसे डीएवी, डीपीएस विद्यालय या कुछ व्यक्तिगत विद्यालय जो उन्मुखीकरण के लिए अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार निर्णय लेते हैं। एनसीईआरटी का कहना है कि इसके लिए संस्थागत जनादेश नहीं है और सलाहकार परिषद के लिए यह संख्या बहुत बड़ी है। सीबीएसई पाठ्यक्रम के लिए अनुमोदन प्राधिकारी है, लेकिन इसका मुख्य कार्य सम्बद्धीकरण और सार्वजनिक परीक्षा आयोजित

करना है। पुस्तकों के निर्माण के बाद कुछ शिक्षक कार्यशालाएँ आयोजित की गईं, लेकिन ये बेहद सीमित हैं। उदाहरण के लिए, आरआईई, भोपाल (एनसीईआरटी संस्थानों के समूह का एक भाग) में नई पाठ्यपुस्तकों के आने के बाद सामाजिक विज्ञान के लिए कार्यशालाएँ आयोजित की गईं लेकिन उस क्षेत्र के हज़ारों विद्यालयों में से शायद केवल पन्द्रह से बीस विद्यालयों ने ही भाग लिया। जहाँ परिप्रेक्ष्य निर्माण की आवश्यकता होती है, वहाँ टेलीविज़न के माध्यम से शिक्षक से संवाद प्रभावी नहीं होता।

इस प्रकार, निजी विद्यालयों के शिक्षकों के पास पाठ्यपुस्तकों के परिप्रेक्ष्य और सामग्री के लिए ज़िम्मेदार लोगों के साथ बातचीत करने का कोई अवसर नहीं होता और इसलिए वे इन्हें 'ज़रूरत से ज़्यादा' (overloaded) समझ लेते हैं और कई गतिविधियों को अनावश्यक मान लेते हैं। उनमें से कई शिक्षक अनेक ऐसे प्रश्नों या गतिविधियों को छोड़ देते हैं जो सामाजिक विज्ञान की कक्षा को अन्तर्क्रियात्मक बना सकती हैं। वे उन छोटी-मोटी सूचनाओं की खोज में लग जाते हैं जिन्हें कक्षा में बोलकर लिखवाया जा सके। पाठ की भावना अकसर पलट जाती है। साथ ही चूँकि उनके विचारों और अनुभव को सुनने वाला कोई नहीं होता, इसलिए उनकी अपेक्षाएँ व्यवहार्य से अधिक हो सकती हैं। शिक्षकों को उनके प्रबन्धन द्वारा लचीलेपन की अनुमति नहीं दी जाती है और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें दरकिनार कर दिया गया है। पुरानी प्रक्रियाओं को बनाए रखने वाली संरचनाओं के बजाय नई पाठ्यपुस्तकों को दोषी ठहराया जा रहा है।

इस तरह के निर्वात में, कोई भी सार्वजनिक चर्चा चरम स्थिति की ओर ले जाती है – या तो पाठ्यपुस्तकों की प्रशंसा की जाती है या उनकी कटु आलोचना की जाती है। जो भी पाठ्यपुस्तकें ऐसे माहौल से बच जाती हैं जहाँ उन पर बहस न की गई हो, अनुभव से भरी हुई हों और फिर शिक्षण समुदाय द्वारा स्वीकार कर ली गई हों, वहाँ कई शिक्षक पाठ्यपुस्तक की सामग्री को केवल निष्पादित करने के कार्यों के रूप में लेते हैं और ऐसा कुछ नहीं जिस पर वे विश्वास करते हों। ऐसे माहौल में शिक्षक की उदासीनता बढ़ती है। यह केवल एक दोषदर्शी दृष्टिकोण को पोषित करता है। कुछ उन्मुखीकरण सत्रों में व्यक्तिगत विद्यालय के शिक्षकों और प्रशासन ने मेरे साथ इस तरह का व्यवहार किया है कि जैसे मैं एनसीईआरटी के शैतान का अवतार हूँ जिससे वे प्रत्यक्ष रूप में कभी नहीं मिल सके थे! श्रीनिवासन 'इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली' में प्रकाशित अपने एक पेपर की शुरुआत एक छात्र के उद्धरण से करते हुए लिखते हैं -

"अप्रैल 2014 में, एक अख़बार ने कक्षा-10 के सामाजिक विज्ञान बोर्ड की परीक्षा के प्रश्न के बारे में एक शिक्षार्थी की नाराज़ प्रतिक्रिया की सूचना दी। यह शिक्षार्थी सामाजिक विज्ञान पाठ्यक्रम को बनाने वालों का विवरण जानना चाहता था और उन्हें जान से मार देना चाहता था (राजस्थान पत्रिका 2014)। 2012 में, भारतीय संसद को राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी), नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में कार्टून जैसी 'अनुचित' सामग्रियों के उपयोग के लिए स्थगित कर दिया गया था। इसके कारण स्कूली सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों (उदाहरण के लिए देखिए, सिंह 2012; वानखेड़े 2012) में शैक्षणिक उपकरणों के रूप में कार्टून के उपयोग पर एक वर्ष तक बहस चली। बाद में, केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सीबीएसई), नई दिल्ली ने विद्यालयों को सूचित किया कि बोर्ड परीक्षाओं में सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों (एनसीईआरटी) की 'दृश्य-सामग्री' से सम्बन्धित कोई प्रश्न न पूछा जाए (हिन्दू 2010)।"

मुद्दे के प्रति शिक्षकों की उदासीनता भी इसकी वजह हो सकती है। उनकी राय नहीं माँगी गई। इस बात पर विचार नहीं किया गया कि वे पाठ्यपुस्तकों का उपयोग किस तरह से करते हैं। उन्हें 'दृश्य-सामग्री' से सम्बन्धित सवालों पर प्रतिबन्ध लगाने से कोई फ़र्क नहीं पड़ा। शिक्षकों की यह उदासीनता उनके साथ संवाद न करने से उपजी है। जो पाठ्यपुस्तकें परिप्रेक्ष्य में बदलाव की पेशकश करती हैं, उनके लिए संवाद आवश्यक है और यह कोई वैकल्पिक चीज़ नहीं जो आप अपने लिए खोज लें। कई लोगों के लिए नई किताबें उनके स्नातक या स्नातकोत्तर

पाठ्यक्रम संगठन से मेल नहीं खाती हैं। यदि बातचीत सम्भव नहीं है तो मैं अपने सहयोगी की सलाह मान लूँगा और शायद इस प्रक्रिया को छोड़ दूँगा।

क्या नए संस्थागत मानदण्ड बनाकर शिक्षक संवाद को अनिवार्य किया जा सकता है?

एक शाश्वत आशावादी होने के नाते मेरा मानना है कि संस्थागत रूप से शिक्षकों के साथ बातचीत सुनियोजित की जा सकती है। इसके लिए एनसीईआरटी और सीबीएसई को संयुक्त रूप से नियमों की व्यवस्था (प्रोटोकॉल) स्थापित करनी होगी। इसका पहला सिद्धान्त तो यह है कि हमें सभी शिक्षकों तक पहुँचना चाहिए, चाहे वे सरकारी विद्यालयों के हों या निजी विद्यालयों के। प्रयास यह है कि कक्षा में आमतौर पर प्रचलित संस्कृति को बदला जाए। इस मामले में सरकारी और निजी दोनों ही विद्यालय समान हैं। भविष्य में निवेश करने की आवश्यकता है और यह सभी शिक्षकों को सम्बोधित किए बिना नहीं किया जा सकता है। इसके लिए सार्वजनिक प्रयास और सरकार द्वारा वित्तीय निवेश की आवश्यकता है। एक बदली हुई कक्षा संस्कृति एक सार्वजनिक भलाई की तरह है – यह सभी को लाभ देती है लेकिन यह सार्वजनिक प्रयास के बिना नहीं होगी।

एनसीईआरटी को आरआईई को केन्द्र बनाकर विद्यालयों के लिए राज्य संसाधन समूह बनाने का जनादेश लेना होगा। ये संसाधन समूह ऐसे लोगों का मिश्रण होगा जो स्वयं संसाधन शिक्षक हो सकते हैं, वे विश्वविद्यालयों या कॉलेजों में संकाय या आवश्यक क्षेत्र में अनुभव रखने वाले ग़ैर-सरकारी संस्था के कर्मी हो सकते हैं। हमने विभिन्न राज्यों में इन प्रक्रियाओं को किया है और हम जानते हैं कि यह सम्भव है। विषय समूहों के गठन के लिए समय, निवेश और विज़न की आवश्यकता है। एनसीईआरटी को यह भूमिका निभानी चाहिए। साथ ही सीबीएसई को यह आदेश देना होगा कि प्रत्येक सम्बद्ध विद्यालय को, चाहे वह सरकारी हो या निजी, इन पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों के लिए विषयवार दल भेजने होंगे। एक ऐसे आदेश की आवश्यकता है जो समर्थककारी हो। आदेश उन्हें कोर्स में तो ला सकता है लेकिन प्रक्रिया को बनाए रखने के लिए एनसीईआरटी द्वारा अकादमिक प्रयास ज़रूरी है। प्रशिक्षण सत्र और संवाद को आकर्षक बनाना होगा ताकि शिक्षक इसमें शामिल होना पसन्द करें। यद्यपि यह कठिन है पर हमें अन्ततः मजबूत संसाधन समूह और शिक्षक सहकर्मी समूह बनाने की दिशा में आगे बढ़ना होगा। सीबीएसई को चाहिए कि वह प्रत्येक शिक्षक को एनसीईआरटी और आरआईई की देखरेख में स्थापित संसाधन टीमों द्वारा आयोजित प्रशिक्षण सत्र में भाग लेने के लिए कहे।

शिक्षकों के इस सहकर्मी समूह को पेशेवरों के एक समूह के रूप में देखा जाना चाहिए और विद्यालय के अलग-अलग प्रबन्धन द्वारा टुकड़ों में तोड़ने या अलग-थलग करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। पाठ्यपुस्तकों या कक्षा प्रक्रियाओं के डिज़ाइन या अध्यायों के चयन के फ़ैसले को विद्यालय प्रबन्धन और उनके शिक्षकों पर छोड़ देना चाहिए। यह विषयवस्तु/सामग्री और शिक्षाशास्त्र पर बातचीत की एक प्रक्रिया है, न कि कोई उच्च प्राधिकरण जो एक ऐसे समान प्रारूप को लागू करे जिसका पालन सभी विद्यालयों को करना है और यह एक परिषद का वास्तविक काम है। एक ऐसे प्रोटोकॉल की आवश्यकता है जो दो संस्थानों को एक नई व्यवस्था में लेकर आए। कुछ राज्य सरकारों ने यह कोशिश की है, लेकिन वे इस प्रक्रिया को बनाए रखने में सक्षम नहीं हो पाई हैं। आज हम पाठ्यपुस्तकों और गाइड के निजी बाज़ार से जूझ रहे हैं, जिन्होंने इस स्थान पर कब्ज़ा कर लिया है और अन्ततः शिक्षकों को पृथककारी स्थिति में ला रहे हैं।

पहले मूल्यांकन के मानदण्ड, फिर पाठ्यपुस्तकें

शिक्षकों के साथ इस मुद्दे पर संवाद अकसर तीखा रुख़ ले लेता है। शैक्षणिक विधियों या सामग्री पर कोई भी चर्चा ज़ल्द ही प्रश्न के रूप में बदल जाती है, 'लेकिन यह हमारे परीक्षा पैटर्न या ढाँचे के अनुकूल नहीं है।' यही असली अड़चन है। जब तक हम

मूल्यांकन पर अपनी सोच को बदलने के लिए तैयार नहीं होते, तब तक संवाद आगे नहीं बढ़ पाएगा। या फिर पाठ्यक्रम का पूरा होना अपने आप में एक लक्ष्य बन जाता है, क्योंकि कोई तीसरा व्यक्ति पूरे पाठ्यक्रम के आधार पर ही परीक्षा निर्धारित करेगा। शिक्षक अपने विद्यार्थियों के मूल्यांकन के लिए ज़िम्मेदार क्यों नहीं हो सकते? कैसे ज़्यादातर मूल्यांकन डर और मानसिक आघात पैदा करने का साधन बनने के बजाए अधिगम में सहायता कर सकते हैं?

आप बच्चों की रुचि और सीखने का मूल्यांकन कैसे करते हैं? यदि कोई सीखने के लिए सहायता करने वाले मूल्यांकन में रुचि रखता है तो वह क्या प्रयोग करे? कक्षा-8 की बोर्ड परीक्षा के लिए खुली किताब परीक्षाएँ और हाथ से किए जाने वाले प्रयोगों के लिए होविशिका के पुराने अनुभवों ने हमारे लिए लक्ष्य तय किए। सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में कई केस स्टडीज़ थीं और उनमें कहानियों का उपयोग किया गया था जिनमें हर खण्ड के बाद बीच-बीच में प्रश्न थे। यह सक्रिय हिस्सा था। ये सवाल मिले-जुले थे : जिनमें समझ, कहानी में निहित अवधारणा के साथ तर्क करने की क्षमता, दृश्य चित्र और नक़्शे को समझना, और वैचारिक बिन्दुओं पर आपकी राय माँगने वाले खुले सवाल शामिल थे। *(बत्रा और सामाजिक अध्ययन)*। ग़ौरतलब है कि बच्चों को लिखित रूप में अपने शब्दों में जवाब देने के लिए प्रोत्साहित करने के साथ-साथ मौखिक समझ पर भी ज़ोर दिया जाता था। शिक्षकों ने अपनी रणनीति ख़ुद बनाई *(प्रकाश कान्त)*। कई शिक्षकों ने अपने विद्यालय के सन्दर्भ में छोटे प्रोजेक्ट तैयार किए या इन विचारों को बढ़ाया *(शोभा बाजपेयी)*।

मूल्यांकन प्रक्रिया में परिवर्तन, कार्यक्रम में अन्तर्निहित था और यह निर्माणाधीन पाठ्यपुस्तकों के परिप्रेक्ष्य का एक हिस्सा था। खुली किताब परीक्षा के लिए एक प्रारूप पर काम किया गया। समय के साथ पाठ में दिए गए अभ्यासों को अपेक्षाओं के सन्तुलन के लिए जाँचा गया। स्रोत व्यक्तियों द्वारा की गई समीक्षा से यह सुझाव सामने आया कि कौशल विकास के लिए हमारे द्वारा निर्धारित अभ्यास की तुलना में अधिक अभ्यास की ज़रूरत थी और कहानियों से वैचारिक मुद्दों को निकालने के लिए बच्चों को अधिक मदद की आवश्यकता थी। कई बार हमें शिक्षकों के विवेचन को सही करना पड़ता था जो तर्क की अपेक्षित दिशा से बिल्कुल भिन्न होते थे। इसलिए यह पाठ्यपुस्तक विकास परियोजना नहीं थी, बल्कि सामाजिक विज्ञान के लिए एक ऐसा कार्यक्रम था जहाँ पाठ्यपुस्तकों, शिक्षक संवाद और मूल्यांकन पर एक साथ विचार किया गया था।

अधिकांश राज्यों में जहाँ हमने पाठ्यपुस्तकों पर काम किया, वहाँ जब तक हम एक कक्षा के लिए अपना काम पूरा करते तब तक सरकार ही बदल जाती। कई बार नौकरशाही स्तर पर होने वाले बदलाव पाठ्यक्रम सुधार की इस प्रक्रिया को रोकते या बदल देते। यदि दिशा में कोई सचेत परिवर्तन न भी हो और पाठ्यपुस्तकों का वास्तव में उपयोग किया जा रहा हो फिर भी शिक्षक प्रशिक्षण या परीक्षा में परिवर्तन की बात पर ध्यान नहीं दिया जाता। यह प्राथमिकता का क्षेत्र नहीं है। हमें अकसर बताया जाता है कि प्रक्रिया के सम्बन्ध में हमारी 'सहायता' ख़त्म हो गई है। अन्य बातों के लिए एससीईआरटी अपने दम पर प्रबन्धन करेगा। इस प्रकार, सुधार मात्र टुकड़ों में देखा जाता है और उत्साह जल्द ही समाप्त हो जाता है। चूँकि यह स्थिति अकसर सामने आई है इसलिए यह स्पष्ट है कि प्रणालीगत सुधार प्रमुख मुद्दा नहीं है। यह केवल पाठ्यपुस्तक के विकास तक सीमित है।

ऐसे में आगे कैसे बढ़ा जाए? एक तरीक़ा यह हो सकता है कि आप प्रक्रिया को उलट दें। पाठ्यक्रम संशोधन प्रक्रिया के अगले दौर में पाठ्यपुस्तक विकास टीमों के साथ पहला जनादेश, चाहे वह एनसीईआरटी हो या एससीईआरटी, यह होना चाहिए कि विभिन्न स्तरों पर मौजूदा पाठ्यपुस्तकों के मूल्यांकन के प्रारूप को बदला जाए। इन प्रणालियों को व्यापक शिक्षक संवाद के साथ विकसित किया जाए और एक शैक्षिक वर्ष के लिए सभी विद्यालयों में लागू किया जाए और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि ऐसा नई पाठ्यपुस्तकों को प्रणाली में लाने से पहले किया जाए। इसलिए मूल्यांकन के स्वरूप में बदलाव पर ध्यान देना और उसे प्राथमिकता देना

पहला चरण होगा और पाठ्यपुस्तक दूसरा।

शिक्षक, विद्यार्थी, विद्यालय और माता-पिता घनिष्ठ रूप से शामिल हों। बातचीत जीवन्त और सहभागितापूर्ण हो। शैक्षिक निकायों और पाठ्यपुस्तक विकास टीमों के सामने यह एक चुनौती है। उन्हें शैक्षिक तंत्र को एक ऐसे विकल्प का विकास करने में मदद करनी होगी जिसे बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया जा सके। यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि यह उस संरचना की आधारशिला है जिसे हमने बनाया है। परीक्षा का स्वरूप किसी भी नए प्रयोग को टिकने नहीं देता और इसलिए हमारी संस्कृति के भीतर यथास्थिति बनी रहती है। एक सहयोगी ने टिप्पणी की, "क्या आप यह सुझाव नहीं दे रहे हैं कि एक छोटी इकाई, एक बड़ी और महत्त्वपूर्ण इकाई को नियंत्रित करे यानी छुट-भैयों का राज हो?" नहीं, यह आधारशिला मेहराब को सम्हाले हुए है, और इसके माध्यम से सम्पूर्ण इमारत को।

हमें बातचीत के ज़रिए इस मामले को सुलझाना है और आगे बढ़ना है। तब पाठ्यपुस्तकें कुछ हद तक स्वीकृत नए मानदण्ड की दिशा में काम करेंगी।

References

Batra, Poonam Social Science Learning in Schools:Perspective and Challenges, New Delhi, Sage, 2010

Samajik Adhyan Shikshan: Ek Prayog, Eklavya, 1994

Srinivasan, M V:Reforming social science curriculum in India, Issues and Challenges, EPW, October 17, 2015

Bajpai, Shobha: Living Democracy, Teacher Plus, May-June, 2018

Kant, Prakash: Samajik Adhyan Navachar:Bachon ke sath mane bhi sekha, Eklavya,(to be published)

Subramaniam, C N: Pursuing the Elusive Goal of Systemic Change in School Education, Mimeo, Institute of Advanced Studies, Shimla, 2019

अरविन्द सरदाना एकलव्य में सामाजिक विज्ञान टीम के सदस्य रहे हैं। वे एनसीईआरटी में पाठ्यचर्या की टीम प्रक्रियाओं और राज्य सरकार की कई अन्य पहलों के साथ निकटता से जुड़े रहे हैं। उनसे arvind.sardana@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** ज्योति चौरड़िया

लोकतंत्र को आगे बढ़ाने में पाठ्यपुस्तकों की भूमिका

हृदय कान्त दीवान

परिचय

पिछली कुछ सदियों में लोकतंत्र के विचार ने मानव समाजों पर चर्चा को व्यवस्थित आकार दिया। यह ऐसा प्रमुख स्तम्भ है जिस पर समाज के निर्माण को सक्षम बनाने का प्रयास किया जाता है। किसी समाज में लोकतंत्र कैसे पहचाना जा सकता है, इस पर विचार करने के कई तरीक़े हैं, लेकिन कुछ ऐसी विलक्षण विशेषताएँ हैं जिन्हें लोकतंत्र के विचार के लिए महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है। भारतीय संविधान की उद्देशिका में ये विशेषताएँ इस प्रकार बताई गई हैं :

क. प्रतिष्ठा और अवसर की समानता। इसका तात्पर्य समाज के कामकाज के सभी पहलुओं में भागीदारी की समानता से है।

ख. विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता। यह वाक्य सर्वव्यापी है और इसमें केवल वही शामिल नहीं है जिसे आमतौर पर धर्म और उसके अभ्यास के रूप में जाना जाता है। इन दोनों को एक साथ लेने में अन्तर्निहित है देश को बनाने वाले लोगों के समुदाय का हिस्सा होना, पर साथ ही अपने विचारों और विचारों को बनाए रखने की स्वतंत्रता।

ग. तीसरी विशेषता है सभी को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय।

घ. और अन्तिम है बन्धुता, राष्ट्र का गठन करने वाले नागरिकों के मध्य एकता की भावना।

अम्बेडकर, जिनका संविधान के लेखन की प्रक्रिया में प्रमुख स्थान था, का यह मानना था कि बन्धुता लोकतांत्रिक समाज के निर्माण के कार्य का केन्द्रबिन्दु है। बन्धुता या भाईचारे में ठोस बढ़ोतरी के बिना अन्य तीन अप्राप्य ही रहेंगे।[1] इसलिए लोकतांत्रिक नागरिक को, समानता और न्याय में विश्वास से उत्पन्न होने वाले अपने दृष्टिकोण और विचार के साथ दूसरों के अस्तित्व का सम्मान करने में सक्षम होना चाहिए। ऐसा करने से वह इस बात का विश्लेषण करने और उसे पहचानने में सक्षम होगा कि किसी स्थिति विशेष में क्या न्यायपूर्ण है और इस प्रकार वह राष्ट्र के लिए विकल्प बनाने में योगदान दे पाएगा। इसलिए, जानकारी का सार ग्रहण करने और उसका मोल पहचानने के लिए उसमें, समानुभूति महसूस करने और देश की आबादी के भीतर मौजूद विविधता की सराहना करने की क्षमता होनी चाहिए। हम शायद इस सूची में कुछ बातें और जोड़ सकते हैं या इसे कई तरीक़ों से पुनर्परिभाषित कर सकते हैं लेकिन ये एक लोकतांत्रिक समुदाय के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है। इस लोकतांत्रिक समुदाय की चुनौतियों के लिए प्रतिक्रिया कैसे करें, इस बारे में विकल्प मुश्किल हैं, लेकिन इन सभी को इस ढाँचे के भीतर होना चाहिए।

भारतीय स्कूल, पाठ्यपुस्तकें और लोकतांत्रिक नागरिकता

भारतीय समाज और शिक्षा व लोकतंत्र के बीच के पारस्परिक प्रभाव पर विचार करते हुए हम उक्त चार बिन्दुओं को अपने दिमाग़ में रखेंगे, विशेष रूप से *बन्धुता* के पहलू को। मुख्य प्रश्न यह है कि सभी पृष्ठभूमियों और स्थितियों से आने वाले बच्चों को सहर्ष स्वीकार करने और समावेशित करने के लिए स्कूल के कार्यक्रम और पाठ्यपुस्तक कितनी सावधानी और रचनात्मक तरीक़े से बन्धुता के प्रश्न को सम्बोधित करते हैं। क्या वे गरिमा और उद्देश्य की भावना के साथ अपना प्रतिनिधित्व कर सकते हैं? क्या स्कूल के कार्यक्रम विद्यार्थियों को ऐसा एक उद्देश्य और एक सपना दे पाते हैं जिस पर वे अपने जीवन का निर्माण कर सकें?

प्रतिष्ठा और अवसर की समानता के मुद्दे को लेकर भी इसी तरह की चिन्ता है। क्या स्कूल बच्चों को समत्व महसूस करवा सकता है और किसी तरह उनके बीच समता लाने में मदद कर सकता है? क्या वह प्रतिष्ठा की असमानताओं को बदल सकता है और उन्हें समान स्तर पर ला सकता है? क्या स्कूल और पाठ्यपुस्तकों में विभिन्न पृष्ठभूमि के बच्चों को साथ मिलाने की सम्भावना है, और क्या वे उन समूहों के लिए उत्प्रेरक बन सकते हैं जो समान होने की भावना विकसित करें और उसी प्रकार से कार्य करने में सक्षम हों?

सार्वभौमिक शिक्षा और सम्भावनाओं के बारे में प्रारम्भिक अत्युत्साह पिछले पचास वर्षों में कम हो गया है और इस बारे में काफ़ी विश्वासोत्पादक ढंग से तर्क दिए गए हैं एवं अनुभवजन्य रूप से यह दिखाया गया है कि स्कूल के अनुभव, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें : ये सभी पहले जैसी ही सामाजिक रचना को पुन: पेश करती हैं। वास्तव में स्कूल इसे स्थापित करता है और इसे मूर्त रूप देता है। स्कूल आय, प्रतिष्ठा और भूमिका के मौजूदा अन्तराल को कम करने के साथ-साथ समुदायों के बीच सम्प्रेषण के सेतुओं का निर्माण करने के अवसर प्रदान कर सकता है, यह बात शैक्षिक प्रसार के प्रारम्भिक वर्षों में नज़र आई थी, लेकिन बाद में विभिन्न प्रकार के स्कूलों में विभिन्न पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों के व्यवस्थित पृथक्करण द्वारा धीरे-धीरे स्कूल की प्रकृति सामने आने लगी। यहाँ तक कि इन स्कूलों में पाठ्यचर्या सम्बन्धी अपेक्षाओं और शिक्षकों के प्रयासों में भी बच्चों की पृष्ठभूमि के बीच व्यापक अन्तर के बारे में सजगता दिखाई देने लगी और वस्तुतः निचले स्तर वाले लोगों के लिए कोई उम्मीद नहीं बची। समुदाय के निचले स्तर वाले कुछ ऐसे लोग पहले भी थे और अब भी हैं, जो अगले स्तर पर पहुँच जाते हैं और अपनी वंचित पृष्ठभूमि तक सीमित रहने से बच जाते हैं। लेकिन ये दुर्लभ अपवाद हैं और भले ही उन्हें प्रणाली में सम्भावनाओं को सही ठहराने वाले मॉडल के रूप में दिखाया जाता है, लेकिन वे वास्तव में स्कूल और उसके कार्यक्रम की सामान्य वास्तविकता के लिए केवल कुछ निचले गिने-चुने उदाहरण मात्र हैं।

शिक्षा, पाठ्यपुस्तकें और समावेशन

कहने को हमारी शिक्षा प्रणाली प्रतिभा को पहचानती है पर पूर्ण रूप से नहीं और विषमता के साथ। क्योंकि वह सभी को ऊपर उठने के समान अवसर नहीं देती, और इसका उद्देश्य औपचारिक और अनौपचारिक दोनों तरह के उत्तरदायी और विभेदित कार्यबल का पुनरुत्पादन करना है। इसमें समान अवसर देने की बात है लेकिन वास्तव में विभिन्न पृष्ठभूमियों के बच्चे जिस प्रकार के स्कूलों में जाते हैं और उनकी जो प्रकृति है, जिस तरह की सामग्री उन्हें प्रदान की जाती है, जिस तरह का व्यवहार उनके साथ होता है और जिस तरीक़े से स्कूल उनके माता-पिता और समुदाय के साथ व्यवहार करते हैं – ये सारी बातें अवसरों को बहुत असमान बनाती हैं। स्कूल वंचित पृष्ठभूमि के बच्चों की भाषा और संस्कृति को तिरस्कार और अपमान की नज़र से देखते हैं, उनकी हँसी उड़ाते हैं।

स्कूल के कार्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों का उद्देश्य बच्चों में व्यवस्था के प्रति एक खौफ़ की भावना पैदा करने की कोशिश पर केन्द्रित है जो आधिपत्यपूर्ण मूल्य प्रणाली को निर्विवाद स्वीकृति प्रदान करती हैं। ये बच्चों को ऐसे व्यक्तियों में विकसित करने का प्रयास करती हैं जो लिंग, जाति और वर्ग की अपेक्षित भूमिकाओं में सही बैठते हों। जैसा कि उल्लेख किया गया है, बेशक, कुछ व्यक्तियों को बेहतर आर्थिक और पेशेवर अवसरों के साथ आगे बढ़ने के अवसर मिलते हैं, लेकिन सामाजिक समूहों में कहीं भी अवसरों की कोई बराबरी नज़र नहीं आती है। इस प्रकार शिक्षा काफ़ी हद तक असमानता को बरक़रार रखती है और उसे वैध बनाती है और इसके कारण कुछ विद्रोहियों और अतिवादियों का जन्म होता है।

और हम देखते हैं कि यही वह चीज़ है जिस पर असमानता और वर्चस्वी स्थिरता के मज़बूत समर्थक उग्र रूप से आक्रमण करते हैं। पिछले दशकों में विश्वविद्यालयों और पाठ्यपुस्तकों पर नियमित रूप से हमले हो रहे हैं; समाज में अब ये हमले और तेज़ एवं अधिक हिंसक होते जा रहे हैं और समाज को भय, चिन्ता व आत्म-केन्द्रितता से विदीर्ण कर रहे

हैं; और इन सबके पीछे यही इच्छा है कि बहिष्करण के द्वारा अधिक-से-अधिक लोगों को *अन्य* के रूप में घोषित कर दिया जाए।

पाठ्यचर्या, पाठ्यपुस्तकें और राष्ट्र

पाठ्यचर्या और पाठ्यपुस्तकें, भी राष्ट्र की अवधारणा के इस घातक प्रहार से प्रभावित हैं, जिसमें *यहाँ रहने वाले विविध लोगों* और *उनके अभ्यासों* को स्वीकार नहीं किया गया है। हाल के दिनों में सीमाओं पर केन्द्रित देशभक्ति पर अतिरिक्त ज़ोर दिया जा रहा है जिसमें अन्य देशों सहित दूसरों पर हावी होने में श्रेष्ठता और गर्व की भावना झलकती है। यह सब राष्ट्र से जुड़े होने का एहसास देता है, उन प्रतिबद्धताओं को सुनिश्चित किए बिना जो संविधान और लोकतांत्रिक नागरिकता द्वारा सुझाई गई हैं, जो संवेदनशीलता के अनुकूल हैं और इस प्रकार अन्वेषण, मुक्त अभिव्यक्ति और विकल्प चुनने के अवसर कम हुए हैं। राज्य के कामकाज की सूक्ष्म समीक्षा सम्बन्धी सभी विचार; बातचीत में लोकतंत्र के विपरीत व्यक्तिगत अनुभवों को सामने लाना – फिर चाहे वह पाठ्यचर्या में हो, पाठ्यपुस्तकों में हो, कक्षाओं में हो या परिसरों में हो – देशद्रोह के कृत्यों के रूप में माना जाने लगा है। स्कूल में आने वाले बच्चों की सामाजिक वास्तविकताओं और विविध संस्कृतियों के प्रतिबिम्बों को स्वच्छ (sanitised) किया जाता है, और अधिक-से-अधिक मध्यम वर्गीय उदारवाद के ब्रश से रंगकर उन्हें कड़वे सच से वंचित कर दिया जाता है। लेकिन इससे भी अधिक जिस चीज़ के दिखने की सम्भावना है वह है उच्च वर्गों के स्वीकार्य और उचित व्यवहार के वर्चस्वी और प्राधान्य भावना का अशिष्ट प्रदर्शन। यहाँ तक कि जिन चित्रों में बच्चों, घर, परिवार, उन्हें उपलब्ध संसाधन, उनकी पोशाक, वे क्या खेल रहे हैं या कर रहे हैं आदि दिखाए जाते हैं, वे भी अमीर, शक्तिशाली और अभिजात वर्ग को ही प्रतिबिम्बित करते हैं। पुस्तकों में उनके आचार-विचार, उनके जीवन के तरीक़ों, विश्वासों और अनुभवों को दिखाया जाता है और बहुसंख्यकों के जीवन के अनुभवों और विकल्पों को छोड़ दिया जाता है। उनके जीवन और जीने के तरीक़े और उनके रीति-रिवाज एक अपरिचित जीवन शैली के रूप में दिखाई देते हैं जो मुख्यधारा के स्कूलों के वांछित लक्ष्य से बाहर हैं और अकसर यह घृणित, अज्ञानी और परिहार्य के रूप में परिलक्षित होता है। स्कूल की पाठ्यचर्या और पाठ्यपुस्तकें शिक्षा को संवेदनाओं के विकास के रूप में स्वीकार करती हैं जो यथास्थिति को मज़बूत करने में सबसे प्रभावी हैं।

स्कूल, पाठ्यपुस्तकें और संस्कृति

बेहतर संस्कृति और इससे जुड़ी एक श्रेष्ठ भाषा के बारे में अनवरत बहस करना यथास्थिति क़ायम रखने का एक महत्त्वपूर्ण तरीक़ा है। कक्षा में बच्चों की भाषाओं को इस डर से अनुमति नहीं दी जाती है कि वे श्रेष्ठ भाषा को प्रदूषित करेंगे। बच्चों की भाषाओं और संस्कृति को स्थान देने और प्रमुख भाषा के साथ इसके मिश्रण की सम्भावना होने के डर के कारण, शिक्षित और सक्षम होने के लिए एकभाषीयता के गलत सिद्धान्त पर बनाए गए तंत्र को उचित माने जाने की माँग की जाती है। वर्तनी, उच्चारण और बेहतर लिखावट पर अत्यधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है। एक ऐसे कार्य तंत्र में कुशल श्रमिकों के लिए इन सभी चीज़ों की आवश्यकता होती है जहाँ विचारों का विकास और निर्णय और विकल्प उन लोगों द्वारा किए जाएँगे जिनके पास शायद ऐसा करने का कौशल नहीं है। अनुलेखन करने, ग्राहकों के कॉल का जवाब देने और ऐसे ही कुछ अन्य कार्यों के लिए बड़ी संख्या में लोगों की आवश्यकता होती है जिसके लिए पुनरावृत्ति और ध्यान केन्द्रित नियम का अनुसरण करने की आवश्यकता है। फिर भी शिक्षक (शायद वे ग़लत तरीक़े से विश्वास करते आए हैं या शायद इसलिए कि यह उनकी वर्तमान पहचान का एक हिस्सा है) कक्षाओं को इस तरह से संचालित करते हैं कि विद्यार्थियों को विचारहीन दोहराव, नक़ल और उनकी संस्कृति, पहचान और भाषा के सभी पहलुओं के द्वारा उत्पीड़ित किया जाता है। स्कूल के अनुसार किसी भी बच्चे के लिए विकास का एकमात्र सही तरीक़ा यही है कि वह अपने चारों ओर की वास्तविकता से बचे और व्यक्तिगत मुक्ति के लिए अभिजात वर्ग के तरीक़ों और आचार-विचार की नक़ल करे।

नई तालीम एक विकल्प?

नई तालीम ने शिक्षा की एक वैकल्पिक परिभाषा बनाने के कुछ अप्रभावी प्रयास किए और यह निष्कर्ष निकाला कि पाठ्यपुस्तक को उस परिवेश (सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक) के साथ जोड़ना चाहिए जिसमें बच्चा बड़ा होता है और शिक्षक के साथ उसका निर्माण करना चाहिए। बाद के निरूपणों के बावजूद, नई तालीम के शुरुआती सिद्धान्तों में, बच्चे की भाषा और सम्प्रेषण की एक सामान्य भाषा का महत्त्व एक अनिवार्य तत्व था। लेकिन दुर्भाग्य से नई तालीम और सम्बद्ध विकास के सिद्धान्त आधुनिकता की आवश्यकता और राजनीतिक व आर्थिक स्थिति में बदलाव को पर्याप्त रूप से सम्बोधित नहीं कर सके। उनका विचार था कि सभी बच्चे एक साथ मिलकर विभिन्न प्रकार के हस्तकार्य अपने हाथों से करते हैं। उन्हें अपने आस-पास के परिवेश और उन मुद्दों के माध्यम से सीखना चाहिए जो उनके और उनके समुदाय के लिए प्रासंगिक हैं। समुदाय स्कूल का नेतृत्व करता है और स्कूल को बच्चे के आर्थिक, सामाजिक और भाषायी सन्दर्भ में रखा जाता है। यह सब बच्चों और समुदायों को आपस में घुलने-मिलने में मदद करेगा और शिक्षार्थियों को सार्थक रूप से अर्थव्यवस्था से जोड़ देगा, और बच्चे श्रम के सभी रूपों, अपनी भाषा, संस्कृति और अपने सम्पूर्ण अस्तित्व का सम्मान करते हुए बड़े होंगे। वे अपनी जड़ों से जुड़े रहेंगे और मृगतृष्णाओं का पीछा करते हुए ख़ुद को खो नहीं बैठेंगे। ये शायद काफ़ी महत्त्वपूर्ण पहलू हैं और अगर इन्हें भली-भाँति समाहित करना सम्भव होता तो वे न्याय और अवसर की ऐसी अवधारणा को जन्म दे सकते थे जो अधिक न्यायसंगत है।

नई तालीम के विचार ने साक्षर होने और व्यंजनापूर्ण ढंग से शिक्षित कहे जाने के बीच के अन्तर की समस्या को भी चिह्नित किया। उन्होंने चेतावनी दी कि जो शिक्षा स्कूलों ने प्रदान की, वह सत्ता और धन के लालच, शोषण की इच्छा और बाक़ी लोगों से श्रेष्ठ होने की भावना की ओर ले गई। इसने समावेशन, संवेदना, साझेदारी, सहयोग और समानता की भावना को आत्मसात करने या विकसित करने में मदद नहीं की। इसने विद्यार्थियों को नहीं बदला और न ही उनमें दुनिया को बदलने की चाह पैदा की। बल्कि इसने उन्हें अधिक उपभोक्तावादी इच्छाओं के सम्पर्क में लाने, अपने लिए अधिक-से-अधिक लाभ प्राप्त करने और प्रतिष्ठित स्थानों पर पहुँचने के लिए दूसरों को पीछे धकेलने में सक्षम बनाया।

कुछ लोग यह बहस भी करते हैं कि शिक्षा समानता, न्याय, मुक्ति और स्वतंत्रता को बढ़ावा देने के आग्रह का विकास नहीं करती है। भले ही समान अवसर की आवश्यकता, विचारों की अभिव्यक्ति के लिए अवसर, भावनाओं, धार्मिक सोच और न्याय के लिए तर्कसंगत कारण दिए गए हैं और विद्यार्थी उनके बारे में बहस करते हैं, उन पर चर्चा करते हैं और उनके बारे में धाराप्रवाह लिखते हैं, लेकिन उनके कार्य-कलापों में ये बातें प्रतिबिम्बित नहीं होतीं। उनके पास जो ज्ञान है, वह दुनिया में बदलाव लाने की इच्छा में तब्दील नहीं होता है। यह उन्हें अवसर की समानता, न्याय एवं अभिव्यक्ति और प्रार्थना की स्वतंत्रता के लिए काम करने के लिए प्रोत्साहित नहीं करता है। इससे भाईचारे का भाव भी नहीं बढ़ता।

इसलिए शिक्षा के सामने यह चुनौती है कि वह ऐसी सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली और पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करे जो भाईचारे की भावना और समावेशन की भावना को विकसित करने का कठोर प्रयास करने में सक्षम हों। वे अवसर की समानता और न्याय, मुक्ति और स्वतंत्रता, विचारों की अभिव्यक्ति और प्रार्थना के सामान्य रूपों को भी किसी-न-किसी प्रकार से दर्शा सकते हैं।

क्या शिक्षा बदलाव ला सकती है?

भारत और दुनिया में पिछले पचास वर्षों से यही कोशिश की जा रही है कि सभी को शिक्षित किया जाए और फिर यह सुनिश्चित करने का दबाव भी है कि यह कार्य गुणवत्ता के साथ किया जाए। जैसा कि एन्योन (अन्य विद्वानों के कार्यों से उद्धृत करते हुए) इंगित करते हैं, विभिन्न देशों में समान अवसर की दिशा में शिक्षा और आन्दोलन की प्रगति और शिक्षा प्रणालियों और उनकी प्रक्रियाओं के संचालन की प्रकृति के विश्लेषण से पता चलता है

कि इन प्रणालियों और प्रक्रियाओं का नेतृत्व और लोगों की तैनाती इस तरीक़े से की जाती है कि उनके लिए यथास्थिति को बदलना असम्भव है। उन्होंने और कई अन्य लोगों ने तर्क दिया है कि हमें यह समझना होगा कि हम जो भी करते हैं, उसका प्रभाव सीमित ही हो सकता है। शिक्षा से कहीं अधिक प्रभाव परिवार, आस-पास के समाज और आर्थिक आवश्यकताओं से पड़ता है। अगर बच्चों में समावेशन और अवसर की समानता की भावना विकसित करनी है तो सामाजिक और राजनीतिक व्यवहार में बदलाव की आवश्यकता है।

बच्चे स्कूल में इतने कम समय के लिए रहते हैं कि पाठ्यपुस्तकों के एक सेट के माध्यम से समानता को दर्शाना आसान नहीं है, वह भी जब अधिकतर सामाजिक प्रक्रियाएँ, रीति-रिवाज और अधिकतर उपलब्ध साहित्य संकलन, मुख्य रूप से स्वयं के लिए श्रेष्ठता और बाक़ी लोगों के लिए तिरस्कार की भावना को प्रोत्साहित करते हैं। अभिव्यक्ति और धार्मिक अभ्यास की स्वतंत्रता और स्वाधीनता के लिए समानुभूति तथा विनम्रता की आवश्यकता होती है और साथ ही यह भी आवश्यक है कि बच्चों को सुना जाए और उन्हें अपनी सोच और विचारों का पता लगाने के लिए अवसर प्रदान किए जाएँ। उन्हें एक ऐसा स्थान चाहिए जहाँ वे अपने मन की बात कह सकें और सीखने और सोचने के लिए प्रोत्साहन प्राप्त कर सकें। ग़लत होने पर भी उन्हें इस बात के लिए कारण दिए जाने चाहिए कि वे जो सोचते हैं उसे वे क्यों बदलें। केवल निष्पक्ष बातचीत के माध्यम से ही वे अन्य विचारों के महत्त्व को सीख सकेंगे। यह केवल तब हो सकता है जब उनको, उनके विचारों और कल्पना-शक्ति को गम्भीरता से लिया जाए, उनमें दिलचस्पी दिखाई जाए और उन पर तर्कसंगत बातचीत और धैर्य के साथ काम किया जाए, तभी वे इस तरह के आदान-प्रदान के उद्देश्य को समझ पाएँगे। स्कूल, पाठ्यपुस्तकें और आस-पास का परिवेश बचपन को जिस तरह से प्रतिबिम्बित करता है और उसके साथ पेश आता है, उसका पुनः परीक्षण करना आवश्यक है। बच्चों में दूसरों के लिए सम्मान और सरोकार की भावना का विकास तब तक नहीं हो सकता है जब तक वे स्वयं सम्मानित महसूस नहीं करते, दूसरों को सम्मानित होते हुए नहीं देखते और यह नहीं देखते कि दूसरों का ख़्याल रखा जा रहा है।

वर्तमान पाठ्यपुस्तकें और चुनौतियाँ

भारत में पाठ्यपुस्तकें हमेशा से आधिपत्य और विषम रही हैं, जिनमें जीने का एक वांछनीय और आकांक्षापूर्ण अभिजात तरीक़ा प्रतिबिम्बित होता है। वे अपनी विषय-सामग्री से अधिकांश बच्चों को गूढ़ और कभी-कभी काफ़ी भद्दे तरीक़ों से बहिष्कृत कर देती हैं। मैं केवल कुछ सामान्य उदाहरण दूँगा :

* *वह ग़रीब था पर ईमानदार था।*

इसी तरह - *आदिवासी जंगल में रहते हैं और कन्द-मूल खाते हैं।*

या *लड़की होते हुए भी वह लड़कों के सब खेल खेलती थी।*

या *लड़की होते हुए भी बहादुर थी।*

दीवाली भारत का त्यौहार है और ईद हमारे मुसलमान भाई मनाते हैं।

इसके अलावा राजाओं और उनकी लड़ाइयों की कहानियाँ और उनके साहस से परिपूर्ण मिथक व कथाएँ इन पुस्तकों में बिखरी हुई हैं, जिनमें इस प्रकार के संदेश सूक्ष्मता से छिपे हुए हैं कि युद्ध में हारने पर उन्हें नाहक कितने कष्टों से गुज़रना पड़ा। कभी-कभी ऐसा वर्णन किया जाता है कि वे इतने दुर्भाग्यशाली थे कि उनके पास खाने के लिए केवल सूखी रोटी हुआ करती थी। एक ऐसे देश में यह सब कहना निहायत असमता वाली बात लगती है जहाँ स्कूलों में मध्याह्न भोजन बच्चों का जीवन बचाने और अति कुपोषण को रोकने का एक साधन है।

इसके अलावा सामान्य रूप से पाठ्यपुस्तकें अमीर और शक्तिशाली लोगों के प्रति बहुत मेहरबान होती हैं और उन्हें आमतौर पर अच्छे, दयालु और उदार लोगों के रूप में चित्रित किया जाता है, ग़रीबी व असमानता, बहुसंख्यकों पर अमीरों द्वारा किए गए अन्याय, आतंक और शोषण पर चर्चा करना पसन्द नहीं किया जाता। पाठ्यपुस्तक जातिगत भेदभाव के वास्तविक उदाहरणों या उन तरीक़ों के

बारे में बात नहीं कर सकती हैं जिनमें लोगों और संसाधनों का शोषण किया जा रहा है। वे ग़रीबी और लोगों के अभाव या अपनी स्थिति में सुधार के लिए उनके संघर्ष को नहीं दर्शाती हैं, केवल राज्य के अपने एजेंडा को आगे बढ़ाने के लिए संदेश देने का साधन हैं। सत्ता बदलने पर जब पाठ्यपुस्तकों पर मतभिन्नता होती है तो उनमें किए जाने वाले परिवर्तन संस्कृति और इतिहास के कुछ ऊपरी तत्वों तक सीमित रहते हैं। ज्ञान का चयन और इसकी प्रस्तुति के तरीक़े सहित बाक़ी सारी जानकारी अपरिवर्तित ही रहती है। ऐसे विकल्प का निर्माण करने का कोई प्रयास नहीं किया जाता जो किसी-न-किसी तरह से समुदाय के ज्ञान का उपयोग करता हो, यहाँ तक कि उसकी सत्यता की जाँच और परीक्षण करने के लिए भी नहीं। लोकतंत्र के कामकाज में अधिक-से-अधिक भागीदारी और सभी पृष्ठभूमि के बच्चों की समावेशी भागीदारी की दिशा में प्रयास करने की सम्भावना गौण और धुँधली पड़ जाती है।

अधिकांश बच्चों की वास्तविकताओं के बारे में किसी भी प्रकार का कोई सार्थक प्रतिनिधित्व न होने के कारण पाठ्यपुस्तकों और स्कूलों के पास ग़ैर-कुलीन बच्चों को अनुकरणीय व्यक्ति (रोल मॉडल) के रूप में दिखाने या उन्हें अपने या अपने समुदाय में पहचान और गौरव की भावना का निर्माण करने में मदद करने का कोई तरीक़ा नहीं है। उन बच्चों के मन में आशा और उद्देश्य की किसी भी भावना का निर्माण नहीं करतीं और न ही उन्हें अपने जीवन के संकीर्ण दायरे के बाहर की भूमिकाओं और सम्भावनाओं की कल्पना करने और सपने देखने में मदद करती हैं। और यही नहीं पाठ्यपुस्तकों को एक़दम सही, राजनीतिक रूप से अनुकूल और अप्रभावी होना चाहिए या दूसरे शब्दों में कहें तो उन्हें यथास्थिति बनाए रखने में सहायता करनी चाहिए। वे न तो वैकल्पिक दृष्टिकोण दर्शा सकती हैं और न ही हावी होने वाले पर सवाल उठा सकती हैं। इस अर्थ में वे आलोचना और तर्क के महत्त्वपूर्ण तत्व को प्रदान करने में विफल हैं जो लोकतांत्रिक नागरिकता का आवश्यक घटक है। विषय-सामग्री का निर्माण करते समय उससे सम्बन्धित नियमावली, कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं, के विकास का प्रयास करने का परिणाम यह होता है कि वास्तविकता के किसी भी चित्रण की बहुत यंत्रवत छनाई (फ़िल्टरिंग) और छँटाई होती है। इसके साथ ही विद्यार्थियों के वास्तविक एवं जीवन्त अनुभवों के बारे में बातचीत करने की कोई भी सम्भावित आशा बची नहीं रह पाएगी।

आगे का मार्ग और पीछे देखना

ऐसा कहते हुए भी मैं इस ओर ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि पिछले चार दशकों में पाठ्यपुस्तकों को पुनः आकार देने के लिए गम्भीर प्रयास किए गए हैं। इन प्रयासों ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि इसका कुछ अंश बच्चों के जीवन में घटित अनुभव से निर्मित किया जाना चाहिए, उनमें बच्चों और शिक्षकों को उन कहानियों और कार्यों को रचने की अनुमति दी है जिनका वे अध्ययन करना चाहते हैं, समुदाय को अपने अनुभवों को साझा करने का अवसर दिया है। यह कोशिश भी की गई है कि ऐसी केस स्टडीज़ और कहानियाँ प्रस्तुत की जाएँ जो कुछ हद तक चिन्तनात्मक हों और स्थिति की वास्तविकता की हल्की आलोचना भी करती हों, चित्रों और नामों में बच्चों की विविधता को शामिल किया जाए, घर और बाहर दोनों ही जगहों पर बहुत अधिक काम करने वाली महिलाओं के प्रति संवेदनशील होने का सुविचारित प्रयास भी हुआ है, महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के आस-पास हास्य का निर्माण किया गया है, अधिक कठोरता से परीक्षण की गई ऐसी जानकारी और कार्य दिए गए हैं जिन्हें बच्चे अपने दम पर कर सकें आदि।

पर ऐसा नहीं है कि ये प्रयास केवल आगे ले जाते हैं और लोकतांत्रिक वार्तालापों के लिए अधिक समावेशन, अधिक सन्दर्भ और अधिक स्थान की ओर बढ़ते हैं। वे विभिन्न हस्तक्षेपों के माध्यम से पलटे और बदले जाते हैं। यह बात भी माननी होगी कि किताबों में इन बातों को स्थान देने के बावजूद उन्हें अकसर नज़रअन्दाज़ कर दिया जाता है या सक्रिय रूप से उनका प्रतिरोध और विरोध किया जाता है। एक लोकतांत्रिक स्कूल कार्यक्रम की चुनौती केवल उचित रूप से विषय-सामग्री का निर्माण करना नहीं है, परन्तु उससे भी अधिक

महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ऐसे शिक्षक और ऐसी प्रणाली हो जो इस परियोजना को समझे, इससे सहमत हो और इसके साथ समानुभूति रखे। यदि प्रणाली, विशेष रूप से मूल्यांकन को शामिल करने वाली प्रणाली, हावी होने वाले प्रमुख परिप्रेक्ष्य और ज्ञान को ही सही मानकर उसे महत्त्व देना चाहती है, और इस प्रक्रिया में अधिकांश बच्चों की मौजूदा संस्कृति, ज्ञान और भाषा की अनदेखी और उपहास करना चाहती है तो फिर ऐसा कोई तरीक़ा नहीं है जिसमें अत्यन्त सावधानी से बनाई गई समावेशी पाठ्यपुस्तकें भी, जो कई दृष्टिकोणों और महत्त्वपूर्ण चर्चाओं को समायोजित करने की कुछ सम्भावनाएँ दर्शाती हैं, लोकतांत्रिक कक्षाओं का निर्माण कर पाएँ।

हमें कैसी पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता है?

व्यक्तिगत मुक्ति या पलायन के एक उद्यम के रूप में शिक्षा के वर्तमान दृष्टिकोण को चुनौती देने के लिए जो चीज़ आवश्यक है वह है शिक्षा के सामूहिक और समतावादी उद्देश्य की दृष्टि से रची गई ऐसी पाठ्यपुस्तकें जो सहयोग का निर्माण करें और उसी तरीक़े से लागू भी की जाएँ। यदि शिक्षा प्रतिस्पर्धात्मक रूप से व्यवस्थित हो और उसे एक छलनी, एक दौड़ और जीवित रहने की लड़ाई के रूप में कार्य करने के लिए संरचित किया जाए ताकि उसके बाद अधिकतम संसाधनों, अधिकार, शक्ति और सुख-साधनों पर क़ब्ज़ा किया जा सके तो फिर वह कभी समावेशी, भाईचारे की भावना वाली, भगिनीवत या पारिवारिक और लोकतांत्रिक नहीं हो सकती।

पाठ्यपुस्तकों को शिक्षकों और बच्चों की इस बात में मदद करनी चाहिए कि वे समाज की बुराइयों, लालच, उपभोक्तावादी इच्छाओं, बहिष्करण, दूसरों के लिए तिरस्कार, चिन्ता और भय, अन्य समुदायों या पृष्ठभूमि के लिए तर्कहीन प्रतिक्रिया, असंयम, लैंगिक भेदभाव, हिंसा आदि की जाँच कर सकें। इनकी जाँच करने के लिए पहले इसे प्रस्तुत करके और फिर इन पर चर्चा करने की आवश्यकता है। ऐसी सभी 'बुराइयों' को समाप्त करके पाठ्यपुस्तकों को स्वीकार्य बनाने का मतलब है स्कूल को अप्रभावी बनाना। यहाँ तक कि उसे मौजूदा मामलों को चुनौती देने की सम्भावना के रूप में भी नहीं देखा जा सकता। इस प्रकार पाठ्यपुस्तकों को यथार्थवादी होना चाहिए और ध्यान से ऐसी स्थितियों को प्रस्तुत करना चाहिए जिसमें चर्चा के लिए गुंजाइश हो। उन्हें व्यावहारिक होना चाहिए ताकि वे केवल वर्तमान में सहायक राय और मान्यताओं को इस हद तक चुनौती दें कि स्कूल और शिक्षक इसे उस बिन्दु तक ले जा सकें। जैसे-जैसे समय उपयुक्त होता जाएगा वैसे-वैसे वर्तमान स्थितियों के लिए चुनौती की सीमा एवं प्रकृति और लोकतंत्र व समावेशन के विचारों पर चर्चाओं को शामिल करना अधिक-से-अधिक प्रभावी हो सकता है। चुनौती के रूप में इस बात का ख़तरा सामने है कि स्वाधीनता, स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व के लिए राजनीतिक और सामाजिक चुनौतियों के बढ़ने से कहीं यह सब पुराने रूपों की ओर वापस न चला जाए।

References

Anyon,J, (2011), Marx and Education, Routledge, New Delhi; Gandhi,MK, Towards New Education,Kumarappa Bharatan (1953), Navjivan Mudralaya, Ahmedabad

Dewan, HK and Dewan S, Socio-cultural Factors and Challenges-Poor Learning Among Socially Marginalised Children Conference, New Delhi (2016).

Henrich J. (2015). The Secret of Our Success: How Culture Is Driving Human Evolution, Domesticating Our Species, and Making Us Smarter New Jersey: Princeton University PressSadgopal A. Between question and clarity. New Delhi: Granth shilpi

NCERT (2005). National Curricular Framework. New Delhi: NCERT

NCERT (2005). Position paper on Work and Education. New Delhi: NCERT

Nirantar. (2009). Text Book Regimes - a feminist critique of nation and identity, New Delhi: Nirantar

Jain S. (2017 Rajasthan Textbooks Revised to Glorify Modi Government, The Wire.). https://thewire.in/education/rajasthan-textbooks-revised-glorify-modi-government

Shreya. (2019). BJP's major achievement in Rajasthan: Rewriting school textbooks to reflect RSS worldview, Scroll.in Sunday, February 10th 2019

Shreya. (2018). Inspired by the RSS, dictated by BJP minister: The inside story of Rajasthan's textbook revisions Scroll.in Sunday Nov 15, 2018

Kumar S.(2017). https://www.indiatoday.in/india/story/maharana-pratap-not-akbar-won-battle-of-haldighati-rajasthan-history-book-1026240- 2017-07-25, July 2017

Sadgopal A. Between question and clarity. New Delhi: Granth shilpi

Sykes M. (1987). - The Story of Nai Talim: Fifty Years of Education at Sevagram; 1937-1987. Wardha: Sevagram.

Tomasello M. (2014). A Natural History of Human Thinking. Boston: Harvard University Press

Ambedkar B.R. (1949). Constituent Assembly Debates, Vol XI, 25 Nov. 1949, p. 979, as cited in Narrrain Arvind for Mool Prashan issue 1 on Constituent assembly debates, 2017, Udaipur (available in hindi)

हृदय कान्त दीवान वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के अनुवाद पहल में कार्यरत हैं। वे एकलव्य के संस्थापक समूह के सदस्य और विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर के शैक्षिक सलाहकार रहे हैं। वे पिछले 40 वर्षों से शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार से और विभिन्न पहलुओं पर काम कर रहे हैं। विशेष रूप से वे शैक्षिक नवाचार और राज्य की शैक्षिक संरचनाओं के संशोधन के प्रयासों से जुड़े रहे हैं। उनसे hardy.dewan@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** कामिनी उपाध्याय

पर्यावरण अध्ययन पाठ्यपुस्तक : आरम्भ से अन्त तक

चन्द्रिका मुरलीधर और रोनिता शर्मा

पृष्ठभूमि

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 ने शिक्षा के प्रत्येक चरण में और समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए शैक्षिक प्रक्रिया में पर्यावरण सम्बन्धी सरोकारों को समेकित कर इस मुद्दे पर जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। एनसीएफ़ 2005 के मार्गदर्शक सिद्धान्त निम्नलिखित बातों पर ज़ोर देते हैं :

क. ज्ञान को स्कूल के बाहर के जीवन से जोड़ना,

ख. यह सुनिश्चित करना कि पढ़ाई रटन्त प्रणाली से मुक्त हो,

ग. पाठ्यचर्या का इस तरह संवर्धन करना कि वह बच्चों को चहुँमुखी विकास के अवसर मुहैया करवाए, बजाए इसके कि वह पाठ्यपुस्तक-केन्द्रित बनकर रह जाए

घ. परीक्षा को अपेक्षाकृत अधिक लचीला बनाना और कक्षा की गतिविधियों से जोड़ना,

ड. एक ऐसी अधिभावी पहचान का विकास जिसमें प्रजातांत्रिक राज्य-व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रीय चिन्ताएँ समाहित हों।

यशपाल रिपोर्ट, *शिक्षा बिना बोझ के*, में कहा गया है कि जब तक हम बच्चे के बारे में अपनी यह धारणा नहीं बदलते कि बच्चे ज्ञान के प्राप्तकर्ता हैं और परीक्षा के आधार के रूप में पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करने की परिपाटी को छोड़ नहीं देते तब तक स्कूल में सीखना एक आनन्ददायक अनुभव नहीं बन सकता।

इस सन्दर्भ में उपर्युक्त निष्कर्षों के आधार पर न केवल पाठ्यपुस्तकों की कायापलट करना आवश्यक था बल्कि शिक्षा के उद्देश्यों के अनुरूप बनाने के लिए पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक पर फिर से विचार करना भी ज़रूरी था। वर्ष 2005 में एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों का एक नया सेट लिखा गया।

पर्यावरण अध्ययन क्या है?

वर्ष 1864 में ही जॉर्ज पर्किन्स ने इस मिथक को चुनौती दी थी कि प्राकृतिक संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं और हमारे आर्थिक विकास के लिए इनका बेजा फ़ायदा उठाया जा सकता है। उसी प्रकार, 1864 में प्रकाशित अपनी पुस्तक *'मैन एंड नेचर'* में मार्श ने प्राकृतिक संसाधनों की अक्षयशीलता के विचार के बारे में अपनी चिन्ता जताई और प्रचुरता के मिथक को तोड़ा एवं सुधार की आवश्यकता को बताया।

भारत की स्कूली शिक्षा में पर्यावरण के सरोकारों की बात 1980 में की गई। इस सरोकार को पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से सम्बोधित किया गया। अपनी पुस्तक *एजुकेशन कॉन्फ्लिक्ट एंड पीस* (अध्याय-3 बिटवीन साइंस एंड साइंटिफिक टेम्पर) में कृष्ण कुमार बताते हैं कि 1960 के दशक की पाठ्यपुस्तकों में कारख़ाने का खण्ड-आरेख (block diagram) होता था जिसमें कारख़ाने को लम्बे और सक्रिय धुएँ के ढेर के साथ दिखाया जाता और शीर्षक होता – आधुनिक भारत के तीर्थ, *पिलग्रिमेजेज़ ऑफ़ मॉडर्न इण्डिया* और अब इसी आरेख पर एक संशोधित शीर्षक देखने में आता है – *प्रदूषण के स्रोत* (*सोर्सेस ऑफ़ पॉल्यूशन*)। वे आगे कहते हैं कि पर्यावरण अध्ययन की सामग्री सह-निवास या प्रकृति के साथ समायोजन के विचार को विकसित करने का प्रयास करती है, समायोजन न केवल पशुओं और पौधों के साथ बल्कि भौतिक वस्तुओं जैसे नदियों, पहाड़ों और समुद्र के साथ भी। यह विचार इस मूल्य-प्रतिमान पर आधारित है

कि सभी मानव कृत्यों की समीक्षा इस आधार पर की जानी चाहिए कि प्रकृति के सजीव और निर्जीव दोनों घटकों पर उनका प्रभाव पड़ सकता है।

इससे पहले कि हम पाठ्यपुस्तक लिखने के बारे में सोच-विचार शुरू करें, यह बात महत्त्वपूर्ण है कि पाठ्यपुस्तक के चरित्र को प्रभावित करने वाले पहलुओं पर स्पष्टता सुनिश्चित की जाए। पहली बात, लेखक को विषय की गहन समझ होनी चाहिए; दूसरी बात, पाठ्यपुस्तक का संज्ञानात्मक स्तर; और तीसरी (तथा सबसे महत्त्वपूर्ण) बात यह कि इसे बच्चे के लिए लिखा जा रहा है : इसका मतलब इसे एक मिनी-एन्साइक्लोपीडीया नहीं बना देना चाहिए।

यदि हम पहले पक्ष पर नज़र डालें तो प्रश्न उठता है कि हम पर्यावरण अध्ययन के बारे में क्या जानते हैं? ईवीएस का प्रयोग पर्यावरण-अध्ययन या पर्यावरण विज्ञान के रूप में किया जाता है (एकरूपता के लिए हम एनसीईआरटी द्वारा निर्धारित पहले शब्द का ही प्रयोग करेंगे)। जहाँ तक दूसरे और तीसरे पहलू की बात है तो उसका ध्यान विषय के लिए बनाए जाने वाले पाठ्यक्रम में रखा जाना चाहिए।

पर्यावरण अध्ययन विषय सामाजिक विज्ञान, विज्ञान और पर्यावरण शिक्षा से प्राप्त अन्तर्दृष्टि का एक सम्मिलन है। यह एक ऐसा विषय है जो प्राथमिक स्कूल में तीसरी कक्षा से शुरू किया जाता है और पाँचवीं कक्षा तक चलता है। वैसे कोशिश यह भी की जाती है कि पहली और दूसरी कक्षा में गणित और भाषा में पर्यावरण अध्ययन के तत्वों को शामिल किया जाए। इसके अलावा चूँकि अधिकांश प्राथमिक स्कूल पाठ्यचर्या में एकीकृत दृष्टिकोण पर काम किया गया है, इसलिए ईवीएस में प्रकरणों की बजाए उप-विषय या थीम प्रस्तावित की गई हैं ताकि एक सम्बद्ध और अन्तर्सम्बन्धित समझ का विकास किया जा सके। (*पर्यावरण अध्ययन, एनसीईआरटी पाठ्यक्रम*)। यहाँ जो बात सबसे महत्त्वपूर्ण है, वह यह है कि बच्चा अपने परिवेश को एक समग्र रूप में देखता है, अपने निकटतम वातावरण से घटनाओं को आत्मसात करता है और अनुभवों एवं सूचनाओं को अलग-अलग श्रेणियों में नहीं बाँटता। यदि यह दृष्टिकोण न अपनाया जाए तो पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तक में विविध विषयों के प्रकरण होंगे जो बच्चे में ज्ञान के समग्र सृजन को सम्बोधित नहीं करेंगे।

जिस तरह से ईवीएस विषय की परिकल्पना की गई है, उसे देखते हुए, इस क्षेत्र में पहचाने गए 'विशेषज्ञों' से ईवीएस पाठ्यपुस्तक के लिए सम्भावित लेखकों/योगदानकर्त्ताओं को चुनना एक चुनौती हो सकती है। अच्छा होगा कि हम सामाजिक विज्ञान, विज्ञान और पर्यावरण शिक्षा में विशेषज्ञता रखने वाले सदस्यों को साथ में लाएँ : जैसे कि वे शिक्षक जिन्होंने इस विषय को काफ़ी समय तक पढ़ाया है और वे लोग जो शिक्षणशास्त्र, लिंग अध्ययन, बाल विकास और पाठ्यक्रम अध्ययन की पृष्ठभूमि से हों (*पर्यावरण अध्ययन, एनसीईआरटी पाठ्यक्रम*)। आगे इस लेख में हम इन विशेषज्ञों को पाठ्यपुस्तक समिति (टेक्स्ट बुक कमेटी या टीसी) के नाम से सन्दर्भित करेंगे।

पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तक : आनन्दपूर्ण अधिगम का मार्ग

टीसी स्थापित होने के बाद यह आवश्यक है कि सारे सदस्य मिलकर काम करें क्योंकि इसका मुख्य उद्देश्य पहले बताए गए सभी पहलुओं को मिलाकर एक संसाधन सामग्री तैयार करना है। टीसी के प्रमुख कार्यों में से एक उन 'उप-विषयों या थीमों' पर आम सहमति तक पहुँचना है जो पाठ्यक्रम और बाद में पाठ्यपुस्तकों को संचालित करें।

उप-विषयों या थीम को अन्तिम रूप देने के बाद पाठ्यक्रम को सुस्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करने का कार्य करना होगा। वास्तव में यह पता लगाना ज़रूरी है कि क्या लेखकगण राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में वर्णित *शिक्षा के उद्देश्य* के सिद्धान्तों, पर्यावरण अध्ययन के अधिगम प्रतिफल और ईवीएस, एनसीईआरटी पाठ्यक्रम में बताए गए शिक्षा के उद्देश्यों से परिचित हैं ताकि वे उसे सन्दर्भ के रूप में लेकर कार्य करें जिससे कि पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक इन सभी के अनुरूप हों।

जब पाठ्यक्रम तय हो जाए तो लेखकों को अपनी पाठ्यपुस्तक के घटकों पर निर्णय लेना होगा : इसमें प्रतिबिम्बित होने वाला शैक्षणिक दृष्टिकोण, आकलन की रणनीतियाँ, चित्रों के प्रकार, गतिविधियाँ, बच्चे के वास्तविक जीवन के अनुभवों का समावेश और यह सुनिश्चित करना कि पाठ्यपुस्तक की सामग्री कक्षा में पर्यावरण अध्ययन सीखने को अवरुद्ध नहीं करती। कुछ अन्य घटक जिनका समावेशन भी आवश्यक है वे हैं लिंग और सामाजिक मुद्दे। सबसे प्रमुख बात यह है कि पर्यावरण अध्ययन पाठ्यपुस्तक (विशेष रूप से पाँचवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तक) को छठी कक्षा के विज्ञान और सामाजिक विज्ञान विषय के साथ इस तरह से जोड़ना होगा कि जब बच्चा छठी कक्षा में इन विषयों को पढ़े तो उसे कोई दिक़्क़त न हो।

पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तक की संरचना

पाठ्यक्रम के बन जाने पर पाठ्यपुस्तक की सामग्री के निर्माण के लिए एक मज़बूत आधार मिलता है। पाठ्यपुस्तक के जो अध्याय पाठ्यक्रम के उप-विषय में से निकलकर आते हैं, उनके बारे में अच्छी तरह से सोचा जाना चाहिए, मुख्य रूप से उस संज्ञानात्मक चरण को ध्यान में रखना चाहिए जिसे हम सम्बोधित कर रहे हैं, यानी वह पुस्तक किस कक्षा के लिए है – तीसरी, चौथी या पाँचवीं कक्षा के लिए। आमतौर पर पुस्तक का आकार अर्थात पृष्ठों की संख्या सीमित होती है। अगर लेखकों को इस बात की जानकारी हो तो अच्छा होगा लेकिन जो कुछ आवश्यक है उसे अवश्य लिखना चाहिए, उन पर पृष्ठों की संख्या को लेकर कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए।

जब अध्यायों की सामग्री तैयार की जा रही हो तो साथ में पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों के कुछ अंशों पर भी काम जारी रखना चाहिए। जैसे कि :

1. शिक्षक और माता-पिता के लिए नोट : पाठ्यपुस्तक लिखने का औचित्य, वे मार्गदर्शक सिद्धान्त जो पाठ्यपुस्तक की सामग्री को उनके साथ जोड़ते हैं, पाठ्यपुस्तक में अपनाए गए शिक्षणशास्त्रीय दृष्टिकोण, शामिल किए गए कार्यों के प्रकार आदि। शिक्षकों और अभिभावकों को पाठ्यपुस्तक का विवरण प्रदान करने के उद्देश्य से यह नोट दिया जा सकता है।
2. शिक्षक का पृष्ठ : इस पृष्ठ में किसी उप-विषय से सम्बन्धित अध्यायों की सामग्री का संक्षिप्त विवरण दिया जा सकता है जो पाठ्यपुस्तक का उपयोग करने वाले शिक्षक के लिए पाठ्यक्रम के तत्काल परिकलक (रेडी रेकनर) के रूप में कार्य करें और जिसमें प्रत्येक अध्याय के उद्देश्य और प्रमुख अवधारणाएँ शामिल हों। शिक्षक के पृष्ठ में पृष्ठों की संख्या के बारे में लेखकगण विचारपूर्वक निर्णय ले सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि पर्यावरण अध्ययन का उप-विषय वस्त्र और आश्रय स्थल है जिस पर एक पाठ लिखा गया है तो पृष्ठ में निम्नलिखित बातें बताई जा सकती हैं :

अध्याय 'अ' का उद्देश्य एक ऐसा माहौल बनाना है जिसमें बच्चे ---------- (राज्य का नाम जिसके लिए पाठ्यपुस्तक लिखी गई है) में लोगों द्वारा पहनी जाने वाली विभिन्न प्रकार की पोशाकों और उन्हें बनाने के लिए उपयोग किए जाने वाले कपड़ों के बारे में समझ सकें। इसमें बुनकरों के पारम्परिक ज्ञान और समुदाय में दर्ज़ियों के योगदान की सराहना और सम्मान करने का एक सचेत प्रयास भी किया गया है।

इस अध्याय में शामिल गतिविधियाँ इस प्रकार हैं – चित्र बनाना, वस्तुओं के चित्रों का वस्तुओं से मिलान, फ़ील्ड विज़िट (पास के दर्ज़ी की दुकान पर जाना) और प्रयोग। साझा करने और एक-दूसरे की परवाह करने सम्बन्धी कार्यों को शामिल कर बच्चे को संवेदनशील करने का प्रयास किया गया है।

इस पृष्ठ में पर्यावरण अध्ययन के उन विभिन्न कौशलों का समावेशन किया जा सकता है जिन्हें उस उप-विषय में सम्बोधित किया जा रहा है जैसे अवलोकन, चर्चा, अभिव्यक्ति, स्पष्टीकरण, वर्गीकरण, पूछताछ, विश्लेषण, प्रयोग, न्याय, समानता और सहयोग के लिए सरोकार, आदि। *(पर्यावरण अध्ययन में आकलन की स्रोत पुस्तक, कक्षा-1 से 5)*

3. शिक्षक के लिए नोट : इन्हें पूरी पाठ्यपुस्तक में रखा जा सकता है। इनका उद्देश्य किसी विशेष पृष्ठ पर चर्चा की जा रही अवधारणा को पढ़ाने में शिक्षक का मार्गदर्शन करना है। नोट की सामग्री, शिक्षक को जिस टॉपिक पर चर्चा की जा रही है उसके बारे में और अधिक पढ़ने और खोज करने के लिए प्रेरित कर सकती है।

   (पाठ्यपुस्तक में उपरोक्त तीनों का स्थान लेखक अपने विवेकानुसार निश्चित कर सकते हैं।)

4. गतिविधियों के लिए प्रतीक/चिह्न : *लिखो, सोचो, समूहों में काम करो, चलो इसे बनाते हैं*, जैसी गतिविधियों के लिए प्रतीकों/चिह्नों आदि का उपयोग करने से पुस्तकें देखने में आकर्षक लगेंगी और साथ ही उनके माध्यम से बच्चे को गतिविधियों से जुड़ने में सहायता मिलेगी।

चित्र पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तक का एक अभिन्न हिस्सा हैं। रेखाचित्रों और चित्रों को सन्तुलित रूप से शामिल करने का प्रयास किया जा सकता है। रेखाचित्र रखने से बच्चे को पेंसिल से काग़ज़ पर लिखने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा और बच्चे में कलात्मक कौशल का भी पोषण होगा। इसके अलावा, चित्रकारों को रेखाचित्रों में लिंग-प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में सन्तुलन बनाए रखने के लिए सचेत रहना होगा। उदाहरण के लिए, यदि तस्वीर किसी परिवार की है, तो यह आवश्यक नहीं है कि माँ को बच्चों को गोद में लिए हुए या उनकी देखभाल करते हुए दिखाया जाए। पिता को भी घर के कामों को करते हुए दिखाया जा सकता है। इस अवधारणा को खोलने के लिए प्रासंगिक प्रश्न शामिल किए जा सकते हैं।

पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों में जो *प्रश्न* शामिल किए जाएँ, उन प्रश्नों को अन्वेषणात्मक होना चाहिए न कि ऐसे कि जिनके जवाब हाँ या नहीं में हों। आदर्श बात तो यह होगी कि ऐसे प्रश्नों को शामिल न किया जाए जो बच्चे में रटना सीखने के कौशल को नापने का प्रयास करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि भोजन और इसके इष्टतम उपयोग और उसकी बर्बादी से बचने पर चर्चा की जा रही है तो इस तरह के प्रश्न पूछे जा सकते हैं – *किसी त्यौहार को मनाने के बाद घर पर बचे हुए भोजन का आप क्या करते हैं? आपके पड़ोसी इस बारे में क्या करते हैं? वे बचे हुए भोजन का उपयोग कैसे करते हैं?* अपने दो पड़ोसियों के पास जाकर परिवार के बड़े सदस्यों से ये सवाल पूछें। *क्या आप अपनी थाली में परोसा हुआ सारा खाना खाते हैं? यदि नहीं, तो आप उस बचे हुए भोजन का क्या करते हैं?*

पाठ्यपुस्तक की तैयारी को पूर्ण करने के लिए उन शिक्षकों का उन्मुखीकरण करना होगा जो पर्यावरण अध्ययन की नई पाठ्यपुस्तक पढ़ाने वाले हैं। ऐसा करने से शिक्षक को इस बात में सहायता मिलेगी कि वे पाठ्यपुस्तक की सामग्री को प्रभावी ढंग से शिक्षार्थियों तक ले जा सकें। इससे पाठ्यपुस्तक के लेखकों को इस सम्बन्ध में अन्तर्दृष्टि मिलेगी कि कक्षा में पुस्तकों का उपयोग किस तरह से किया जा रहा है।

आगे की ओर

पर्यावरण अध्ययन के इन मूल्यों को आगे कैसे बढ़ाया जाता है?

सामाजिक विज्ञान का आधार पत्र *नियामक सरोकारों* को सामने लाता है, अर्थात 'सामाजिक विज्ञान स्वतंत्रता, विश्वास, पारस्परिक सम्मान और विविधता के प्रति सम्मान जैसे मानवीय गुणों के लिए एक जनाधार का निर्माण करने और उसका विस्तार करने की नियामक ज़िम्मेदारी का वहन करता है। यदि इसे माना जाए तो सामाजिक विज्ञान शिक्षण का लक्ष्य बच्चे में एक आलोचनात्मक नैतिक और मानसिक ऊर्जा की स्थापना होना चाहिए जिससे वे उन सामाजिक बाध्यताओं से मुक्ति पा सकें जो इन मूल्यों को हानि पहुँचाते हैं। पर्यावरण, जाति/वर्ग असमानता और राज्य दमन जैसी समस्याओं पर अन्तर्विषयक विधि से चर्चा करके पाठ्यपुस्तकों को बच्चे की विचार प्रक्रिया और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने का प्रयास करना चाहिए।

एनसीईआरटी की इतिहास की पाठ्यपुस्तक *भारत और समकालीन विश्व I और II* में, *जीविका, अर्थव्यवस्था और समाज* का उप-विषय बच्चे को वन में रहने वालों, किसानों, पशुपालकों के जीवन के बारे में बताता है और यह समझने में मदद करता है

स्क्रोल.इन

सर्वोच्च न्यायालय ने 10 लाख से अधिक आदिवासी और वन-वासी परिवारों को बेदख़ल करने का आदेश दिया।

सर्वोच्च न्यायालय ने 16 राज्यों की वन भूमि से आदिवासियों और अन्य वन-वासियों के 10 लाख से अधिक परिवारों को बेदख़ल करने का आदेश दिया है।

शीर्ष अदालत द्वारा 13 फरवरी को वन अधिकार अधिनियम की वैधता को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर सुनवाई के बाद यह आदेश आया। याचिकाकर्ताओं ने माँग की थी कि नए क़ानून के तहत पारम्परिक वन क्षेत्रों से सम्बन्धित दावों को ख़ारिज कर दिया जाना चाहिए।

कि उनका जीवन कुछ क़ानूनों और आधुनिकीकरण के कारण किस प्रकार से प्रभावित हुआ है। यह कई अन्य पहलुओं को भी सामने लाता है जैसे *कार्य, जीवन और आराम* । उदाहरण के लिए जब विद्यार्थियों को इस बात की जानकारी होती है कि आज की दुनिया के महान शहर, लन्दन और पेरिस औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम-स्वरूप अस्तित्व में आए तो उन्हें आवास की समस्या, हाशिए के समूहों की स्थिति, स्वच्छता और यहाँ तक कि लन्दन में भूमिगत रेलवे के बारे में सोचने का अवसर मिलता है। निर्माण की प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर विनाश पर टिप्पणी करते हुए चार्ल्स डिकेंस ने *डोम्बे और सोन* में निम्नलिखित लिखा :

"मकानों को गिराया गया : सड़कों को तोड़ा गया और बन्द कर दिया गया; ज़मीन में गहरे गड्ढे और खाइयाँ खोदी गईं; चारों और धूल और मिट्टी के भारी ढेर;... अपूर्णता के लाखों आकार और पदार्थ, जिन्हें व्यापक रूप से अपने स्थानों से हटा दिया गया, उलट, पृथ्वी में दफ़न..."

शहरीकरण की प्रक्रिया और दुनिया भर में शहरों का विकास पारिस्थितिकी और पर्यावरण की क़ीमत पर हुआ। 19वीं सदी के इंग्लैंड के शहर जैसे लीड्स, मैनचेस्टर में कारख़ाने की चिमनियों से धुआँ निकलते हुए देखा जा सकता था। लोगों ने स्वच्छ हवा की माँग शुरू कर दी और इसके लिए वे क़ानून के माध्यम से नियंत्रण चाहते थे। कलकत्ता (अब कोलकाता) ने भी वायु प्रदूषण की समस्या का सामना किया और औद्योगिक धुएँ से निपटने के लिए बंगाल धुआँ नियंत्रण आयोग बना।

वन, समाज और उपनिवेशवाद अध्याय विद्यार्थियों को वनों की कटाई, वृक्षारोपण, वाणिज्यिक वानिकी के उदय, वैज्ञानिक वानिकी और औपनिवेशिक शासकों द्वारा वन अधिनियम व आपराधिक जनजाति अधिनियम की भारत और अफ़्रीका में शुरुआत के इतिहास के बारे में बताता है और इस बात पर प्रकाश डालता है कि इन क़ानूनों ने जंगल में रहने वाले लोगों के जीवन को कैसे प्रभावित किया। केन्या में, मसाई मारा की चारागाह भूमि को उपनिवेशवादियों द्वारा जंगली जानवरों के लिए संरक्षित क्षेत्र के रूप में बदल दिया गया। उदाहरण के लिए सेरेंगेटी नेशनल पार्क को मसाई चारागाह भूमि के 14,760 किमी क्षेत्र में बनाया गया था।

सामाजिक और राजनीतिक जीवन की पाठ्यपुस्तक पर्यावरण अध्ययन के कई मुद्दों को सामने लाती है और उनके विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करती है। उदाहरण के लिए – पानी। यह पानी से सम्बन्धित शक्ति समीकरण के मुद्दों को उठाती है। पानी किसे मिलता है? किसको कितना पानी मिलता है? किसको कैसी गुणवत्ता वाला पानी मिलता है? पानी कौन लाता है आदि? *'हाशियाकरण की समझ'* अध्याय का एक अंश :

"इतिहास की पाठ्यपुस्तक औपनिवेशिक राज्य द्वारा वन नीतियों को आकार देने को रेखांकित करती है और वनों की कटाई जैसे मुद्दे को उन नीतियों की अभिव्यक्ति मानती है। एक सर्वेक्षण रिपोर्ट से पता चलता है कि आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा और झारखण्ड जैसे राज्यों से विस्थापित होने वाले 79 प्रतिशत लोग आदिवासी हैं। उनकी बहुत सारी ज़मीन देश भर में बनाए गए सैकड़ों बाँधों एवं जलाशयों में डूब चुकी है। पूर्वोतर भारत में उनकी

ज़मीन लम्बे समय से सशस्त्र बलों और उनके बीच चलने वाले टकरावों से बिंधी है।"

विद्यार्थियों को वर्तमान में समकालीन भारत का एक मुद्दा दिया जाता है। यह विद्यार्थियों को संघर्ष के बारे में गम्भीर रूप से सोचने का अवसर प्रदान करता है। क्या क़ानून औपनिवेशिक अतीत से अलग हैं? अपनी मातृभूमि से आदिवासियों के निष्कासन पर सुप्रीम कोर्ट का हाल में लिया गया फ़ैसला निश्चित रूप से विद्यार्थियों को गम्भीर रूप से सोचने और एक जानकार नागरिक बनने में मदद करेगा।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तक में उठाए गए मूल्यों, सरोकारों और मुद्दों की तुलना में सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकें प्रगति को कहीं अधिक जटिल तरीके से देखती हैं।

References

National Curriculum Framework 2005
EVS NCERT Syllabus
Source Book of Assessment in EVS, Classes 1 to 5
India and the Contemporary World –I
India and the Contemporary World –II
Social and Political life- I and II
Man and Nature-George Perkins Marsh, edited by David Lowenthal
Education, Conflict and Peace-Krishna Kumar
Position Paper on Teaching of Social Sciences

चन्द्रिका मुरलीधर पिछले नौ वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ हैं और वर्तमान में स्कूल ऑफ़ कंटीन्यूइंग एजुकेशन एंड यूनिवर्सिटी रिसोर्स सेंटर, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं जहाँ वे पेशेवर विकास कार्यक्रमों में योगदान देती हैं। वे विज्ञान शिक्षा, शिक्षक क्षमता संवर्धन और पाठ्यपुस्तक लेखन के क्षेत्र में काम कर रही हैं। वे फ़ाउण्डेशन द्वारा प्रकाशित प्रकाशनों की सम्पादकीय टीम का एक अभिन्न अंग हैं। उनसे chandrika@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

रोनिता शर्मा वर्तमान में इंस्टिट्यूट ऑफ़ असेसमेंट एंड एक्रिडिटेशन, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के साथ काम कर रही हैं। वे शिक्षकों के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रम, बड़े पैमाने पर मूल्यांकन और पाठ्यपुस्तक लेखन में संलग्न हैं। उन्होंने एक दशक से भी अधिक प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान पढ़ाया है। उनसे ronita.sharma@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** ज्योति चौरड़िया

पाठ्यपुस्तकों को स्कूल तक ले जाना

पार्थसारथी मिश्रा

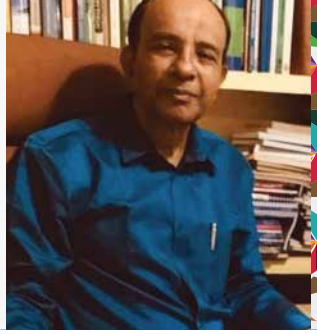

सन 2016 की बात है। गर्मी का मौसम था और दोपहर का समय। हम भारत के एक राज्य की राजधानी में थे जहाँ हमें उस राज्य की पाठ्यपुस्तकों के नवीनीकरण की प्रक्रिया के लिए आमंत्रित किया गया था। हम राज्य शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (एससीईआरटी) के संकाय और शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले अन्य दो संगठनों से आए कुछ पाठ्यपुस्तक लेखकों के साथ काम कर रहे थे। अचानक उस प्रशान्त शैक्षिक माहौल की शान्ति भंग हो गई जब भीड़ का एक रेला नारा लगाते हुए एससीईआरटी भवन में घेराव करने के लिए आ घुसा। वे लोग एससीईआरटी के निदेशक को एक ज्ञापन देना चाहते थे। उनका आरोप था कि सरकार द्वारा शुरू की गई पाठ्यपुस्तक पुनरीक्षण की प्रक्रिया में 'घोर अनियमितताएँ' हैं। प्रदर्शनकारियों ने राज्य की पाठ्यपुस्तक पुनरीक्षण प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने वाले बाहरी लोगों के ख़िलाफ़ भी नारे लगाए। हमारे समूहों में हमारे साथ काम करने वाले एससीईआरटी के सहयोगियों ने हमें सलाह दी कि हम बाहर न निकलें। मैंने खिड़की से झाँका और यह देखकर चौंक गया कि प्रदर्शनकारियों में से अधिकांश लोग बीस-बाईस साल के थे!

शैक्षिक प्राधिकरण द्वारा निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के उद्देश्यों के अनुसार पाठ्यपुस्तक की अवधारणा और सन्दर्भीकरण करने की प्रक्रिया में शामिल लोगों के लिए पाठ्यपुस्तक का कथ्य तैयार करना बेहद कठिन कार्य है। शिक्षा के क्षेत्र में पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिन लोगों को शिक्षार्थियों के लिए अच्छी पाठ्यपुस्तकों को डिज़ाइन करने की ज़िम्मेदारी सौंपी जाती है वे अपनी ओर से नीतिगत दस्तावेज़ों में दिए गए दिशानिर्देशों का पालन करने का पूरा प्रयास करते हैं। लेकिन ईमानदार प्रयासों के बावजूद पाठ्यपुस्तक के लेखक अकसर ख़ुद को दोराहे पर खड़ा पाते हैं। उन्हें ऐसे कई हितधारकों के क्रोध का सामना करना पड़ता है जो अपने संकीर्ण पक्षपातपूर्ण उद्देश्यों की वजह से पाठ्यपुस्तकों को भुनाने के इच्छुक होते हैं। इस लेख में पाठ्यपुस्तकों की अवधारणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। पाठ्यक्रम को पुस्तकों में परिवर्तित करने की वास्तविक प्रक्रिया का वर्णन और आलोचना करते हुए सामग्री चुनने के सम्बन्ध में निर्णय लेने के तरीक़े पर प्रकाश डालकर उन्हें समग्र पाठ्यक्रम क्षेत्र के भीतर व्यवस्थित रूप से रखने की प्रक्रिया समझाई गई है। यह लेख इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि पाठ्यपुस्तकों की तैयारी, रचना और वितरण में शामिल पक्षों के बीच सम्प्रेषण सम्बन्धी अन्तराल उन विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक उपलब्ध कराने की पूरी क़वायद को प्रभावित करता है जो पाठ्यपुस्तकों के प्राथमिक उपयोगकर्ता माने जाते हैं।

पाठ्यचर्या के डिज़ाइनर, पाठ्यपुस्तक के लेखक, चित्रकार, प्रकाशक, शैक्षिक प्रशासक और नीति निर्माता अपनी विशिष्ट प्राथमिकताएँ और दृष्टिकोण रखते हैं जो अकसर एक-दूसरे के साथ मेल नहीं खाते। किसी विशेष पाठ्यपुस्तक को डिज़ाइन करने में परस्पर विरोधी प्राथमिकताओं और दृष्टिकोणों को समायोजित करना वास्तव में एक अत्यन्त कठिन कार्य है।

पाठ्यपुस्तकों की अवधारणा का स्पष्टीकरण

भारत के कई हिस्सों में परम्परा है कि बच्चे की औपचारिक शिक्षा की शुरुआत पाठ्यपुस्तक की पूजा से होती है, जिसे *विद्यारम्भ* कहते है। बच्चे को पाठ्यपुस्तक से परिचित कराने की यह रस्म पाठ्यपुस्तक को औपचारिक अधिगम का पर्याय बना देती है। बच्चे के लिए यह श्रद्धा की वस्तु है,

एक उच्च आसन पर रखी जाने वाली कलाकृति, जिसके साथ उसे वैसा बर्ताव नहीं करना चाहिए जैसा कि वह अपने खिलौनों, चित्र-पुस्तकों (ड्राइंग बुक्स) या अन्य घरेलू वस्तुओं के साथ करता है। जब बच्चे स्कूल जाना शुरू करते हैं तो एक बन्धन के प्रतीक के रूप में उन्हें पाठ्यपुस्तक सौंप दी जाती हैं – अपनी सीखने की प्रगति को साबित करने के लिए। उनके शिक्षक के लिए भी शिक्षा का मतलब कक्षा में पाठ्यपुस्तक पढ़ाना है। इस प्रकार बेचारे शिक्षक के लिए पाठ्यपुस्तकें भय का कारण बन जाती हैं। क्योंकि पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक की सामग्री का अनुसरण न करने से शिक्षक को अधिकारियों, अपने शिक्षार्थियों और उनके माता-पिता के क्रोध और अस्वीकरण का सामना करना पड़ सकता है। वे चुपचाप पाठ्यपुस्तक के आगे आत्मसमर्पण कर देते हैं और अपने शिक्षक-प्रशिक्षक कार्यक्रमों में सीखे हुए शैक्षणिक अभ्यासों को त्याग देते हैं।

दरअसल पाठ्यपुस्तकों का पूर्ण पाठ्यक्रम के रूप में उपयोग करने का तरीक़ा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) द्वारा प्रकाशित पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के आधारपत्र की सिफ़ारिशों के ख़िलाफ़ है। पाठ्यपुस्तकों को दिए गए अत्यधिक महत्त्व को देखते हुए इस दस्तावेज़ में कहा गया है :

आज देश के अधिकतर विद्यालयों में पाठ्यपुस्तकें कक्षा में हावी हैं। इसके कारण पाठ्यपुस्तक ने एक गौरवशाली और मानक रूपरेखा को अपना लिया है। ज़रूरत केवल एक पुस्तक की नहीं बल्कि शिक्षण-अधिगम सामग्री के एक पैकेज की है जो बच्चे को सक्रिय रूप से सीखने में शामिल कर पाए। इस तरह पाठ्यपुस्तक इस पैकेज का एक अंग होगी, न कि शिक्षण-अधिगम की एकमात्र सामग्री (एनसीईआरटी, 2006:37)।

पाठ्यपुस्तकों की भूमिका और पाठ्यपुस्तकों की राजनीति दुनिया भर में बहस का विषय है। पाठ्यपुस्तकें विद्यार्थियों के स्वायत्त अधिगम पर बुरा प्रभाव डालती हैं और शिक्षकों की रचनात्मकता को नष्ट कर देती हैं। पाठ्यपुस्तकों के नकारात्मक दुष्प्रभावों की ओर इशारा करते हुए, कॉटसेलिनी (2012:33) ने कहा, "पाठ्यपुस्तकों द्वारा पाठ्यचर्या के प्रतिस्थापन का मतलब है शिक्षण प्रक्रिया को अन्तिम उत्पाद के वितरण के रूप में देखना, जो पाठ्यपुस्तकों की सामग्री के रूप में पहले से तैयार है और जिसे शिक्षकों द्वारा वितरित और विद्यार्थियों द्वारा याद किया जाना चाहिए।" कृष्ण कुमार (1986:1309) पाठ्यपुस्तक को 'शैक्षिक संस्कृति में शिक्षक की अधीनता की स्थिति' का प्रतीक कहते हैं।

लेकिन सन्तोषजनक बात यह है कि 18 जनवरी 2019 को जारी किए गए परिपत्र में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने स्पष्ट रूप से कहा है कि स्कूलों, प्राचार्यों और शिक्षकों को "एक पूर्ण पाठ्यक्रम के रूप में पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करने या इकाई के अन्त में दिए गए प्रश्न-अभ्यासों के आधार पर बच्चों का मूल्यांकन करने" के परे जाना चाहिए।

भारतीय सन्दर्भ में पाठ्यपुस्तकों का स्वामित्व

भारत में पाठ्यपुस्तकों की रचना के लिए संस्थागत क्रियाविधि 1961 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) की स्थापना के साथ शुरू हुई। इसके बाद एनसीईआरटी के निर्देश पर लगभग सभी राज्यों में राज्य शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद (एससीईआरटी) की स्थापना की गई। हालाँकि एनसीईआरटी पूरे देश के लिए पाठ्यपुस्तकें तैयार करता है, लेकिन राजकीय विद्यालयों के लिए पाठ्यपुस्तक रचना की क्रियाविधि अलग-अलग राज्यों में भिन्न होती है। कुछ राज्यों में एससीईआरटी या राज्य पाठ्यपुस्तक निर्माण और प्रकाशन के ब्यूरो को पाठ्यपुस्तकों की तैयारी का काम सौंपा जाता है, तो कुछ राज्यों में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, उच्चतर माध्यमिक शिक्षा परिषद या प्राथमिक शिक्षा परिषद पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की प्रमुख एजेंसी होती हैं। कुछ राज्यों में एक से अधिक सरकारी प्रायोजित निकाय पाठ्यपुस्तकों की तैयारी में शामिल होते हैं और इसके परिणामस्वरूप इन अकादमिक निकायों के बीच बहुत अधिक शैक्षिक और प्रशासनिक वैमनस्य बढ़ जाता है।

शिक्षण सामग्री के चयन के लिए मानदण्ड

जब एक बार सरकार द्वारा पाठ्यपुस्तक समिति का गठन हो जाता है तो उसके बाद समिति के सदस्य सामग्री के चयन के व्यापक सिद्धान्तों पर एक आम सहमति बनाने और सामूहिक रूप से समस्या का समाधान करने के लिए मिलते हैं। आमतौर पर इन विचार-मन्थन सत्रों में एससीईआरटी के निदेशक या किसी विशेष क्षेत्र में काम करने वाले एक विशिष्ट विशेषज्ञ की अध्यक्षता में निम्नलिखित क्षेत्रों पर चर्चा की जाती है :

क. ऐसी सामग्री का चयन करना जो शिक्षा के उद्देश्यों और संवैधानिक मूल्यों के अनुरूप हो

ख. पाठ्यपुस्तक में कक्षा और आयु के अनुसार उपयुक्त विषय-सामग्री का चयन करना

ग. क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक विषय-सामग्री को सन्तुलित करना

घ. शैक्षणिक रूप से उपयुक्त सामग्री को निर्दिष्ट करना

ङ. सामग्री के चयन में वर्ग, जाति और लिंग की पारम्परिक प्रस्तुति से बचने का प्रश्न

च. विषय-सामग्री की कठिनाई का स्तर।

भाषा की पाठ्यपुस्तकों के मामले में भाषा शिक्षण के सैद्धान्तिक दृष्टिकोण और उनके शैक्षणिक निहितार्थों पर अकसर सदस्यों में काफ़ी गर्म बहस होती है, जबकि सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों के मामले में सामग्री के चयन के सन्दर्भ में सदस्यों के वैचारिक दृष्टिकोण पर बहस और जाँच की जाती है।

प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों के लिए पाठ्यपुस्तक के लेखकों को इस बात पर प्रमुख रूप से ध्यान देना चाहिए कि वे ऐसी विषय-सामग्री का चयन करें जो बाल-केन्द्रित और आयु के उपयुक्त हो, लेकिन देश भर की प्रारम्भिक कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों की सामग्री का विश्लेषण यह दर्शाता है कि बच्चों का पूर्वज्ञान, उनकी उम्र के अनुसार क्षमता और उनके वैचारिक विकास के स्तर पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता है। एक विशेष भारतीय राज्य की पाठ्यपुस्तकों का उल्लेख करते हुए चोमल (2016:64) बताती हैं कि उम्र के हिसाब से उपयुक्त तरीक़े से जानकारी को चुनना, पेश करना और प्रस्तुत करना – इन बातों को पाठ्यपुस्तकों में *अपर्याप्त रूप से सम्बोधित* किया गया है।

पाठ्यपुस्तक की सामग्री के चयन में पुस्तक के आकार और भौतिक विशेषताओं के निहितार्थ शामिल होते हैं। सामग्री का अनुक्रमण, अध्यायों की लम्बाई और व्यवस्थापन, ग्राफ़ और तालिकाएँ, पाठ्य के कथ्य, चित्र, पढ़ने से पहले, पढ़ने के दौरान व पढ़ने के बाद की जाने वाली गतिविधियाँ और अध्याय के अन्त में पूछे जाने वाले प्रश्न पाठ्यपुस्तक की समग्र पठनीयता को बढ़ाते हैं। भाषा की पाठ्यपुस्तक को डिज़ाइन करते समय लेखकों को यह तय करना होता है कि क्या उसके साथ एक अभ्यास पुस्तिका भी होगी और सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक को डिज़ाइन करते समय लेखकों को पूरक या अतिरिक्त पठन सामग्री के लिए शीर्षक तय करना होता है।

पाठ्यपुस्तक के लेखक अकसर इस बात की वकालत करते हैं कि पाठ्यपुस्तक की सामग्री को अध्यापकों के लिए शैक्षणिक रूप से प्रासंगिक बनाने के लिए शिक्षक मैन्यूअल तैयार किया जाना चाहिए। लेकिन इस डर से कि शायद शिक्षकगण एक अलग शिक्षक मैन्यूअल को पढ़ने की तक़लीफ़ उठाना पसन्द न करें, पाठ्यपुस्तक के लेखक अकसर पाठ्यपुस्तक के अध्यायों के बीच कुछ शिक्षक-पृष्ठ जोड़ देते हैं। इन शिक्षक-पृष्ठों के अलावा जहाँ कहीं भी पाठ्यपुस्तक के लेखकों को लगे कि शिक्षकों को उन पृष्ठों की सामग्री का उपयोग करते समय विशिष्ट मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ेगी तो ऐसे पृष्ठों के नीचे भी शिक्षकों के लिए संक्षिप्त नोट्स दे दिए जाते हैं।

सम्भव है कि लोगों को पाठ्यपुस्तक की सामग्री का चयन करना एक सीधी-सपाट घटना लगे, लेकिन जो लोग पाठ्यपुस्तक लेखन की प्रक्रिया में शामिल होते हैं, वही इस कष्ट को महसूस कर सकते हैं। अकसर देखा जाता है कि पाठ्यपुस्तक समितियों के सदस्यों की धारणाएँ अलग-अलग होती हैं

और उनके अनुभव का स्तर भी असमान होता है। रूढ़िवादी दृष्टिकोण, कठोर सैद्धान्तिक आधार, राजनीतिक दृष्टिकोण, व्यक्तिगत समीकरण और संस्थागत सम्बद्धता जैसी बातें अकसर पाठ्यपुस्तक की सामग्री के चयन में बहुत अधिक वैमनस्यता पैदा करती हैं।

पाठ्यपुस्तक की विषय-सामग्री को कितनी बार बदलना चाहिए? यह देखा गया है कि कुछ राज्य पाठ्यचर्या या पाठ्यक्रम पर पुनर्विचार किए बिना ही पाठ्यपुस्तक के नवीनीकरण की प्रक्रिया शुरू कर देते हैं। कर्नाटक राज्य शिक्षा नीति (केएसईपी) द्वारा पाठ्यपुस्तक की सामग्री और पाठ्यपुस्तकों के पुनरीक्षण की आवृत्ति के सम्बन्ध में दिए गए दिशानिर्देश काफ़ी महत्त्वपूर्ण हैं। उक्त नीति दस्तावेज़ के अनुसार : "पाठ्यपुस्तकों के उपयोग को स्थायी करना महत्त्वपूर्ण है और अगर उनमें अशुद्धियाँ न हों तो कम-से-कम तीन साल तक विषय-सामग्री को नहीं बदलना चाहिए। हमें यह बात समझनी चाहिए कि अकसर समाज के ग़रीब वर्ग के विद्यार्थियों के पास स्कूल की पाठ्यपुस्तकों के अलावा पढ़ने के लिए और कोई सामग्री नहीं होती। इसलिए पाठ्यपुस्तकों की विषय-सामग्री का ध्यान रखना बहुत महत्त्वपूर्ण है और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इसे केवल परीक्षा के उद्देश्यों के लिए न लिखा जाए" (केएसईपी, 2016:54)।

पाठ्यपुस्तक लेखन की कठिनाइयाँ

इस बात पर आश्चर्य हो सकता है कि भारतीय पाठ्यपुस्तकों को अकसर मीडिया में नकारात्मक प्रचार क्यों मिलता है। तथ्यात्मक त्रुटियाँ, अनुचित विषय-सामग्री, व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियाँ, अनुचित भाषा का प्रयोग, दोषपूर्ण चित्रण, उल्टे प्रकाशित पृष्ठ, खाली पृष्ठ या स्कूलों के लिए पाठ्यपुस्तकों के वितरण में अत्यन्त देरी होना आदि बातें सरकार के लिए बहुत शर्मिन्दगी का कारण बनती हैं। पाठ्यपुस्तक लेखकों को अपने कार्य के लिए बहुत कम समय मिलता है जो सबसे हानिकारक बात है। इसकी वजह से पाठ्यपुस्तक की सामग्री में ग़लतियाँ हो जाती हैं। देश के लगभग सभी राज्यों में पाठ्यपुस्तक समितियों के सदस्य पूर्णकालिक व्यावसायिक पाठ्यपुस्तक लेखक नहीं हैं। वे कुछ दिनों के लिए पाठ्यपुस्तक लेखन कार्यशाला में भाग लेने के लिए एससीईआरटी में प्रतिनियुक्त किए जाते हैं और इन कार्यशालाओं के दौरान वे सामग्री का चयन करते हैं तथा पहला मसौदा तैयार करते हैं, जिसे पूरे समूह द्वारा अन्तिम रूप दिया जाता है और समिति के अध्यक्ष द्वारा अनुमोदित किया जाता है।

पाठ्यपुस्तक में दिए जाने वाले चित्र आमतौर पर सम्बन्धित एससीईआरटी के कलाकार या किसी बाहरी एजेंसी के द्वारा बनाए जाते हैं, जिन्हें केवल पाण्डुलिपि तैयार होने पर ही शामिल किया जाता है। पाठ्यपुस्तक के लेखकों और चित्रकारों के बीच शायद ही कोई बातचीत होती हो। विषय-सामग्री का समर्थन करने के लिए लेखक के मन में जिस तरह के चित्रों का विचार होता है और चित्रकार उसे जिस तरह से समझता है इन दोनों के बीच में एक समरूपता होनी चाहिए, लेकिन लेखकों और डिज़ाइनरों या चित्रकारों के बीच बातचीत या विचारों का आदान-प्रदान नहीं होने के कारण अकसर चित्र विषय-वस्तु व शैक्षणिक दृष्टि से अप्रासंगिक बन जाते हैं।

जिन शिक्षा अधिकारियों को राज्य के विभिन्न हिस्सों में पाठ्यपुस्तकें भेजने की ज़िम्मेदारी सौंपी जाती है, उनके लिए इनका वितरण किसी दुःस्वप्न से कम नहीं होता। राज्य की राजधानियों से पाठ्यपुस्तकों को राज्य के विभिन्न हिस्सों में ले जाने के लिए निविदाएँ आमंत्रित करना, परिवाहकों (ट्रांसपोर्टरों) का समय पर भुगतान करना, जिला या उप-मण्डल स्तर पर पाठ्यपुस्तकों का भण्डारण और स्कूलों, बच्चों और पाठ्यपुस्तकों की संख्या से सम्बन्धित सांख्यिकीय कार्य आदि ऐसे कारक हैं जो देश के सरकारी स्कूलों में मुफ़्त पाठ्यपुस्तकों के वितरण को प्रभावित करते हैं। ऐसे उदाहरण भी सामने आते हैं जब परिवाहक ज़िलों में किताबें ले जाने से इन्कार कर देते हैं क्योंकि उनके पिछले वर्ष की बकाया राशि का भुगतान नहीं किया गया। पाठ्यपुस्तकों को स्कूलों तक लेकर आना वास्तव में एक मुश्किल काम है!

References

Chomal, A. 2016. Workbooks or Playbooks?- Experience of Developing Workbooks for Rajasthan Government Schools, Learning Curve, Issue 25

National Council of Educational Research and Training. 2006. The Position Paper on Curriculum, Syllabus and Textbooks. New Delhi: NCERT

KJA. 2016. Karnataka State Education Policy. Karnataka Jnana Aaayoga, Bengaluru

Kumar, K. 1986. Textbooks and Educational Culture, Economic and Political Weekly, Vol. 21, No. 30, pp. 1309-1311

Koutselini M. 2012. Textbooks as Mechanisms for Teachers' Sociopolitical and Pedagogical Alienation, The New Politics of the Textbook, Constructing
Knowledge. Editors. Hickman H., Porfilio B.J.,Vol 2. Rotterdam, Sense Publishers

http://cbseacademic.nic.in/web_material/Circulars/2019/05_Circular_2019.pdf

---

पार्थसारथी मिश्रा ने नॉटिंघम विश्वविद्यालय (यूके) से स्नातकोत्तर और कलकत्ता विश्वविद्यालय से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की है। वे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में एक विज़िटिंग फैकल्टी हैं। विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विद्यार्थियों को भाषा पाठ्यक्रम में पाठ्यक्रम सामग्री विकास के बारे में पढ़ाने के अलावा वे विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ़ कंटीन्यूइंग एजुकेशन एंड यूनिवर्सिटी रिसोर्स सेंटर के लघु अवधि के व्यावसायिक विकास कोर्सों के डिज़ाइन और सुगमीकरण में योगदान दे रहे हैं। उनसे partha.misra@azimpremjifoundation.org या misrapartha2018@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** सात्विका ओहरी **कॉपी एडिटर :** अंजना राव

सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक : मानसिकता में परिवर्तन?

दीप्ति प्रिया मेहरोत्रा

एनसीएफ़ 2005 के अन्तर्गत तैयार की गई सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकें मानसिकता में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाने की उम्मीद से इन्सान के विभिन्न पूर्वाग्रहों का सामना करने का प्रयास करती हैं। उनकी रचना इस तरह से की गई है कि वे विविधता, लोकतांत्रिक मूल्यों, समीक्षात्मक चिन्तन और प्रश्न पूछने जैसी बातों का आदर करना सिखाएँ। जैसा कि व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है, इन पाठ्यपुस्तकों को एक प्रगतिशील शैक्षिक, सामाजिक और राजनीतिक समझ *(रितुबाला और जोशी, 2008-09: 29-42)* के साथ तैयार किया गया है। इन पाठ्यपुस्तकों की सामग्री आकर्षक, विविधतापूर्ण और आनन्ददायी है : दुनिया और स्कूल के बीच की दीवार तोड़ दी गई है और बच्चा दुनिया से सम्बन्धित अपने समृद्ध अनुभवों को कक्षा में ला सकता है *(राय, 2006: 152-57)*। लेकिन साथ ही हमें यह भी याद रखना चाहिए कि पाठ्यपुस्तक कोई जादू की छड़ी नहीं है और न ही परिवर्तनकारी शिक्षा का कोई वाहन है। वास्तव में कक्षा और बच्चे की दुनिया से गुज़रने वाली पाठ्यपुस्तक की इस यात्रा में कई मुश्किलें हैं।

सामाजिक विज्ञान पूरे मानव जीवन की बात करता है जिसमें हमारे कार्य और भावनाएँ भी शामिल हैं। बच्चे हर समय और हर जगह मानव अभिकरण, रचनात्मकता और सम्भावनाओं के बारे में सीखते हैं और इससे उन्हें अपने क्षितिज का विस्तार करने और अपने पूर्वाग्रहों पर सवाल उठाने के लिए प्रोत्साहन मिल सकता है। तीसरी कक्षा की ईवीएस पाठ्यपुस्तक के अध्याय *भोजन अपना अपना (एनसीईआरटी, 2007a: 38-44)* में विभिन्न घरों में पकाए गए विभिन्न प्रकार के भोजन के बारे में चर्चा की गई है। इसके पीछे इरादा यही है कि विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के व्यवहार्य खाद्य पदार्थों और खाद्य संस्कृतियों की सराहना करने और शुरू से ही मन में बसे हुए पूर्वाग्रहों से लड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। वास्तव में यह सम्भव है। खुले विचारों वाले कल्पनाशील शिक्षक के हाथों में यह चर्चा के लिए समृद्ध सामग्री प्रदान कर सकता है और संस्कृति, वर्ग, जाति, लिंग और धर्म के मतभेदों के बारे में आपसी समझ को मज़बूत कर सकता है।

लेकिन यही तरीक़ा पूरी तरह से ग़लत भी साबित हो सकता है विशेष रूप से अगर शिक्षक असंवेदनशील या नितान्त पूर्वाग्रही हो। उदाहरण के लिए अगर शिक्षक यह मानते हैं कि 'माँसाहारीवाद बुरा है', तो सम्भव है कि वे अपनी कक्षा में इस धारणा को इस तरह से प्रस्तुत करें जिससे कुछ बच्चे अपने को श्रेष्ठ महसूस करें और अन्य ख़ुद को छोटा और अपमानित महसूस करें। इस तरह के हस्तक्षेप सीखने की प्रक्रिया को कमज़ोर कर सकते हैं, विकृत कर सकते हैं या यहाँ तक कि नष्ट भी कर सकते हैं। सामाजिक विज्ञान के मामले में यह ख़तरा सबसे गम्भीर है क्योंकि इसमें मानवीय पूर्वाग्रह, भावनाएँ और मान्यताएँ सर्वाधिक गहन होती हैं।

ईवीएस की चौथी कक्षा की पाठ्यपुस्तक *(एनसीईआरटी, 2007b: 62)* से उद्धृत यही बात इस तरह के सवालों के साथ भी है कि *तुम किन-किन वाहनों में बैठे हो?* फिर : *तुम्हें सबसे ज़्यादा मज़ा किस वाहन में सफ़र करने पर आया? क्यों?*, हो सकता है कि जिस बच्चे ने विभिन्न प्रकार के वाहनों में बहुत सारी यात्राएँ की हैं, वह ख़ुद को उस बच्चे से बेहतर समझे जो शायद ही कहीं बाहर गया हो या जिसने बमुश्किल किसी वाहन का उपयोग किया हो। लेकिन अगर शिक्षक अच्छी तरह से तैयार और लोकतांत्रिक विचारधारा वाला हो तो उसी स्थिति को एक ऐसे अवसर में बदलने में सक्षम होगा जिसमें आपसी चर्चा और परस्पर अधिगम किया जा सके।

मुद्दा यह है कि बच्चों के अनुभवों को कक्षा में लाने से एक सहवर्ती ज़िम्मेदारी बनती है। जब पारस्परिक मतभेद और व्यक्तिगत कमज़ोरियाँ खुलकर सामने आती हैं तो शिक्षा प्रणाली को परिणामों को सम्हालने के लिए तैयार होना चाहिए।

शिक्षक और पाठ्यपुस्तक की शक्ति

बच्चे अपने घर और अन्य जगहों पर जीवन के जिन अनेक रूपों का अनुभव करते हैं, उन्हें कुछ समय पहले तक भी शायद ही कभी कक्षा में स्थान दिया गया हो *(भट्टाचार्य, और अन्य, 2008-09)*। एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकों ने कक्षा के भीतर अपने अनुभवों को साझा करने के लिए बच्चों को सजग रूप से आमंत्रित करके इस प्रवृत्ति को बदलने की कोशिश की है। इसके साथ ही किंचित विरोधाभासी रूप से, पाठ्यपुस्तक की भूमिका को कम महत्त्व देने का प्रयास भी है। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों पर एनसीएफ़-2005 के आधार पत्र में कहा गया है "वर्तमान में लगभग देश के सभी स्कूलों की कार्यशैली पूरी तरह से पाठ्यपुस्तकों पर निर्भर करती है," *(एनसीईआरटी, 2006, पृ. viii)*।

ये नई पाठ्यपुस्तकें अपने स्वयं के उपयोग को सीमित करने का प्रयास करती हैं। तीसरी और चौथी कक्षा की ईवीएस पाठ्यपुस्तकों में अभिभावकों और शिक्षकों के नोट में कहा गया है "पाठ्यपुस्तक शिक्षक द्वारा प्रयुक्त कई शिक्षण-अधिगम सामग्रियों में से केवल एक है। लिहाज़ा इस पाठ्यपुस्तक को शिक्षकों के लिए एक सहायक सामग्री के रूप में देखा जाना चाहिए, जिसके इर्द-गिर्द शिक्षक अपने शिक्षण को संगठित कर सकें ताकि बच्चों को सीखने के अवसर मिल पाएँ।" *(एनसीईआरटी, 2007a: xi, एनसीईआरटी, 2007b: vii)*।

चूँकि एनसीएफ़-2005 में अन्तर्निहित दर्शन पर शिक्षकों के लिए कोई प्रभावी पुनर्शिक्षा नहीं हुई है जो उन्हें अपने शिक्षण के तरीक़ों को बदलने के लिए प्रेरित करे, इसलिए अधिकांश शिक्षक अभी भी पाठ्यपुस्तक के पाठ को अपनी शिक्षण प्रक्रिया के केन्द्र में रखते हैं। पाठ्यपुस्तकें बेशक नई हैं, लेकिन उन्हें पढ़ाने का तरीक़ा वही पुराना है। ऐसी हालत में इन पाठ्यपुस्तकों के उन प्रश्नों और अभ्यासों का क्या जिन्हें बड़े ध्यानपूर्वक बच्चों की स्वतंत्र सोच और विविधता के लिए सम्मान को उजागर करने के लिए डिज़ाइन किया गया है? कुछ स्कूलों में नई पाठ्यपुस्तकें वास्तव में ऐसा करने में मदद कर रही हैं – ऐसे स्कूलों में या ऐसी दुर्लभ कक्षाओं में जिनकी प्रकृति समर्थनकारी व लोकतांत्रिक है। अन्य कक्षाओं में पाठ्यपुस्तकें शायद समस्याएँ हल करने की बजाए उन्हें पैदा करती हैं। उदाहरण के लिए यह प्रश्न देखिए, *क्या तुम्हारे साथ कभी ऐसा हुआ है कि भूख लगी हो और कुछ भी खाने को नहीं मिला? यदि हाँ, तो क्यों? (एनसीईआरटी, 2007a: 39)*। जब एक वंचित और कमज़ोर बच्चा खाते-पीते परिवार के बच्चों के आगे भूख और ग़रीबी को स्वीकार करता है तो हो सकता है कि वह अपने आप को और अधिक असुरक्षित महसूस करे। इस प्रणाली से उसे समर्थन नहीं मिलता।

साथ में एक चित्र भी है जिसमें बच्चे गोल घेरे में बैठे हुए हैं और बता रहे हैं कि उन्होंने पिछली रात को क्या खाया था। एक का कहना है कि उसके घर में कुछ भी नहीं पकाया गया था। लेकिन उसकी ग़रीबी को कम आपत्तिजनक रूप में दिखाया गया है : उसके कपड़े दूसरे बच्चों की तरह साफ़-सुथरे हैं और उसके शरीर में स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाले कुपोषण के कोई संकेत नहीं हैं *(एनसीईआरटी, 2007a: 38)*। यह एक आदर्शीकृत छवि है, उसकी प्रस्तुति ईमानदारी के साथ नहीं की गई है। यह पाठ बच्चों से अपनी वास्तविक दुनिया के बारे में बात करने का आग्रह करता है, लेकिन वंचित बच्चे की वास्तविकता को पूरी तरह से स्वीकार करने में विफल होने के कारण उसका आदर नहीं कर पाता। अभाव को सरसरी नज़र से देखा गया है, अप्रिय वास्तविकताओं को नज़रअन्दाज़ कर दिया गया है। एक फुटनोट में कहा गया है "बच्चों के साथ सौहार्द-स्थापन करना और ऐसा माहौल बनाना ज़रूरी है जहाँ वे ख़ुद को स्वतंत्र रूप से व्यक्त कर सकें और उनके विचारों को सहिष्णुता के साथ सुना जाए" *(एनसीईआरटी, 2007a: 39)*। पर जब बच्चे ख़ुद को व्यक्त करना शुरू करते हैं तो *सहिष्णुता* शब्द से व्यक्त होने वाले सुगमीकरण से कहीं उच्च प्रकार के सुगमीकरण की आवश्यकता होती है। शिक्षक

को एक सुरक्षित माहौल सुनिश्चित करना है, जहाँ वे और उनके विद्यार्थी एक-दूसरे की वास्तविकताओं और विविधताओं से भरी दुनिया को लेकर, आलोचनात्मक रवैया न रखते हों, बल्कि उनकी परवाह और सम्मान करते हों (सिर्फ़ सहनशील होना काफ़ी नहीं)। आत्म-अभिव्यक्ति को अपने आप में एक लक्ष्य नहीं, बल्कि एक परिपक्व और संवेदनशील मानव के विकास की जटिल प्रक्रिया का हिस्सा माना जाना चाहिए।

वास्तव में हमारी कक्षाओं को शायद ही सुरक्षित स्थान कहा जा सकता है क्योंकि वे एक विशाल समाज का व्यापक प्रतिनिधित्व करती हैं। अधिकांश कक्षाएँ जाति, वर्ग, लिंग, धर्म के आधार पर मतभिन्नता और पूर्वाग्रहों से ग्रस्त हैं। पाठ, अभ्यास या शिक्षण विधा द्वारा उत्तेजित किए जाने पर ये सरेआम उभरकर सामने आ सकते हैं। प्रबल भावनाएँ पैदा हो सकती हैं – पीड़ा, शर्मिन्दगी, क्रोध, अपराध बोध, आक्रामकता, अहंकार आदि। सुगमकर्ता की भूमिका निभाने के लिए शिक्षकों को ग़ैर-निर्णयात्मक होना होगा तथा तर्कपूर्ण चर्चा और सावधानीपूर्वक पोषित विश्वास के ज़रिए मतभिन्नता को बदलना होगा। प्रभावी शिक्षक विद्यार्थियों को उनके अनुभवों पर चिन्तन करने, सक्रिय रूप से दूसरों को सुनने, विविध वास्तविकताओं का विश्लेषण करने और सामाजिक संरचना, असमानताओं और अन्याय पर व्यापक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करते हैं। इस तरह के शिक्षक लोकतांत्रिक सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ अपने और विद्यार्थियों के व्यक्तिगत विकास के लिए भी गहन रूप से प्रतिबद्ध होंगे।

अगर शिक्षा को परिवर्तनकारी होना है तो पहले शिक्षक को बदलना चाहिए! यह बात बिल्कुल सच है कि : "बच्चे को पूर्वाग्रह से मुक्त होने के लिए सक्षम करना हो तो सबसे पहले अपने भीतर के सभी पूर्वाग्रहों को तोड़ना होगा... निरन्तर पूछताछ और सच्चे असन्तोष से ही रचनात्मक बुद्धिमत्ता आती है।" *(जे. कृष्णमूर्ति 2008: 54-56)*।

शिक्षकों की ओर से विशुद्ध प्रतिबद्धता के बजाय हम अकसर सिर्फ़ राजनीतिक रूप से सही होने का प्रयास करते हैं और इस प्रकार घिसी-पिटी बातों को एक नई अवधारणा के रूप में पेश करने की कोशिश करते हैं।

शिक्षकों के साथ निरन्तर काम करने से महत्त्वपूर्ण बदलाव आ सकते हैं। यदि शिक्षकों के साथ सम्मान के साथ सम्पर्क किया जाए और एक पारदर्शी व भागीदारीपूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया के माध्यम से पहल की जाए तो वे असाधारण रूप से प्रेरित हो सकते हैं, जैसा कि एकलव्य ने मध्य प्रदेश में लम्बे समय तक शिक्षकों के साथ काम करके किया। एकलव्य की टीम सामान्य स्कूलों के शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ गहनता से जुड़ी जिसके कारण ये परिणाम सामने आए : 'समृद्ध और अधिक विशद छवि के बारे में बात की गई, घिसे-पिटे स्पष्टीकरण से परे विशद स्पष्टीकरण की ओर जाने की क्षमता, सामाजिक घटनाओं के अन्तर्सम्बन्ध की शुरुआत, और 'अन्य' लोगों को कम निर्णयात्मक तरीक़े से देखना।'

एकलव्य के शिक्षाविदों को एहसास है कि परिवर्तन की वास्तविक प्रक्रिया बहुत लम्बा समय लेती है और बहुआयामी है; अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है : "हमने बच्चों के साथ अपने अनुभवों से सीखा है कि बहुत सारी ग़ैर-पाठ्य गतिविधियाँ आवश्यक हैं – मौखिक कथन, चित्र बनाना, मिट्टी की चीज़ें बनाना आदि। उन्हें अपने लेखन पर अधिक फीडबैक दिया जाना चाहिए, पाठ्यों की संरचना के बारे में अधिक उन्मुखीकरण, पढ़ने और तैयारी करने के लिए अधिक समय, शिक्षकों से अधिक चौकस चर्चा और स्पष्टीकरण तथा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बात यह कि पाठों के शिक्षण के दौरान उन्हें अपने अनुभवों के बारे में बात करने के लिए और अधिक अवसर मिलने चाहिए" *(पालीवाल और सुब्रमण्यम, 2010: 43-47)*।

पाठ्यक्रम का निष्पादन : इस दौरान होने वाला ह्रास

एनसीएफ़-2005 शिक्षण-अधिगम विधियों में लचीलेपन की सिफ़ारिश करता है, ताकि "शिक्षार्थी द्वारा ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया सक्रिय रचना की प्रक्रिया बन जाए" *(एनसीएफ-2005: 26-27)*।

मगर, केन्द्रीय राष्ट्रीय पाठ्यचर्या और इसमें शामिल शिक्षण-अधिगम के विशिष्ट स्वीकृत वैकल्पिक साधनों के बीच तनाव है। एक समायोजित शैक्षिक नौकरशाही के भीतर उत्पादित पाठ्यपुस्तकें एक बड़े पैमाने की शिक्षा व्यवस्था का हिस्सा हैं, जिसमें पाँच करोड़ प्रतियों को छापने की आवश्यकता होती है *(गोहेन, 2018)*।

जो शिक्षक और विद्यार्थी पुराने तरीक़ों का ही प्रयोग करते रहना चाहते हैं, प्रौद्योगिकी उनके बचाव का साधन बनती है! इंटरनेट ऑनलाइन गुरुओं से भरा हुआ है जो समाधान प्रदान करते हैं और प्रश्न पत्र हल करते हैं। शिक्षकों, ट्यूशन और ऑनलाइन गुरुओं के रूप में अब विद्यार्थियों के लिए ऐसी पर्याप्त पची-पचाई सामग्री उपलब्ध है, जिसे वे याद कर सकते हैं, अपनी रचनात्मक सोच और पूछताछ के कौशल को विकसित करने की ज़रूरत ही नहीं! यदि पूर्व-निर्धारित पाठ्य, उदासीन शिक्षक और ट्यूटर (आमने-सामने और ऑनलाइन) सीखने की प्रक्रिया पर हावी हो जाते हैं, तो शिक्षार्थियों द्वारा ज्ञान के सक्रिय निर्माण के अवसरों के साथ गम्भीर रूप से समझौता करना पड़ता है।

यहाँ मैं ऑनलाइन गुरुओं से लिए गए कुछ उदाहरणों की सूची प्रस्तुत कर रही हूँ : ऐसे कुछ 'समाधान' जो नेट पर सरसरी खोज से प्राप्त हुए। वैसे तो इस प्रकार की कई वेबसाइटें हैं, पर मैं CBSE *tuts* नामक वेबसाइट के उदाहरण दे रही हूँ। मैंने जो उदाहरण *(भाग्या, 2018)* लिए हैं वे दसवीं कक्षा के राजनीतिविज्ञान के विद्यार्थियों के लिए हैं और *जाति, धर्म और लैंगिक मसले (एनसीईआरटी, 2008: 39-56)* नामक अध्याय से सम्बन्धित हैं :

प्रश्न : भारत में जातिवाद को रोकने के उपाय सुझाइए।

उत्तर : 1. शिक्षा का प्रसार.....; 2. आर्थिक समानता.....; 3. आरक्षण का उन्मूलन – सरकारी नौकरियों, शिक्षा और अन्य क्षेत्रों में आरक्षण के कारण दो अलग-अलग जातियों के सदस्यों के बीच परस्पर विरोधी रवैया पैदा होता है। जब पर्याप्त शैक्षणिक योग्यता वाले उच्च जाति के लोग सभी सुविधाओं से वंचित हो जाते हैं तो वे निम्न जाति के लोगों के ख़िलाफ़ विद्रोह कर देते हैं।

प्रश्न : भारतीय समाज में लैंगिक विभाजन का क्या अभिप्राय होता है? लैंगिक आधार पर राजनीतिक लामबन्दी सार्वजनिक जीवन में किस हद तक महिलाओं की भूमिका को बेहतर बनाने में मदद करती है?

उत्तर : भारतीय समाज में पुरुषों और महिलाओं द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाओं के बीच अन्तर करने के लिए लिंग के अन्तर को सामाजिक रूप से निर्मित आधार के रूप में लिया जाता है। कार्य को लैंगिग रूप से विभाजित करना समाज की मानसिकता बन गई है। इस वजह से महिलाएँ भेदभाव का सामना करती हैं और पितृसत्तात्मक व्यवस्था की शिकार बन गई हैं। समानता और स्वतंत्रता की अवधारणाओं को अपनाने के बाद भी, हमारे पास व्यावहारिक दृष्टिकोण की कमी है। इसलिए यह आवश्यक है कि राजनीतिक लामबन्दी सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भूमिका को बेहतर बनाने में मदद करे। राजनीतिक दलों को राष्ट्रीय और स्थानीय राजनीति में महिलाओं के समान प्रतिनिधित्व के लिए नीतियाँ तैयार करनी चाहिए। यह महिलाओं के लिए क्षितिज को विस्तृत करेगा। निर्णय लेने में भागीदार बनने से उन्हें अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यों में प्रोत्साहन मिलेगा। उनमें परिपक्वता और ज़िम्मेदारी विकसित होगी।

प्रश्न : साम्प्रदायिकता को एक विचारधारा के रूप में परिभाषित करें।

उत्तर : साम्प्रदायिकता का अर्थ है किसी विशेष सम्प्रदाय के प्रति दृढ़ विश्वास, विशेष रूप से किसी धार्मिक सम्प्रदाय के प्रति; और यह भावना अकसर दूसरों के प्रति अतिवादी व्यवहार या हिंसा की ओर ले जाती है। साम्प्रदायिकता विभिन्न धार्मिक समुदायों से सम्बन्धित लोगों को न तो बर्दाश्त कर पाती है और न ही सम्मान दे पाती है।

नेट पर उपलब्ध कराए गए उपर्युक्त उत्तर और पाठ्यपुस्तकों में सिखाई जाने वाली बातें परस्पर विरोधी हैं। वे सर्वथा अज्ञानतापूर्ण, प्रतिगामी, जातिवादी/ पितृसत्तात्मक/ साम्प्रदायिक हैं। और फिर भी, कई विद्यार्थी इस तरह की वेबसाइटों का

उपयोग करते हैं और प्रशंसात्मक टिप्पणियाँ लिखते हैं, ऐसी निम्न स्तरीय सामग्री का आभार मानते हैं जिसे वे बिना सोचे-समझे रट सकें।

कोठारी आयोग का कहना है : "……मुख्य रूप से याद करने/रटने पर आधारित स्कूल की प्रणाली को समझ, सक्रिय सोच और रचनात्मकता वाली प्रणाली में बदलना एक लम्बा और बोझिल काम है। हर क़दम, एक क़दम नहीं है, अपितु किसी अज्ञात में छलाँग लगाने के समान है..." *(कोठारी, 1966)*।

जहाँ तक सामाजिक विज्ञान का प्रश्न है, एक ग़लत क़दम कक्षाओं को सार्थक जुड़ाव और परिवर्तन की बजाए खुले संघर्ष की आग में झोंक सकता है और अन्यायपूर्ण शक्ति, पीड़ा और हिंसा को मज़बूत कर सकता है।

पाठ्य और सन्दर्भ

मैं अब एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों में कुछ ख़ामियों – जो कि वंचित बच्चों और समुदायों के सन्दर्भ में एक प्रकार का लोकतांत्रिक नुक़सान है – की ओर ध्यान दिलाना चाहती हूँ।

तीसरी और चौथी कक्षा की ईवीएस पाठ्यपुस्तकों *(एनसीईआरटी, 2007a:x; एनसीईआरटी, 2007b v-vi)* में *शिक्षकों और अभिभावकों के लिए दो शब्द* में कहा गया है : "पुस्तक में ऐसी गतिविधियाँ जो बच्चों को बाग़-बग़ीचे, खेत, तालाब के किनारे और समुदाय आदि के बीच अवलोकन के लिए ले जाने की माँग करती हैं इस बात को दोहराती हैं कि ईवीएस की पढ़ाई मुख्य रूप से कक्षा की चारदीवारी के बाहर होती है।"

तीसरी कक्षा में ये गतिविधियाँ दी गई हैं :

एक पेड़ के नीचे कुछ समय बिताओ। जानवरों को ध्यान से देखो।

अपने स्कूल या घर के पास एक पेड़ चुनो और उससे दोस्ती करो।

बाहर जाओ और पेड़ों पर, पानी में, ज़मीन पर, और आस-पास झाड़ियों में पक्षियों को देखो। तुम कितने पक्षियों को देख सकते हो?

किन्हीं तीन पक्षियों की आवाज़ों की नक़ल करो। पक्षियों के गिरे हुए पंखों को इकट्ठा करो।

तुम्हारे घर के आस-पास उगने वाले पौधों को पानी कहाँ से मिलता है? *(एनसीईआरटी, 2007a: 8,17,54,60)*।

गीता कुमारी शहरी झोपड़पट्टी में स्थित एक प्राथमिक विद्यालय की शिक्षिका हैं। वे इनमें से किसी भी गतिविधि को नहीं करवा पाईं क्योंकि उनके स्कूल में या आस-पास पेड़, पौधे या पक्षी थे ही नहीं! एक अन्य गतिविधि के तहत बच्चों को डाकघर ले जाना था *(एनसीईआरटी, 2007a:115)*, उन्होंने ऐसा करने की कोशिश की और उसे पूरी तरह से अव्यावहारिक पाया : "स्कूल मुझे बच्चों को वहाँ ले जाने की अनुमति नहीं देता क्योंकि मैं निकटतम डाकघर जाने के लिए दो किलोमीटर की पैदल यात्रा के दौरान 45 लड़कियों की सुरक्षा कैसे सुनिश्चित करूँगी?"

गीता की कक्षा में *रिक्शा चालकों* के कुछ बच्चे पढ़ते हैं। गीता का कहना है कि जिस तरह का वातावरण पाठ्यपुस्तकों में दिखाया गया है उसके साथ ये बच्चे तालमेल नहीं बैठा पाते क्योंकि वहाँ मस्ती, बेफ़िक्री और आराम की भावना झलकती है जिसे ये बच्चे समझ नहीं पाते। कामकाजी वर्ग के बच्चे चमकदार और ख़ुशगवार चित्रों और पाठ्यपुस्तकों की प्रवाहपूर्ण भाषा के साथ आसानी से नहीं जुड़ पाते। ये पुस्तकें कीचड़ और गन्दगी, पीड़ा और कष्ट, अनादर और अभाव, जो उनकी रोज़मर्रा की दुनिया का एक बड़ा हिस्सा हैं, को स्वीकारने में विफल होती हैं।

सामाजिक-राजनीतिक सरोकार भाषा/साहित्य की पाठ्यपुस्तकों में भी परिलक्षित हैं। चौथी कक्षा की हिन्दी पाठ्यपुस्तक *(एनसीईआरटी, 2007d: 97-102)* में *सुनीता की पहिया कुर्सी* नामक कहानी दी गई है जिसमें सुनीता का वर्णन है जो एक विशेष क्षमता वाली लड़की है, ख़ुद बाज़ार जा रही है, एक छोटे मित्र अमित की मदद से किराने की दुकान में प्रवेश करती है; बाद में दोनों पहिया-कुर्सी पर सवार होकर तेज़ी से सड़क पर आगे बढ़ जाते हैं। इस कहानी में यह बताने की कोशिश की गई

है कि विकलांग बच्चा भी अन्य बच्चों की तरह 'सामान्य' होता है : लेकिन इस मामले को बढ़ा-चढ़ाकर बताया गया है और उसकी स्वतंत्रता का वर्णन अतिशयपूर्ण प्रतीत होता है। सुनीता का एक अन्य बच्चे को पहिया-कुर्सी पर चढ़ाकर सड़क पर जाने का चित्रण अवास्तविक और ख़तरनाक है। पहिया-कुर्सी का उपयोग करने वालों को दैनिक जीवन की गतिविधियों के लिए अकसर कुछ सहायता की आवश्यकता होती है जैसे कि तैयार होने या भोजन करने के लिए आदि। यह कहानी उनके लिए अपकार का प्रदर्शन कर सकती है, उनकी मुश्किलों को महत्त्वहीन बना सकती है और उनकी आवश्यकताओं को धुँधला कर सकती है। वास्तव में यह कहानी 'सामान्यता' की एक नई रूढ़िबद्ध धारणा को थोपती हुई सी प्रतीत होती है, जो वास्तव में एक विशेष क्षमता वाले बच्चे से एक नई अपेक्षा करती है और उस पर दबाव डालती है।

तीसरी, चौथी और पाँचवीं कक्षा की एनसीईआरटी, हिन्दी की पाठ्यपुस्तकें (*एनसीईआरटी*, 2007c, *एनसीईआरटी*, 2007d, *एनसीईआरटी*, 2007e) भी लिंग की दृष्टि से अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं हैं। इन तीनों पाठ्यपुस्तकों में पात्रों की गिनती करें तो एक चौंकाने वाला असन्तुलन देखने को मिलता है : पाठ में वर्णित 75% चरित्र पुरुष और 25% महिलाएँ हैं। इसी तरह दृश्य निरूपण में भी अत्यधिक असन्तुलन है : चौथी कक्षा की पाठ्यपुस्तक के रेखा-चित्रण में 74% पुरुष हैं, और 26% महिलाएँ *(मेहरोत्रा और रामचन्द्रन, 2010: 54-61)*।

हिन्दी भाषा की पाठ्यपुस्तकें	कुल पात्र	पुरुष पात्र	महिला पात्र
कक्षा 3, 4, 5 (तीनों को मिलाकर) : पाठ्य	162	121 (75%)	41 (25%)
कक्षा 4 : चित्र	381	280 (74%)	101 (26%)

इस तरह का असन्तुलित लिंग चित्रण बच्चों के सामने अत्यधिक मर्दाना और पुरुष प्रधान दुनिया प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त लड़कियों और महिलाओं को समूहों में शायद ही कभी दिखाया जाता है, जबकि लड़के और पुरुष समूह में होते हैं – गेंद खेलते हुए, शिक्षक के साथ छात्र, बाज़ार में, सड़क पर आदि। और हालाँकि महिलाओं को विविध व्यवसायों को अपनाते हुए दिखाया जाता है लेकिन बात जब घर के कामों की हो तो अधिकतर महिलाओं को ही उन्हें करते हुए दिखाया जाता है मानो कि यह एक सहज स्वाभाविक बात है।

चित्र-1 : *घरेलू काम अधिकतर महिलाओं द्वारा किए जाते हैं, और इसे बहुत 'स्वाभाविक' लगने वाले तरीक़े से प्रस्तुत किया जाता है : जैसा कि 'सुनीता की पहिया कुर्सी' शीर्षक वाली कहानी के इस चित्र में (एनसीईआरटी, रिमझिम 4, कक्षा-4 के लिए हिन्दी की पाठ्यपुस्तक, पृ. 98)*।

पाठ्यपुस्तकें राजनीतिक रूप से सही सन्देश देने की कोशिश करती हैं, लेकिन कभी-कभी इसका परिणाम सच्चाई को छिपाना या परिष्कृत पाखण्ड होता है। उदाहरण के लिए ईवीएस की तीसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक *(एनसीईआरटी, 2007a: 134)* के 'बूँद-बूँद से' पाठ में तालाब से घड़े में पानी लाने वाली महिलाओं और लड़कियों से सम्बन्धित पाठ्य और दृश्य हैं और इस आशय का एक फुटनोट है "ऊपर चित्र में महिलाओं को दूर जाकर पानी लाने तथा पानी भरते हुए दिखाया गया है। लिंग-भेद से जुड़ी बातों/समस्याओं पर कक्षा में चर्चा करवाएँ।" वैसे तो यह उद्देश्य प्रशंसनीय है, लेकिन

चित्र-2 : *एक 'असुर' जिसे हीरो-लड़का मारना चाहता है, जैसा कि राम ने किया था : एक खतरनाक चित्रण : 'खिलौने वाला, (एनसीईआरटी, रिमझिम 5, कक्षा-5 के लिए हिन्दी की पाठ्यपुस्तक, पृ. 21)*

पाँचवीं कक्षा की हिन्दी भाषा की पाठ्यपुस्तक में 'खिलौने वाला' कविता *(चौहान, 2007: 20-23)* बहुत सुन्दर तरीक़े से शुरू होती है, जिसमें एक छोटा लड़का एक फेरीवाले खिलौना-विक्रेता की चीज़ों को देखता है। वह किसी असुर स्त्री या असुर का वध करने के लिए एक तलवार तथा धनुष-बाण ख़रीदने का फ़ैसला करता है। साथ में दिए गए चित्र में एक असुर, एक वनवासी को दिखाया गया है, जिसे एक आदिवासी के रूप में भी देखा जा सकता है। वास्तव में, एक आदिवासी समूह जिसे असुर कहा जाता है, आज भी झारखण्ड में रहता है।

यह चित्रण अत्यन्त समस्यापूर्ण है : ख़ासकर ऐसे समय में जब कॉर्पोरेट और राज्य बलों द्वारा भूमि अधिग्रहण के कारण आदिवासियों को जबरन विस्थापित किया जा रहा है। इस तरह के साहित्यिक और दृश्य रूपकों के माध्यम से आदिवासियों को बुरे लोगों के रूप में पहचाना जाने लगता है, जिन्हें मारना नीतिवान लोगों के लिए न्यायसंगत ठहराया जाता है। राम के एक आक्रामक और अति-मर्दाने रूप का रक्षण किया जाता है और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि स्कूल के लड़कों को इस रूढ़िबद्ध धारणा का अनुकरण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। कुछ अभ्यास यह मानकर बुरी स्थिति को और बदतर बनाते हैं कि सभी विद्यार्थी पहले से ही राम, रामायण और रामलीला से परिचित होंगे और इसलिए वे कविता को कोई भी धर्मनिरपेक्ष, ऐतिहासिक ढाँचा प्रदान करने में विफल रहते हैं।

दीप्ति प्रिया मेहरोत्रा एक स्वतंत्र अध्येता हैं। उन्होंने दयालबाग शैक्षिक संस्थान, आगरा के समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान विभाग (2017-18) में एवं अतिथि संकाय के रूप में बीएलएड, लेडी श्री राम कॉलेज; एमएलएड, टीआईएसएस; तथा स्कूल ऑफ ह्यूमन स्टडीज, अम्बेडकर विश्वविद्यालय दिल्ली में पढ़ाया है। वर्तमान में, वे आईएएटी, गुरुग्राम में 'शिक्षा में दार्शनिक परिप्रेक्ष्य' पढ़ाती हैं। उन्होंने विश्वविद्यालय के साथ-साथ इग्नू, एनसीईआरटी और एनआईओएस में पाठ्यक्रम तैयार किया है। पारम्परिक ज्ञान, एकल माताएँ, शान्ति सक्रियतावाद, सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलन जैसे विषयों पर उनकी रचनाएँ व्यापक रूप से प्रकाशित हुई हैं। वे शोध, मूल्यांकन, प्रशिक्षण और सलाहकार भूमिकाओं में विविध संगठनों के साथ काम करती हैं। सम्प्रति वे नारीवादी स्ट्रीट थियेटर पर एक पुस्तक लिख रही हैं। उनसे deeptipm@gmail.com सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** कामिनी उपाध्याय

वार्तालाप की एक कक्षा

अमृता मसीह

मैं यहाँ छठी कक्षा की अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तक के एक पाठ पढ़ाने का अनुभव साझा कर रही हूँ जिसे मैंने बच्चों के दिन-प्रतिदिन के अनुभवों के साथ जोड़ने की कोशिश की। इस पाठ के माध्यम से बच्चे अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने में सक्षम हुए और उन्होंने विभिन्न प्रकार की स्थितियों में मददगार संवादों की रचना करना भी सीखा। इससे उन्हें एक-दूसरे के साथ और एक-दूसरे से मिल-जुलकर सीखने में भी सहायता मिली क्योंकि इसमें हर बच्चे ने भाग लिया और एक-दूसरे की प्रस्तुति सुनी। इसकी वजह से बच्चों को स्कूल की प्रार्थना सभा में गतिविधियाँ प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त आत्मविश्वास मिला।

मैंने पढ़ाने की शुरुआत कक्षा में बोर्ड पर विषय 'वार्तालाप' लिखकर की और फिर विद्यार्थियों से शब्द पढ़ने को कहा। उनमें से अधिकांश इस शब्द को पढ़ने में सक्षम थे क्योंकि हमने पाँचवीं कक्षा में मौखिक संवाद प्रस्तुतीकरण किए थे। मैंने उनसे पूछा कि इस शब्द का क्या अर्थ है।

बच्चों ने इस प्रश्न के उत्तर में कहा कि वार्तालाप का मतलब है बातचीत करना, चर्चा करना, व्यक्त करना, बैठक करना, सन्देश देना आदि। फिर मेरा अगला सवाल था कि आपने अपने दैनिक जीवन में किस तरह की बातचीत सुनी है?

फिर बच्चों ने अपने द्वारा सुनी गई बातचीत के अनुभव साझा करने शुरू किए और हमने एक सूची बनाई :

माँ और बच्चे के बीच

डॉक्टर और नर्स के बीच

प्रधानाध्यापक और शिक्षक के बीच

एक विद्यार्थी की दूसरे विद्यार्थी के साथ

ये, एवं ऐसे ही और भी कई अन्य उदाहरण विद्यार्थियों ने दिए।

इसके बाद मैंने अपना वास्तविक शिक्षण शुरू किया और उनसे कहा कि मैं उन्हें कुछ विषय दूँगी और उन्हें संवाद लिखने होंगे। वे अँग्रेज़ी, हिन्दी या दोनों भाषाओं में वार्तालाप प्रस्तुत कर सकते थे। वार्तालाप इनके बीच होना था :

डॉक्टर-नर्स

शिक्षक-विद्यार्थी

क्रिकेट के दो खिलाड़ी

पिता/माता-बच्चा

बस ड्राइवर-कंडक्टर

पुस्तक विक्रेता-विद्यार्थी

दो दोस्त

डाकिया और सामान्य नागरिक

दो गाँव वाले

सफ़ाई वाली दीदी और विद्यार्थी

मैंने कक्षा को दो-दो विद्यार्थियों के समूहों में विभाजित किया और उन्हें चर्चा करने और अपने 'वार्तालाप' को प्रस्तुत करने के लिए दस मिनट का समय दिया। पहला संवाद कुछ इस तरह का रहा :

विद्यार्थी : मुझे एक किताब चाहिए।

पुस्तक विक्रेता : कौन-सी किताब?

विद्यार्थी : अँग्रेज़ी की किताब।
पुस्तक विक्रेता : यह लीजिए।

विद्यार्थी : इसकी क्या क़ीमत है?

पुस्तक विक्रेता : एक सौ पचास रुपए।

विद्यार्थी : दाम थोड़े कम कीजिए।

पुस्तक विक्रेता : ठीक है, मुझे एक सौ तीस रुपए दे दो।

विद्यार्थी : धन्यवाद।

फिर तीसरे और चौथे विद्यार्थी ने आकर अपने संवाद को प्रस्तुत किया। अन्य विद्यार्थियों ने भी बारी-बारी से आकर शिक्षक और विद्यार्थी के संवाद प्रस्तुत किए और अपने कार्यकलापों से सबको हँसाया।

कुछ विद्यार्थी रह गए थे इसलिए मैंने उनसे कहा कि हम अगले दिन इस गतिविधि को जारी रखेंगे।

अगले दिन मैंने उन विद्यार्थियों के वार्तालाप संवाद के साथ कक्षा शुरू की जो पिछले दिन प्रस्तुत नहीं कर पाए थे। उनमें से कुछ ने हिन्दी में संवाद प्रस्तुत किए तो कुछ ने द्विभाषिक रूप से। इस प्रकार हर किसी को अपने संवाद प्रस्तुत करने का मौक़ा मिला।

फिर हमने चर्चा की कि किसी भाषा को जानने से विभिन्न प्रकार की बातचीत में कैसे सहायता मिलती है। तब हम अपने विचार आराम से प्रकट कर सकते हैं। बच्चों ने दैनिक जीवन के अपने अनुभव भी साझा किए। इस तरह कक्षा समाप्त हो गई। विषय के प्रति विद्यार्थियों के उत्साह और रुचि को देखते हुए मैं सोचने लगी कि इसे और अधिक रोचक तरीके से कैसे आगे बढ़ाया जाए ताकि मैं विद्यार्थियों को इस प्रक्रिया में और अधिक शामिल कर सकूँ। इस तरह उनके सीखने ने मुझे अगले दिन की योजना को और भी अलग और अन्तःक्रियात्मक बनाने के लिए प्रेरित किया। मैंने कुछ ऐसे सवालों की योजना बनाई, जिनका उपयोग वे अपने दैनिक जीवन में कर सकते हैं। प्रश्न थे :

तुम कहाँ जा रहे हो?

तुम क्या कर रहे हो?

तुम कहाँ रहते हो?

तुमने नाश्ते में क्या खाया?

क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है?

क्या तुमने अपने हाथ धो लिए?

तुमने दोपहर के खाने में क्या खाया?

क्या तुमने अपना गृहकार्य किया?

क्या मैं तुम्हारी मदद कर सकता हूँ?

तुम्हें कौन-सा खेल पसन्द है?

क्या तुम मेरे साथ खेलोगे?

तुमने रात के भोजन में क्या खाया?

मैंने पाँच-पाँच विद्यार्थियों के समूह बनाए और हर समूह को दो प्रश्न दिए। उन्हें अँग्रेज़ी में संवाद लिखने थे और एक चार्ट में लिखित रूप में प्रस्तुत करना था। समूहों में सभी तीन ग्रेड थे ताकि वे एक-दूसरे से सीख सकें।

मैंने कक्षा में प्रवेश किया और गतिविधि को समझाया तथा उन्हें एक मार्कर पेन, चार्ट पेपर और उनका विषय दिया।

मैंने बच्चों को समझाया कि ये दोनों प्रश्न एक-दूसरे के साथ किस प्रकार से जुड़े हुए हैं और मित्रों या रिश्तेदारों के नामों का प्रयोग करके उनका उपयोग संवाद लिखने के लिए कैसे किया जा सकता है। उदाहरण के लिए :

तुम्हें कौन-सा खेल पसन्द है?

क्या तुम मेरे साथ खेलोगे?

मैंने उन्हें अपने समूहों में विषयों पर चर्चा करने और फिर अपने चार्ट पर प्रस्तुत करने के लिए लगभग 15 मिनट का समय दिया। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब दो समूहों ने दिए गए समय के भीतर ही अपना कार्य समाप्त कर लिया और उनके संवाद भी अद्भुत थे। मैं एक समूह प्रस्तुति साझा करूँगी। उनके प्रश्न थे-

तुमने दोपहर के भोजन में क्या खाया?

क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है?

दो विद्यार्थियों ने अपने वार्तालाप के लिए संवाद तैयार किए।

रानी : हैलो राजू

राजू : हैलो रानी

रानी : तुम कैसे हो?

राजू : अरे, आज तुमने दोपहर के भोजन में क्या खाया था?

रानी : मैंने आलू और चपाती खाई। क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है? पेट में दर्द है क्या?

राजू : हाँ रानी, मैं अभी डॉक्टर के पास जा रहा हूँ।

रानी : अपना ख़्याल रखना! बाय राजू।

राजू : बाय, रानी।

इस तरह बच्चे संवाद की रचना करने में सक्षम हो पाए और उन्हें बोलने के साथ-साथ लेखन के भी अवसर उपलब्ध हुए। संवाद लिखने के लिए समूहों में काम करते समय बच्चे वर्तनी सुधारने में एक-दूसरे की मदद कर रहे थे। इस प्रकार समूह के प्रत्येक बच्चे ने अपने विचारों को लिखित रूप में भी व्यक्त करना सीखा। अतः वार्तालाप की कक्षा ने विद्यार्थियों को एक ऐसी भाषा में वार्तालाप करने में मदद की, जिसे बोलने और लिखने में कुछ विद्यार्थी हिचकिचाते हैं लेकिन समूहों में काम करते समय वे अपनी झिझक को भूल जाते हैं और उस भाषा में बोलते हैं। एक शिक्षक के रूप में मुझे पाठ्यपुस्तक के पाठ का उपयोग करने का मौक़ा बहुत ही चुनौतीपूर्ण और फ़ायदेमन्द लगा और मुझे भी उतना ही आनन्द आया जितना कि बच्चों को।

अमृता मसीह फरवरी 2012 से धमतरी में अज़ीम प्रेमजी स्कूल में कार्यरत हैं। उन्होंने 2000 में एक निजी स्कूल में शिक्षण कार्य शुरू किया, जहाँ उन्होंने अँग्रेज़ी और विज्ञान विषय पढ़ाया। इसके बाद उन्होंने विज्ञान की शिक्षिका के रूप में कार्य किया। उन्होंने जीवविज्ञान और शिक्षा में स्नातक तथा रसायनशास्त्र में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त की है। उनसे amrita.masih@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** ज्योति चौरड़िया

दिल्ली शिक्षा क्रान्ति : 'प्रगति' शृंखला

अंजू घावरी

जब से वर्तमान शासन ने राजनीतिक नेतृत्व सम्हाला है तब से दिल्ली की सरकारी शिक्षा प्रणाली में आमूल परिवर्तन करने का दौर बड़े पैमाने पर चल रहा है। जो पिछले पन्द्रह वर्षों से इस तंत्र (सिस्टम) से जुड़ा है, वह दिल्ली की सरकारी शिक्षा प्रणाली के पुनरुद्धार की यात्रा को ख़ूबसूरती के साथ रूपायित कर सकता है। यह यात्रा अभूतपूर्व है।

जब मैंने 2003 में एक सरकारी स्कूल में प्राथमिक शिक्षक के रूप में कार्य करना शुरू किया, तब से दिल्ली सरकार के स्कूली तंत्र को एक 'इनसाइडर' के तौर पर नज़दीक से देखा है। मैं 2008 में गणित की प्रशिक्षित स्नातक शिक्षिका बनी और वर्तमान में वाणिज्य विषय की व्याख्याता के रूप में काम करने के साथ-साथ एक मेंटर शिक्षिका के कार्य से भी जुड़ी हूँ। 'मेंटर शिक्षिका' दिल्ली सरकार का एक प्रमुख प्रोजेक्ट है जिसके अन्तर्गत शिक्षा विभाग में शैक्षिक और प्रणालीगत बदलाव लाने के लिए अतिउत्प्रेरित और प्रतिबद्ध 200 शिक्षकों की एक टीम गठित की जाती है।

तो आइए, वहाँ से शुरू करें, जब बेहद ख़राब बुनियादी ढाँचे और गन्दगी से दिल्ली के सरकारी स्कूलों को पहचाना जाता था। स्कूल बड़े दयनीय नज़र आते थे और शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों वहाँ जाना पसन्द नहीं करते थे। शिक्षा और विषय-सामग्री के निष्पादन की गुणवत्ता इस हद तक कम हो गई थी कि 2015-16 के दौरान कक्षा नौवीं में उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों की संख्या केवल 49% थी। इन समस्याओं की विकराल प्रकृति के सामने सभी हितधारक असहाय महसूस कर रहे थे। रणनीतिक रूप से अच्छे समन्वित सुधारों की एक शृंखला की तत्काल आवश्यकता थी।

नव निर्वाचित सरकार ने स्थिति को सम्हाला और कुछ ऐसे सलाहकार निकायों, जिनके पास इस क्षेत्र में समृद्ध अनुभव था, को भागीदारी के लिए आमंत्रित किया। पहले वर्ष में प्रणाली के हार्डवेयर को पुनर्जीवित करने का काम हाथ में लिया गया। नई इमारतों और कक्षाओं का निर्माण किया गया और अन्य विभिन्न भौतिक सुविधाओं जैसे स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता, शौचालय की सुविधा, हवादार कक्षा-कक्ष और प्रयोगशालाओं पर ध्यान दिया गया। दो अतिरिक्त पद बनाए गए जिसमें एक सम्पत्ति प्रबन्धक (एस्टेट मैनेजर) का पद था जो स्कूल के भवन और सम्पत्ति का ध्यान रखे और एक वेतन प्रबन्धक का पद जो प्रशासनिक कार्यों जैसे कि वेतन बिल बनाने और शिक्षकों तथा अन्य कर्मचारियों के आधिकारिक रिकॉर्ड रखने में सहायता करे। अगले वर्ष में सॉफ्टवेयर प्रणाली को अद्यतन करने की योजना बनाई गई थी। हम इस महत्त्वपूर्ण बदलाव के बारे में बात करेंगे और साथ ही यह भी देखेंगे कि स्कूलों के शैक्षिक माहौल का ध्यान किस तरह से रखा गया।

जब तक बीमारी का सही निदान न किया जाए तब तक इलाज शुरू नहीं किया जा सकता था। इसलिए पहला क़दम मूल कारणों और कमियों की सीमा का पता लगाना था। कक्षा छह और सात के विद्यार्थियों की पढ़ने की क्षमता और बुनियादी गणितीय क्षमता की जाँच करने के लिए 1000 से अधिक सरकारी स्कूलों में बेसलाइन मूल्यांकन परीक्षा आयोजित की गई। जो परिणाम सामने आए वे अत्यन्त अप्रत्याशित थे। 50% से अधिक विद्यार्थी अपनी निर्धारित पाठ्यपुस्तकों को पढ़ ही नहीं सके और उनमें बुनियादी गणितीय साक्षरता की भी कमी थी। हस्तक्षेप के पहले वर्ष में इस तरह के विद्यार्थियों के लिए विषय-सामग्री की पढ़ाई को रोक, पठन कक्षाएँ संचालित करने और बुनियादी गणितीय साक्षरता प्रदान करने का निर्णय लिया गया। यदि कोई बच्चा

पाठ्यपुस्तक भी नहीं पढ़ पा रहा है तो उससे यह अपेक्षा कैसे की जा सकती है कि वह अधिगम की प्रक्रिया का आनन्द लेगा और वांछित परिणाम लेकर आएगा? कुछ महीनों तक इन बच्चों के साथ कड़ी मेहनत की गई और उसके सकारात्मक परिणाम सामने आए।

अगला क़दम यह था कि उन्हें पाठ्यपुस्तकों की सहायता से और फैसिलटैटर के रूप में शिक्षक की भूमिका से अपने विषय सम्बन्धी ज्ञान का निर्माण करने में सक्षम बनाया जाए।

समय की माँग यह थी कि एक ऐसी सामग्री विकसित की जाए जो इन नए पाठकों के लिए सरल हो। यह महसूस किया गया कि जिन पाठ्यपुस्तकों का अभी उपयोग किया जा रहा है उनकी शैली और भाषा उचित नहीं है क्योंकि इन विद्यार्थियों ने हाल ही में पढ़ना सीखा था। इसलिए यह निर्णय लिया गया कि एक सरलीकृत संसाधन और सहायक सामग्री विकसित की जाए जिनकी भाषा सरल हो और जिनमें विषय-सामग्री के साथ दृश्य और चित्र भी दिए गए हों ताकि ये नए पाठक विषय की इन पुस्तकों में रुचि लें। इन पुस्तकों को *प्रगति* यानी विकास नाम दिया गया था। विभाग के अँग्रेज़ी, हिन्दी और गणित के विषय विशेषज्ञों के साथ मिलकर पुस्तकों की पहली शृंखला विकसित की गई थी। पुस्तक के बारे में शिक्षकों की ओर से मिश्रित प्रतिक्रिया प्राप्त हुई। प्रमुख आलोचना यह थी कि इन पुस्तकों में सन्दर्भ की कमी थी और शिक्षकों ने सोचा कि जो लोग विद्यार्थियों के साथ काम नहीं करते हैं, उनकी तुलना में वे स्वयं एक बेहतर सामग्री विकसित कर सकते हैं क्योंकि वे विद्यार्थियों के सीखने के अन्तराल को ठीक से जानते हैं।

विभाग ने इस फीडबैक को सकारात्मक तरीक़े से लिया और यह निर्णय लिया कि शिक्षकों द्वारा स्वयं एक और शृंखला विकसित की जाए। यहाँ विभाग के प्रयास सराहनीय हैं क्योंकि इसने ज़मीनी स्तर पर काम करने वाले हितधारकों के फ़ीडबैक पर ध्यान दिया और हज़ारों शिक्षकों को साथ जोड़ने के विशाल कार्य को करने का निर्णय लिया।

यह समय सभी शिक्षकों के साथ सहयोग करने और एक ऐसी प्रणाली बनाने का था जिसमें नए पाठकों को ग्रेड के अनुसार अधिगम-परिणामों को प्राप्त करने में मदद दी जा सके। 2016-17 की गर्मियों की छुट्टियों के दौरान सभी शिक्षकों के लिए एक बड़े स्तर की कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला को विषय-वार आयोजित किया गया जहाँ समान-विषय के सभी शिक्षकों को एक समूह में बैठकर रणनीतियों को डिज़ाइन करने के लिए कहा गया। शिक्षकों का एक सामान्य फ़ीडबैक यह था कि एनसीईआरटी और दिल्ली ब्यूरो ऑफ़ टेक्स्टबुक्स द्वारा प्रदान की गई पाठ्यपुस्तकों को विद्यार्थियों के लिए फिर से प्रासंगिक किया जाना चाहिए। शिक्षकों ने महसूस किया कि विषय-सामग्री के परिवेश, पुस्तक की भाषा और पाठ के अन्त में दिए गए प्रश्नों को दिल्ली के सन्दर्भ में सरल और सुबोध तरीक़े से फिर से लिखना चाहिए। शिक्षकों ने सर्वसम्मति से महसूस किया कि सरकारी स्कूल समाज के सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित तबक़े के लिए है जहाँ के अधिकतर बच्चों के घरों में अधिगम के लिए आवश्यक अनुकूल वातावरण नहीं होता। बच्चों को एक सहायक पुस्तक देने का निर्णय लिया गया जो उनके विशिष्ट अधिगम रिक्तियों और ज़रूरतों को पूरा कर सके। साथ ही ऐसी प्रासंगिक सामग्री कम समय और प्रयास के साथ कक्षा में सन्दर्भ विकसित करने में शिक्षकों की सहायता करेगी। इसका कारण यह था कि सहायक सामग्री में जो भी उदाहरण और परिस्थितियाँ पहले से मौजूद थीं, वे विषय-सामग्री को बच्चों तक पहुँचाने में शिक्षकों की सहायता करेंगी।

हज़ारों शिक्षकों ने एक साथ बैठकर विषय-सामग्री, वर्कशीट्स और प्रेज़न्टेशन बनाए जिन्हें सम्पादित करके सहायक सामग्री के रूप में एक साथ रखा गया। सम्भवत: ऐसा पहली बार हुआ कि शिक्षकों को किसी ऐसे बाहरी व्यक्ति द्वारा तैयार की गई पुस्तक नहीं दी गई, जिसे सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने और विद्यार्थियों के सीखने के तरीक़े का ज्ञान न हो। वास्तव में, शिक्षकों ने स्वयं से अपनी सामग्री तैयार की जो पारम्परिक तरीक़ों का पालन करने के बजाय रचनात्मक शिक्षाशास्त्र पर आधारित थी।

नतीजतन, इन सन्दर्भपरक पुस्तकों ने कक्षा के संवाद को नई गति दी क्योंकि शिक्षकों ने अपने विषय समूहों के भीतर सक्रिय रूप से अपने विषय के प्रत्येक टॉपिक पर विचार-मन्थन किया। यह प्रक्रिया दो तरह से फ़ायदेमन्द साबित हुई। पहला, इसने विद्यार्थियों को उनके अधिगम की ज़रूरतों के अनुसार सामग्री दी। दूसरा, इसने शिक्षकों की पेशेवर क्षमता और शैक्षणिक प्रवृत्ति में मदद की क्योंकि उन्होंने अपने-अपने विषय समूहों में बातचीत की जिसके कारण किसी टॉपिक को सर्वोत्तम रूप से पढ़ाने पर काफ़ी चर्चा और बहस हुई।

इन पुस्तकों को तुरन्त सफलता मिली। चूँकि शिक्षक ख़ुद इस प्रक्रिया में जुड़े हुए थे इसलिए उनके मन में भी पुस्तकों के प्रति विभाग जितना ही स्वामित्व का भाव था। अपने काम को एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित देखकर शिक्षक बहुत प्रफुल्लित हुए। अपनेपन और स्वामित्व की इस भावना ने कक्षा के कार्यकलापों में उनके उपयोग को बहुत प्रोत्साहन दिया। इसके अलावा यह सामग्री विद्यार्थियों के भी अनुकूल थी चूँकि यह उन्हीं के शिक्षकों द्वारा विकसित की गई थी। विद्यार्थियों ने अपनी गति से और अपनी आवश्यकताओं के अनुसार अवधारणाओं को सीखा। इसके परिणाम वार्षिक मूल्यांकन में देखने को मिले। जिन विद्यार्थियों को पहले नज़रअन्दाज़ कर उन पर कमज़ोर होने का ठप्पा लगा दिया गया था, वे अब अपनी पाठ्यपुस्तकों को पढ़ पा रहे थे और अवधारणाओं को अपने शब्दों में समझा पा रहे थे। इस समूह के लिए सामग्री को सरल बनाने के अलावा पाठ्यक्रम भी कम कर दिया गया था। यह महसूस किया गया कि इस नव-साक्षर समूह के लिए अवधारणाओं की मात्रा को कम करना ज़रूरी था ताकि पिछले वर्षों में उनके सीखने में जो कमी हुई है उसकी भरपाई के लिए उन्हें उत्तरोत्तर सीखने में मदद मिल सके। वर्तमान आँकड़ों के अनुसार पढ़ने में कठिनाई होने वाले बच्चों का प्रतिशत अब काफ़ी कम हो गया। इस समूह में विशेष बच्चे, सीखने में कठिनाई अनुभव करने वाले और लम्बे समय से अनुपस्थित रहने वाले बच्चे शामिल हैं।

हालाँकि कक्षा-शिक्षण को बेहतर बनाने और शिक्षण-अधिगम की प्रस्तुति को उपदेशात्मक से रचनात्मक में बदलने के लिए बहुत कुछ किया गया है, किन्तु सरकारी स्कूलों में सीखने की गुणवत्ता में सुधार के लिए अभी भी बहुत कुछ करना बाक़ी है। छात्र-शिक्षक अनुपात का अधिक होना और स्कूल के प्रशासनिक कार्यों जैसे शुल्क संग्रहण, प्रशासनिक रिकॉर्ड बनाए रखना, मध्याह्न भोजन का वितरण व निरीक्षण करना आदि की व्यस्तता में शिक्षकों के शिक्षण का क़ीमती समय चला जाता है और उनकी शारीरिक और मानसिक ऊर्जा पर भी असर होता है। इसके अतिरिक्त यह भी सत्य है कि स्कूल के प्रधानाध्यापक भी अधिकतर प्रशासनिक अधिकारियों के रूप में काम करते हैं और उनमें आवश्यक शैक्षिक नेतृत्व की कमी होती है जिसकी वजह से स्कूल लघु प्रशासनिक इकाइयाँ नज़र आने लगते हैं न कि एक प्रगतिशील अधिगम संगठन।

वर्तमान सरकार ने सरकारी क्षेत्र में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए अथक परिश्रम करने के साथ शिक्षा के क्षेत्र में समृद्ध अनुभव रखने वाले विभिन्न ग़ैर-सरकारी निकायों को सलाहकार के रूप में जोड़ा है। ऐसा ही एक संगठन है- क्रिएटनेट (CREATNET) जो स्कूल नेतृत्व विकसित करने के लिए प्रधानाचार्यों और शिक्षकों के साथ मिलकर काम करता है। हमें उम्मीद है कि निरन्तर प्रयास और ईमानदार इच्छा से प्रचालन-तंत्र व शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार कर हम हर सरकारी स्कूल को शिक्षण संगठन के रूप में देख पाएँगे।

अंजू घावरी शिक्षा निदेशालय, दिल्ली के तहत एक सरकारी स्कूल में स्नातकोत्तर शिक्षिका हैं। उनके पास अध्यापन का 15 वर्षों का अनुभव है और वे मेंटर शिक्षिका भी हैं जो अन्य शिक्षकों की सहायता करती हैं। उन्हें नेतृत्व और गणित कार्यक्रमों का वैश्विक अनुभव प्राप्त है। उनसे anjughavri@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** ज्योति चौरड़िया

पाठ्यपुस्तक की मदद से आत्मकथा पर काम

छोटे लाल

मैंने कक्षा-6 के बच्चों के साथ एससीईआरटी की पाठ्यपुस्तक के *'चम्बल की आत्मकथा'* नामक पाठ पर काम किया।

पाठ के शीर्षक के अनुरूप मैंने कुछ सवालों से शुरुआत की – आत्मकथा का क्या अर्थ है? इसे कौन लिखता है? आत्मकथा लिखने के पीछे लेखक का मन्तव्य क्या होता है? बच्चों के साथ उपरोक्त प्रश्नों पर विमर्श करने के दौरान यह बात उभरकर आई कि व्यक्ति विशेष के जीवन में घटित सुखद और दुखद घटनाओं व संघर्षों का स्वयं द्वारा किया गया वर्णन आत्मकथा है। इसे लिखने के पीछे उद्देश्य यह होता है कि आने वाली पीढ़ियाँ व्यक्ति के जीवन-संघर्ष को समझ पाएँ साथ ही उन सभी पहलुओं का विवेचन करते हुए स्वयं के स्तर पर यह समझ बना पाएँ कि किन परिस्थितियों में कैसा व्यवहार करना है, किस प्रकार की रणनीतियाँ सफलता व असफलता का कारण बनती हैं। इस विमर्श के बाद बच्चों के साथ यह बातचीत की गई कि आप अपने स्वयं के परिवारजनों के अतीत पर बातचीत करके उसे लिखकर लाएँ। लगभग दो-तिहाई बच्चे अपने माता-पिता, दादा-दादी के जीवन में घटी हुई घटनाओं को एक पृष्ठ में लिखकर लाए। अगले दिन बच्चों की लिखित सामग्री पर विमर्श किया गया। इस विमर्श में इस मुद्दे को केन्द्र में रखा गया कि किसी व्यक्ति के जीवन के सभी पहलुओं को किस तरह से पठनीय स्वरूप में लिखा जा सकता है। साथ ही उन्हें इस बात का भी एहसास हुआ कि किसी व्यक्ति विशेष के अनुभव किस तरह से प्रेरणा व सबक़ लेने का ज़रिया बन सकते हैं।

इसके पश्चात *चम्बल की आत्मकथा* पाठ को पढ़ा गया। इस पाठ में मुख्य रूप से चम्बल का वर्तमान स्वरूप व इसका पर्यावरण एवं समाज के लिए योगदान का वर्णन है। ख़ासतौर पर अलग-अलग धाराओं के मिलने के बाद चम्बल की छटा का खूबसूरत विवेचन किया गया है। इसके साथ ही वर्तमान में हो रहे अन्धाधुन्ध प्रदूषण से चम्बल के प्राकृतिक स्वरूप पर पड़ रहे दुष्प्रभावों का वर्णन भी है जो कि वर्तमान पीढ़ी के लिए एक चेतावनी है। इसके साथ ही सिंचाई, बिजली बनाने, भूजल संवर्धन करने के साथ-साथ अपने आस-पास के पर्यावरण को समृद्ध करने में चम्बल के योगदान का उल्लेख किया गया है। पाठ के अन्त में चम्बल नदी किस तरह से अपने अस्तित्व को बचाने हेतु संघर्षरत है इसका विशेष वर्णन किया गया है।

इस पाठ के माध्यम से मुख्य रूप से तीन पक्षों को उजागर किया गया है। प्रथम तो यह है कि कोई व्यक्ति किस तरह से अपना अस्तित्व कायम करता है। यानी स्वयं को विश्वपटल पर स्थापित करने की प्रत्येक व्यक्ति की कहानी अपने आप में निराली होती है।

दूसरा पक्ष है – व्यक्ति विशेष का इस दुनिया की बेहतरी में क्या योगदान है। यानी किस तरह से कोई व्यक्ति स्वयं को सवंर्धित करते हुए परहित के लिए जीता है।

तीसरा पक्ष, उसके जीवन काल के संघर्षों का है जो उसके परिवेश में उत्पन्न होते हैं। इस तरह से इस पाठ पर काम करते हुए आत्मकथा पर स्पष्टता बनाई गई।

इसके पश्चात बच्चों को स्वयं के अतीत के बारे में सोचने और अपनी यादों को व्यवस्थित करने हेतु कहा गया। साथ ही उन्हें पुस्तकालय से किसी की 'आत्मकथा' पढ़ने के लिए कहा गया। हरिवंश राय बच्चन की पुस्तक 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' के कुछ अंश बच्चों के साथ साझा किए गए। इस पूरे विवेचन में यह बात स्पष्ट रूप से उभरकर आती है कि पाठ्यपुस्तक शिक्षक को बस एक आधार

देती है या यूँ कहें कि पाठ्यपुस्तकों को सिर्फ़ एक मार्गदर्शिका के रूप में ही देखा जा सकता है। केवल पाठ्यपुस्तकों के पाठों पर केन्द्रित होकर पढ़ाना, छात्र-छात्राओं को पाठों के वर्णन की सीमा में सीमित करना है।

पाठ-केन्द्रित शिक्षण-प्रक्रिया में न केवल पाठ-विशेष केन्द्रीय भाव विलुप्त होता नज़र आता है बल्कि शिक्षक की भूमिका भी सीमित होती नज़र आती है। जब हम सिर्फ़ विषयवस्तु केन्द्रित अध्यापन करवाते हैं तो विषयवस्तु के इतर के उदाहरण शामिल नहीं कर पाते और न ही बच्चे के परिवेश के अनुभवों को जगह दे पाते हैं। ऐसी स्थिति में हम सिर्फ़ सूचनाओं का ही सम्प्रेषण कर पाते हैं। शिक्षक के रूप में हम विषयवस्तु की समझ को बच्चों की परिवेशीय समझ के साथ सन्दर्भित नहीं कर पाते। इसके फलस्वरूप बच्चों द्वारा स्वतंत्र रूप से ज्ञान-निर्माण करने की प्रक्रिया अवरुद्ध हो जाती है जो सीखने की प्रक्रिया का अहम हिस्सा है। ऐसा करते हुए शिक्षक अपनी भूमिका को न केवल सीमित करता है बल्कि पूरक पठन-सामग्री व विमर्श के अनुभव से भी विद्यार्थियों को वंचित रखता है।

इसके विपरीत, इस पाठ पर काम की शुरुआत बच्चों के जीवन सन्दर्भ को समेटते हुए की गई जिसकी पैरवी राष्ट्रीय पाठयचर्या की रूपरेखा 2005 करती है। साथ ही उन्हें अपने अतीत में झाँकने का मौक़ा भी दिया गया जिसके माध्यम से बच्चे अपने पूर्व-अनुभवों पर भी दृष्टिपात कर पाए। इसके अलावा

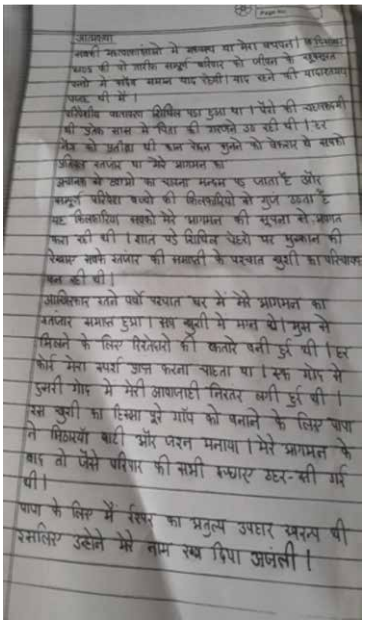

पूरक पठन-सामग्री का एक्सपोज़र भी बच्चों में स्वाध्याय की प्रेरणा जगाता है जो इस प्रक्रिया का अहम हिस्सा रही। आत्मकथा पर काम करने के इस अनुभव से बच्चों को स्वयं से जुड़ने के साथ-साथ प्रासंगिक पठन-सामग्री को जानने का अवसर भी प्राप्त हुआ।

बच्चों द्वारा लिखी गई आत्मकथा का एक उदाहरण यहाँ दिया गया है। अंजलि के पिता ने उसकी पैदाइश के वक़्त के अपने मनोभावों को उससे साझा किया। अपने पिता की यादों को आधार बनाकर अंजलि ने अपनी आत्मकथा को लिखा।

छोटे लाल अगस्त, 2011 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ कार्यरत हैं। इसके पहले उन्होंने *बोध शिक्षा समिति*, अलवर में समन्वयक व फैसिलिटेटर के बतौर 11 वर्षों तक कार्य किया। वहाँ पर उन्होंने हिन्दी व गणित के रिसोर्स पर्सन की भूमिका में भी काम किया। साथ ही 15 छोटे स्कूलों को 'अच्छे स्कूल' के बतौर स्थापित करने के लिए उनके शिक्षकों, विद्यार्थियों और समुदाय के साथ गहन काम किया। इससे पहले उन्होंने राजस्थान सरकार द्वारा, मुख्यतः ग्रामीण इलाकों में लागू किए गए एक प्रयोग, *लोक जुम्बिश* प्रोजेक्ट में भी कार्य किया है। उनसे chhote.lal@azimpremjifounation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

कॉपी एडिटर : स्वाति भदौरिया

एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों के साथ काम करने का अनुभव

ज्योत्स्ना लाल और हैदर मेहदी रिज़वी

पृष्ठभूमि

यह लेख दिल्ली की हज़रत निज़ामुद्दीन बस्ती के प्राथमिक नगरपालिका स्कूल में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने से सम्बन्धित एक परियोजना के बारे में है।

अपनी धरोहर के संरक्षण को अकसर सामाजिक-आर्थिक विकास से पृथक करके देखा जाता है। निज़ामुद्दीन शहरी नवीकरण पहल[1] संरक्षण और प्रदर्शन पर पुनर्विचार करने का एक उदाहरण है कि धरोहर का संरक्षण सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए एक महत्त्वपूर्ण क़दम है।

दिल्ली के निज़ामुद्दीन क्षेत्र में स्थित – हुमायूँ का मक़बरा लगातार विकसित होता रहा है। यह 13वीं शताब्दी से बसा हुआ है। पिछले 700 सालों में प्रतिष्ठित सूफ़ी सन्त हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया की दरगाह के निकट कई विपुल स्मारकीय मक़बरों का निर्माण हुआ। 2007 में सार्वजनिक भागीदार के रूप में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई), केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग (सीपीडब्ल्यूडी), दक्षिणी दिल्ली नगर निगम (एसडीएमसी) और निजी भागीदार के रूप में आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन (एकेएफ़) तथा आगा ख़ान ट्रस्ट फ़ॉर कल्चर (ऐकेटीसी) के बीच सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी) के तहत एक समझौता/एमओयू दस्तावेज़ तैयार हुआ। उसके बाद आगा ख़ान ट्रस्ट फ़ॉर कल्चर ने 224 एकड़ में फैली एक विशाल शहरी नवीनीकरण पहल की शुरुआत की। इस परियोजना का उद्देश्य निर्मित शहरी धरोहर और पर्यावरण विकास का संरक्षण करते हुए, निज़ामुद्दीन बस्ती में रहने वाले लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना था।

2008 से इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए एक बहु-विषयक टीम स्थानीय समुदायों के साथ काम कर रही है। एक नब्बे एकड़ का नगर पार्क और क़रीब पचास स्मारकों के संरक्षण का काम करने के दौरान परियोजना का मूल उद्देश्य यह रहा है कि किस तरह से समुदाय की सांस्कृतिक सम्पत्ति के लाभ का इस्तेमाल उन्हीं के फ़ायदे के लिए किया जा सकता है। जहाँ जनसंख्या घनत्व 70,000 व्यक्ति/वर्ग किमी है, ऐसी कठिन परिस्थितियों में भी यह परियोजना समुदाय के स्वास्थ्य, शिक्षा, आजीविका, खुले एवं हरे-भरे स्थान, स्वच्छता, ठोस कचरे का प्रबन्धन और सांस्कृतिक पुनरुद्धार की ज़रूरतों को सम्बोधित करती है।

आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन 2008 से निज़ामुद्दीन में एसडीएमसी स्कूल के सुधार कार्यक्रम में लगा हुआ है। परिणामस्वरूप स्कूल के बुनियादी ढाँचे में सुधार हुआ है, जिसमें भवन का अधिगम सामग्री के रूप में उपयोग करना, बच्चों के शैक्षिक स्तर में सुधार आना, एसडीएमसी और एकेएफ द्वारा नियुक्त सामुदायिक शिक्षकों की क्षमता में वृद्धि होना और एक सक्रिय स्कूल प्रबन्धन समिति (एसएमसी) का बनना आदि शामिल हैं।

निज़ामुद्दीन एसडीएमसी स्कूल के बच्चों की पृष्ठभूमि

निज़ामुद्दीन और अन्य जगहों पर एसडीएमसी स्कूलों में दाख़िला लेने वाले अधिकांश बच्चे सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित परिवारों से आते हैं। उनके माता-पिता असंगठित क्षेत्रों (ऐसे क्षेत्र जहाँ रोज़गार कभी भी नियमित नहीं होता) में घरेलू नौकर, दिहाड़ी मज़दूरी, कचरा बीनने, रिक्शा चलाने या भीख माँगने जैसे काम करते हैं। इसके अलावा उनमें से कई बच्चे तो पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी हैं। कुछ बच्चे ख़ुद भी कबाड़ इकट्ठा करके या भीख माँगकर पारिवारिक आय में भी योगदान देते हैं।

1. अधिक विवरण के लिए www.nizamuddinrenewal.org देखें।

संक्षेप में, एसडीएमसी स्कूल में पढ़ने वाले बच्चे वे हैं जिन्हें किसी अन्य स्कूल में प्रवेश नहीं मिल पाया है या जिनके माता-पिता किसी अन्य स्कूल का ख़र्चा नहीं उठा सकते हैं या जिन्होंने स्कूलों में प्रवेश के लिए नियत आयु सीमा पार कर ली है।

2007 में स्कूल की स्थिति

स्कूल में प्रवेश करते ही स्कूल की भौतिक और शैक्षिक स्थिति स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी। यह बात साफ़ नज़र आ रही थी कि इन दोनों समस्याओं से तत्काल निपटना ज़रूरी था। आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन ने किसी भी कार्य योजना पर निर्णय लेने से पहले मौजूदा स्थिति का अध्ययन करने और समुदाय के साथ जुड़ने का फ़ैसला किया।

विद्यालय की मूलभूत संरचना में सुधार

स्कूल भवन और इसके बुनियादी ढाँचे की स्थिति हर प्रकार से ख़राब थी। सबसे पहले तो बच्चों और समुदाय के साथ आयोजित एक कार्यशाला में चर्चा की गई जिसका विषय था कि वे अपने स्कूल को कैसा देखना चाहते हैं। उनसे मिले सुझावों के आधार पर एक सुधार योजना बनाई गई। इसके अलावा स्कूल के भवन का उपयोग अधिगम-सामग्री के रूप में किया गया था और इसे पास के पार्क से भी जोड़ा गया था, जिसे अतिक्रमण से आज़ाद कराना और सुन्दर बनाना था।

भवन का उपयोग अधिगम-सामग्री के रूप में करने के लिए कक्षा और गलियारों में अलग-अलग तरह के बोर्ड लगाए गए, जैसे डॉट बोर्ड, ग्रिड बोर्ड, वाक्य बोर्ड, कैलेण्डर, मापने के लिए पैमाने आदि। कक्षा-कक्ष के दरवाज़े खुलते समय कोण बनाते थे। खिड़कियों और सीढ़ियों पर लगी जालियों में अबेकस और सकल और सूक्ष्म मोटर कौशलों में सुधार के लिए डिज़ाइन बनाए गए। सुरक्षा मानदण्डों का ध्यान रखते हुए सीढ़ियों की चौड़ाई बढ़ाने और प्रत्येक कक्षा में एक और दरवाज़ा लगाने का कार्य पूरा किया गया।

स्कूल की शैक्षिक स्थिति

निज़ामुद्दीन स्कूल में शैक्षिक स्थिति को समझने के लिए आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन ने दिल्ली विश्वविद्यालय के केन्द्रीय शिक्षा संस्थान (सीआईई) को इस प्रक्रिया में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया। इसने एक बेसलाइन के रूप में कार्य किया और हमें ऐसी रणनीति विकसित करने में सक्षम बनाया जिससे बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाया जा सके और स्कूल तथा समुदाय के बीच अधिक-से-अधिक जुड़ाव बनाया जा सके ताकि स्कूल समुदाय के प्रति अधिक जवाबदेह बन सके।

बेसलाइन अध्ययन के द्वारा बच्चों के शैक्षणिक स्तर का भी मूल्यांकन किया गया। बच्चों के शैक्षिक स्तर से हमें पता चला कि भाषा और गणित विषय पर गहनता से काम करने की ज़रूरत है। इसके अलावा कक्षा की प्रक्रियाएँ पूरी तरह से पाठ्यपुस्तकों से पाठ्यक्रम पूरा करवाने पर ही केन्द्रित थीं, ऐसी प्रक्रियाएँ और अभ्यास नहीं के बराबर थे जो कक्षा में सीखने का माहौल तैयार करने में योगदान कर सकें।

विद्यालय में शैक्षिक सुधार

इसमें एक प्रमुख हस्तक्षेप यह था कि कक्षा में पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करने के तरीक़े में परिवर्तन लाने के लिए उचित रणनीति का प्रयोग किया गया। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 की सिफ़ारिशों के बाद 2010 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा नई पाठ्यपुस्तकें प्रकाशित की गईं। नई पाठ्यपुस्तकें गतिविधियों पर आधारित हैं और अनुभव आधारित अधिगम पर केन्द्रित हैं। इसके अलावा इन पाठ्यपुस्तकों ने कक्षा में सीखी हुई बातों के अपने जीवन में अनुप्रयोग करने की प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहित किया। लेकिन बच्चों को इस बदले हुए दृष्टिकोण का लाभ नहीं मिल पाया।

कक्षाओं के अवलोकन और शिक्षकों के साथ विचार-विमर्श से पता चला कि बच्चों को पढ़ना सीखने में बहुत मुश्किलें आ रही थीं जिससे आगे की सभी प्रक्रियाएँ प्रभावित हो रही थीं। चौथी और पाँचवीं कक्षा का भी यही हाल था। शिक्षकों ने इसके कई कारण बताए। जैसे घर का माहौल और पाठ्यपुस्तकों में बदलाव आदि। कई सरकारी शिक्षक मानते थे (और कुछ अभी भी मानते हैं) कि

वर्णमाला सीखे बिना पढ़ना सीखना असम्भव है। बातचीत से पता चला कि नई पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करने या नए दृष्टिकोण के बारे में शिक्षकों को अब तक किसी भी तरह का उन्मुखीकरण या किसी भी तरह का सेवाकालीन प्रशिक्षण नहीं मिला था। ज़रूरत इस बात की थी कि पाठ्यपुस्तकों को लेकर दृष्टिकोण और कार्यप्रणाली में जो परिवर्तन हुआ है, उस पर चर्चा की जाए और साथ ही इससे जुड़ी रणनीति तैयार करने में शिक्षकों की मदद की जाए।

बाद के प्रशिक्षण कक्षा में नई पाठ्यपुस्तकों के उपयोग के विषय पर तैयार किए गए। सरकारी स्कूल के निरीक्षक से जुड़ी एक घटना यह दिखाती है कि पढ़ना सीखने के बारे में लोगों के मन में किस तरह के विचार गहराई से बैठे हुए हैं। प्रशिक्षण के दौरान हमने जिन संसाधनों का उपयोग किया था, *पढ़ने की समझ* उनमें से एक था जिसे एनसीईआरटी के *रीडिंग सेल* द्वारा प्रकाशित किया गया था। चर्चा उन तरीक़ों पर हो रही थी जिनके द्वारा बच्चे पढ़ना सीखते हैं और पढ़ना सीखने के दौरान किस प्रकार की चुनौतियाँ उनके सामने आती हैं। तभी स्कूल निरीक्षक महोदय ने कक्षा में प्रवेश किया, एक नज़र डाली और कहा, "आप यह सब क्यों सिखा रहे हैं? शिक्षकों को यह बताइए कि क, ख, ग कैसे पढ़ाया जाए" और बिना यह जानने का इन्तज़ार किए कि भाषा को कैसे पढ़ाया जा सकता है और एनसीएफ़ में इसके क्या दिशा-निर्देश दिए गए हैं, कक्षा से बाहर चले गए।

लेकिन आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन ने अपने दृष्टिकोण को जारी रखते हुए पाठ्यपुस्तकों को उसी भावना से उपयोग करने में शिक्षकों की मदद की जिस भावना के साथ उन्हें लिखा गया था। इस दृष्टिकोण को जारी रखने के परिणाम बच्चों की शैक्षिक उपलब्धियों में दिखने शुरू हो गए। जब एकेएफ़ द्वारा नियुक्त सामुदायिक शिक्षक और सरकारी शिक्षक संयुक्त रूप से योजना बनाने लगे और एक साथ काम करने लगे तो कक्षा का माहौल बदलने लगा। आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन ने स्कूल की परीक्षाओं से अलग अपना वार्षिक मूल्यांकन आयोजित किया जिसमें बच्चों के प्रदर्शन में उल्लेखनीय सुधार पाया गया। 2013 में हुए मूल्यांकन से पता चला था कि पाँचवीं कक्षा में केवल 26% बच्चे पाठ पढ़ पाते थे और उस पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दे पाते थे। 2017 तक यह आँकड़ा बढ़कर 71% हो गया।

कक्षा की वीडियो रिकॉर्डिंग का उपयोग करना एक प्रभावी कार्यप्रणाली के रूप में उभरा। कार्यशाला के दौरान एक सत्र रिकॉर्ड किया गया जिसमें शिक्षक कक्षा में एक पूर्व-निर्धारित पाठ योजना के आधार पर पाठ पढ़ा रहे थे। सामूहिक रूप से इस पाठ की रिकॉर्डिंग का विश्लेषण किया गया और यह जानने की कोशिश की गई कि कौन-सी रणनीतियाँ कारगर थीं और किन रणनीतियों में सुधार करने की ज़रूरत थी। शिक्षकों की बेहतरी एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम को डिज़ाइन करने के लिए यह रणनीति काफ़ी कारगर साबित हुई। एनसीईआरटी की संसाधन पुस्तकें जैसे 'कैसे पढ़ाएँ रिमझिम' (रिमझिम एक पाठ्यपुस्तक है) काफ़ी प्रभावी साबित हुई।

समुदाय के साथ जुड़ाव

आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन के स्कूल सुधार कार्यक्रम में यह तीसरा बड़ा हस्तक्षेप है। निशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (आरटीई) के अनुसार स्कूल प्रबन्धन समिति (एसएमसी) का गठन अनिवार्य है। प्रारम्भिक प्रतिरोध के बाद अब स्कूल प्रबन्धन समिति बनाई गई है। यह समिति काफ़ी सक्षम होती जा रही है और नियमित रूप से स्कूल के कामकाज पर नज़र रखती है और उसकी रिपोर्ट स्कूल निरीक्षक से लेकर निदेशक तक को भेजती है और एक प्रति एसडीएमसी काउंसलर को भी भेजी जाती है।

इसके अलावा आगा ख़ान फ़ाउण्डेशन द्वारा नियमित रूप से कार्यक्रमों और बैठकों का आयोजन किया जाता है जिनके माध्यम से समुदाय को स्कूल के साथ जुड़ने के कई अवसर मिलते हैं।

कुछ विचारणीय बिन्दु

नई पाठ्यपुस्तकों को शुरू करने का तरीक़ा क्या होना चाहिए, विशेष रूप से उन पाठ्यपुस्तकों को जो पूरी तरह से नए दृष्टिकोण पर आधारित हों

और उनसे अपेक्षा यह हो कि इस दृष्टिकोण को अनुकूलित किया जाए?

शिक्षा के क्षेत्र में जो नई बातें विकसित हो रही हैं उन्हें शिक्षकों तक पहुँचाने के लिए अकादमिक सहायता तंत्र क्या है, विशेष रूप से अगर समर्थन और अनुश्रवण का प्राथमिक स्रोत, यानी विद्यालय के निरीक्षक, इस नए दृष्टिकोण से सहमत न हों तो?

ज्योत्स्ना लाल सामाजिक विकास के क्षेत्र में 30 वर्षों से कार्यरत हैं। वर्तमान में वे आगा ख़ान विकास नेटवर्क के निज़ामुद्दीन शहरी नवीकरण पहल में कार्यक्रम निदेशक हैं। उनसे jyotsna.lall@akdn.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हैदर मेहदी रिज़वी आगा ख़ान विकास नेटवर्क के निज़ामुद्दीन शहरी नवीकरण पहल के लिए शिक्षा कार्यक्रम के प्रमुख हैं। उनसे hydermehdi.rizvi@akdn.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** सात्विका ओहरी **कॉपी एडिटर :** अंजना राव

ग्रामीण राजस्थान में प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थियों को प्राथमिक स्तर की अँग्रेज़ी पढ़ाना

एकता धनकर, ज्योत्स्ना लाल, शिप्रा सुनेजा, वर्धना पुरी

माधोपुर हेज़ अ फॉरेस्ट ई, आई, ई, आई, ओ; अ टाइगर हियर...अ टाइगर देयर...टाइगर, टाइगर एवरीव्हेयर ।

अरे! घबराइए मत! रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान में भी बाघों का दिखना इतनी आम बात नहीं है।

यह गाना तो उदय कम्युनिटी स्कूल की एक कक्षा में बच्चे गा रहे हैं, जहाँ वे जानवरों और पक्षियों के विषय पर पढ़ाई कर रहे हैं। यह कविता अँग्रेज़ी के एक लोकप्रिय गीत *ओल्ड मैकडोनाल्ड हेड ए फ़ार्म* की धुन पर गाई जा रही है, बस जगह के हिसाब से थोड़ी बदल दी गई है। ये बच्चे पूर्वी राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले में रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान के आस-पास के गाँवों में रहते हैं।

एक अन्य महीने में सर्दियों में दोपहर की धूप के ढलने के साथ कक्षा ज़ोर-ज़ोर से एक कहानी पढ़ रही है, लेकिन किसी निर्धारित पाठ्यपुस्तक से नहीं।

"इट वाज़ द मंथ ऑफ़ दिसम्बर। अनवर एंजॉय्ड प्लेइंग इन द सन विद् हिज़ फ्रेंड्स। ही लाइक्ड टु वॉक इन द मस्टर्ड फील्ड्स।"

यह कहानी बच्चों के पढ़ने के स्तर, सन्दर्भ और अनुभवों को ध्यान में रखकर लिखी गई थी। एक मानक पाठ्यपुस्तक में ऐसी कहानी मिलना मुश्किल तो है, लेकिन नामुमकिन नहीं। बच्चे एक अपरिचित भाषा में एक परिचित दृश्य के बारे में सुन रहे हैं। मौसम के साथ इस बदलते नज़ारे से बच्चे अच्छी तरह से परिचित हैं क्योंकि उनके गाँवों में ज़्यादातर किसान सर्दियों में सरसों उगाते हैं। चूँकि ज़्यादातर बच्चे या तो इन खेतों में खेलते हैं या अपने परिवारों की मदद करते हैं, यह कहानी उनके अनुभवों से जुड़ी हुई है।

यह कविता और कहानी उन पाठ्यों (टेक्स्ट्स) का एक उदाहरण है जिन्हें विकसित करने की ज़रूरत है क्योंकि कक्षा की निर्धारित पाठ्यपुस्तकें बच्चों के सीखने की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए काफ़ी नहीं हैं।

पृष्ठभूमि

ग्रामीण शिक्षा केन्द्र (जीएसके)[1] को समुदाय के शिक्षा सम्बन्धी सरोकारों को दूर करने के लिए शुरू किया गया था। यह रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान के आस-पास के सत्तर से अधिक गाँवों में कार्य कर रहा है। जीएसके राजस्थान सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त तीन उदय सामुदायिक स्कूल चलाता है और सत्तर सरकारी स्कूलों के साथ काम करता है। यह सभी स्कूल सरकारी पाठ्यक्रम के अनुसार चलते हैं। यह संगठन इस बात में विश्वास करता है कि समुदाय को सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा का निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं होना चाहिए और उन्हें सरकार से और अधिक तथा बेहतर सेवाओं की माँग करने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। तीन स्कूलों के माध्यम से हम व्यापक समुदाय तक पहुँच पाते हैं और शिक्षा को समझने के तरीक़े में बदलाव लाने का प्रयत्न करते हैं।

अँग्रेज़ी पर विशेष रूप से ध्यान देने की ज़रूरत तब पैदा हुई जब यह देखा गया कि विद्यार्थी अन्य सभी विषयों में तो लगातार अच्छा कर रहे थे लेकिन सिर्फ़ अँग्रेज़ी में ही उन्हें मुश्किल हो रही थी।

[1] *www.http://graminshiksha.org.in/*

शिक्षकों को भी अँग्रेज़ी भाषा सिखाने में दिक़्क़त हो रही थी। पहली पीढ़ी के विद्यार्थियों की अँग्रेज़ी शिक्षण की ज़रूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से अँग्रेज़ी भाषा कार्यक्रम शुरू हुआ। भाषा शिक्षण के लिए जीएसके का दृष्टिकोण समग्र-भाषा पद्धति पर आधारित है। इस बात के कई सबूत मिलते हैं कि जब बच्चे स्कूल आते हैं तो वह पहले से ही अपने घर में बोली जाने वाली भाषा में एक निश्चित स्तर की दक्षता हासिल कर चुके होते हैं। लेकिन अँग्रेज़ी भाषा बच्चों के पर्यावरण का हिस्सा नहीं है। स्कूल में आने से पहले उन्हें इस भाषा को सुनने तक का अवसर नहीं मिलता, बोलना तो बहुत दूर की बात है। अँग्रेज़ी सीखने के लिए एक ऐसा वातावरण चाहिए जो बोधगम्य और इनपुट से भरपूर हो तथा जिसमें अधिक स्पष्ट भाषा निर्देश हों, बेशक कक्षा का संचालन इस प्रक्रिया के लिए महत्त्वपूर्ण होता है। जीएसके का पाठ्यक्रम इसी दृष्टिकोण को लागू करता है और साथ ही उपलब्ध संसाधनों और विद्यार्थियों (साथ ही शिक्षकों) की बदलती ज़रूरतों और कौशल स्तरों के प्रति संवेदनशील भी रहता है। भाषा को व्याकरण के नियमों और शब्दावली का समूह मानकर याद करा देने के बजाए मानवीय समझ और संचार के एक महत्त्वपूर्ण आधार के रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की जाती है। हमारा मानना है कि सार्थक बातचीत एवं विविध स्थितियों में भाषा का उपयोग ही सीखने का बेहतरीन तरीक़ा है।

जीएसके का दृष्टिकोण

संक्षेप में, जीएसके का अँग्रेज़ी भाषा को लेकर काम करने का मुख्य उद्देश्य बच्चों में कार्यात्मक योग्यता विकसित करना है ताकि वे दूसरों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों को समझ पाएँ। इसे निम्नलिखित माध्यमों से प्राप्त किया जाता है :

- सुनना और पढ़ना
- बोलकर और लिखकर अपने विचारों (भावनाओं, रवैयों, राय और अवलोकनों) को व्यक्त करना
- सोच और विचारों को व्यवस्थित करने के लिए अँग्रेज़ी भाषा का उपयोग करना
- सन्दर्भ के अनुसार भाषा का उपयोग करना

विशेष ज़ोर उस सामग्री पर दिया जाता है जो विशेष रूप से विद्यार्थियों के लिए लाभदायक हो क्योंकि लक्ष्य समग्र कार्यात्मक योग्यता हासिल करना है। इसके अलावा जीएसके अँग्रेज़ी पाठ्यक्रम का उद्देश्य विद्यार्थियों के भाषा सीखने के ज्ञान को विकसित करना है। पाठ्यक्रम इस तरह से डिज़ाइन किया गया है कि विद्यार्थियों को कौशल और तकनीक[2] सीखने में मदद मिले ताकि वे स्वतंत्र रूप से भाषा का अध्ययन कर सकें और एक स्वतंत्र शिक्षार्थी बन सकें।

जीएसके अँग्रेज़ी पाठ्यक्रम विषयगत तरीक़े से आयोजित है ताकि शिक्षक और शिक्षार्थियों को अँग्रेज़ी सीखने और सिखाने के लिए एक सन्दर्भ मिल सके। यह शिक्षकों को एक ढाँचे के भीतर संसाधनों की एक विस्तृत शृंखला प्रदान करता है और अपनी कक्षा की योजना बनाने की स्वतंत्रता देता है।

कक्षा में शिक्षक समय के अनुसार एक उचित थीम चुनते हैं। जीएसके स्कूलों में बहु-स्तरीय कक्षाएँ हैं। शिक्षक बच्चों की आयु की बजाए उनके सीखने के स्तर के अनुसार कक्षा का नियोजन करते हैं। सभी बच्चे अपने पूर्व ज्ञान और अनुभवों का इस्तेमाल करते हुए शिक्षक की मदद से अपनी समझ का निर्माण करते हैं। इस प्रकार एक थीम शुरू होती है और बच्चों के अनुभवों को जोड़ते हुए आगे बढ़ती है। इन थीमों में कविताएँ, पाठ्य और कहानियाँ शामिल होती हैं, इन पाठ्यों में रोज़मर्रा के शब्द और नए शब्द दोनों का मिश्रण होता है। पाठ्य कभी-कभी तो पाठ्यपुस्तक के होते हैं, कभी किसी कहानी की किताब के और कभी किसी ख़ास

[2] यहाँ हम कौशल और तकनीक के बीच अन्तर कर रहे हैं। तकनीक को किसी कार्य को पूरा करने के लिए उपयोग की जाने वाली एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है, और कौशल पूर्व-निर्धारित परिणामों को प्राप्त करने की एक सीखी हुई क्षमता है, जो अकसर समय, ऊर्जा, या दोनों के न्यूनतम खर्च के साथ हासिल की जाती है। उदाहरण के लिए मुहावरे सीखना एक तकनीक होगी, लेकिन उन्हें सही सन्दर्भ में उपयोग करना एक कौशल होगा; विराम चिह्नों का ज्ञान प्राप्त करना एक तकनीक होगी, लेकिन उनका सही ढंग से उपयोग करना एक कौशल है।

शीतकालीन थीमपरक कक्षाएँ

ज़रूरत को पूरा करने के लिए उनकी रचना की जाती है। इस तरह पाठ्यपुस्तकें बच्चे के सीखने के मार्ग को निर्धारित नहीं करती हैं, बल्कि संसाधन के रूप में उपयोग में लाई जाती हैं। ऐसा करने से यह जानने में मदद मिलती है कि बच्चों को क्या पता है और उन्हें बाद में अपरिचित पाठ्य(पाठ्यों) की समझ बनाने के लिए क्या जानने की आवश्यकता होगी। शब्दावली सीखने के लिए भी थीमों को प्रासंगिक बनाया जाता है। शिक्षकों को शब्दों की एक सूची सुझाई जाती है जो थीम से सम्बन्धित होती है और उन्हें इस सूची में नए शब्द जोड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। किसी थीम को पढ़ाने के दौरान इन शब्दों का उपयोग कई तरीक़ों से किया जाता है। थीमपरक अधिगम के माध्यम से हम भाषा की समझ को बेहतर बनाने की कोशिश करते हैं जिसका समर्थन शायद अन्य रणनीतियाँ नहीं कर सकती हैं। यहाँ भाषा अधिग्रहण में संस्कृति और सन्दर्भ प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

कक्षा का वातावरण बच्चों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करता है कि वे ख़ुद को अभिव्यक्त करें, जिससे उन्हें सोचने, बहस करने और संकल्पना बनाने के अवसर मिलते हैं। कक्षा में मिलने वाले ऐसे अवसरों की वजह से बच्चे कक्षा में जो कुछ सीखते हैं उसे अपने स्वयं के जीवन के साथ जोड़ पाते हैं। सीखने की यह व्यक्तिगत प्रकृति बच्चों में आत्मविश्वास भी उजागर करती है क्योंकि उन्हें अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

कक्षा का भौतिक वातावरण, उसकी व्यवस्था और डिस्प्ले की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उदाहरण के लिए जिन कहानियों पर काम करना होता है, उन्हें लिखकर कक्षा में प्रदर्शित किया जाता है ताकि बच्चे उससे परिचित हो सकें – ये निर्धारित 'पाठ्यपुस्तक' से हो भी सकते हैं और नहीं भी। इससे बच्चों को पढ़ने के लिए सिर्फ़ पाठ्यपुस्तकों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता, जो अधिक चुनौतीपूर्ण हो सकता है, ख़ासकर शुरुआती पाठकों के लिए। बच्चों के सीखने को प्रोत्साहित करने के लिए उनके वर्तमान काम और पिछले काम का प्रदर्शन किया जाता है जो उन्हें अपने काम के साथ जुड़ने में मदद करता है।

कक्षा का व्यवस्थापन

कक्षाओं को विभिन्न स्तरों में आयोजित किया जाता है ताकि बच्चों को अपने सहपाठियों के साथ सीखने का मौक़ा मिल सके। इसके अलावा शिक्षक को इस बात की स्वतंत्रता है कि वे अपनी पाठ योजना ख़ुद निर्धारित करें और उपयोग में लाई जाने वाली सामग्री को भी ख़ुद ही चुन सकें – जो या तो पाठ्यपुस्तक से ली जा सकती है या फिर अन्य पुस्तकों[3] से और या जीएसके दिशा-निर्देशों के अनुसार निर्मित सामग्री से ली जा सकती है। ये दिशा-निर्देश जेंडर समता, वैज्ञानिक मनोवृत्ति, सामाजिक स्तरीकरण के साथ-साथ अधिगम के स्तर पर केन्द्रित हैं। पाठ्यपुस्तकों में ऐसे चित्रों के कुछ उदाहरण मिलते हैं जिनमें महिलाएँ पुरुषों के पैरों[4] में बैठी हैं; यह वास्तविकता हो सकती है, लेकिन इनका इस्तेमाल ऐसी प्रथाओं पर बातचीत के लिए उत्प्रेरक के रूप में किया जा सकता है।

कक्षा में तीन प्रकार की गतिविधियाँ होती हैं : बड़े समूह वाली गतिविधियाँ (पूरी कक्षा को शामिल करते हुए), छोटे समूह की गतिविधियाँ और व्यक्तिगत गतिविधियाँ। कविताएँ, कहानी सुनाना और खेल आमतौर पर कक्षा की शुरुआत में किए जाते हैं।

प्रत्येक दिन कक्षा कविता के साथ शुरू होती है,

[3] तूलिका, कथा, प्रथम, सीबीटी, एनबीटी और ऐसे ही अन्य प्रकाशकों की कहानियों की पुस्तकें।

[4] राज्य बोर्ड की वर्तमान पाठ्यपुस्तक, रिमझिम से चित्र।

'बुद्धिमान' शब्द के सही अर्थ को बताने के लिए 8 साल के दो बच्चों के बीच होने वाली बातचीत (घरेलू भाषा में) में दख़ल दिया गया –

बच्चा : 'बुद्धिमान' कौन है?

शिक्षक : 'बुद्धिमान' से तुम्हारा क्या मतलब है?

बच्चा : हम दोनों ही हिन्दी में किताब पढ़ पाते हैं इसलिए हम दोनों ही हिन्दी में समान रूप से बुद्धिमान हैं।

शिक्षक : पर 'बुद्धिमान' शब्द का अर्थ क्या होता है?

बच्चा : ऐसा व्यक्ति जिसके पास किसी भी विषय का अधिक ज्ञान हो!

ये कविताएँ कुछ परिचित होती हैं और कुछ अपरिचित। आमतौर पर इसके बाद उस दिन की योजनानुसार या तो कहानी सुनाने या पाठ्य पढ़ने का सत्र होता है। शिक्षकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि वे विद्यार्थियों के लिए इन कहानी सत्रों को दिलचस्प बनाएँ, इसके लिए कभी-कभी मुखौटों या कठपुतलियों का उपयोग किया जा सकता है। बोले गए शब्द के अर्थ को व्यक्त करने के लिए स्वर ऊँचा-नीचा करना और हाव-भाव प्रदर्शित करना महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वे आंगिक अभिनय के साथ एक *बिइइइइइइग* एलिफेंट या एक *स्केएएएएएएरी* लॉयन के बारे में बात कर सकते हैं जिन्हें निरन्तर अनुवाद की आवश्यकता नहीं होती है। इस प्रकार शब्द-दर-शब्द अनुवाद से बचा जा सकता है और शिक्षक बहुत सारी जानकारी विद्यार्थियों को दे पाते हैं। उदाहरण के लिए *ऑन अ हॉट समर डे* वाक्यांश का अर्थ समग्र रूप में बताया जाएगा। शिक्षक को अर्थ समझाने से पहले एक-दो बार अँग्रेज़ी में कहानी पढ़ने/सुनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। वे बच्चों से पता लगाते हैं कि उन्होंने कितना समझा है। पाठ को फिर से पढ़कर वे पाठ के विभिन्न पहलुओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। उदाहरण के लिए *अनवर, हू एंजॉय्ड प्लेइंग इन द मस्टर्ड फील्ड्स*, *वुड सिट क्लोज़ टु द फायर एट नाइट।* शिक्षक इसका उपयोग 'क्लोज़ टु' वाक्यांश की समझ को सुदृढ़ करने के लिए करते हैं। बाद में विद्यार्थी इस वाक्यांश का उपयोग कर सकते हैं जैसे कि *'माई हाउस इज़ क्लोज़ टु द टपल'* या *'माई हाउस इज़ क्लोज़ टु द रेल्वे स्टेशन'* इत्यादि। बच्चे अपने अवलोकनों और अनुभवों के आधार पर तथा अपनी जानकारी की मदद से वाक्य बनाते हैं। यह गतिविधि कभी-कभी शिक्षकों द्वारा समूह में की जाती है, जहाँ बच्चे वाक्य बनाते हैं और शिक्षक उन्हें बोर्ड पर लिखते हैं। हो सकता है कि अलग स्तर वाले बच्चे इन वाक्यों को अपने आप ही लिखने में सक्षम हों। एक कक्षा में तो बच्चों ने बड़े उत्साह के साथ इस तरह के वाक्य बताए। जैसे -*आई वॉक विद माई ग्राण्डफादर टु द*_____ और बाद में कक्षा का अधिकांश समय उन्होंने विभिन्न विकल्प बनाने में बिताया और जहाँ वे अँग्रेज़ी शब्द नहीं जानते थे, उन्होंने शिक्षक से पूछकर और विकल्प बनाए।

कहानी पढ़ने/सुनाने के बाद उससे सम्बन्धित अन्य गतिविधियाँ भी की जाती हैं। छोटे बच्चों को इस

पढ़ना, बात करना और अर्थ समझना

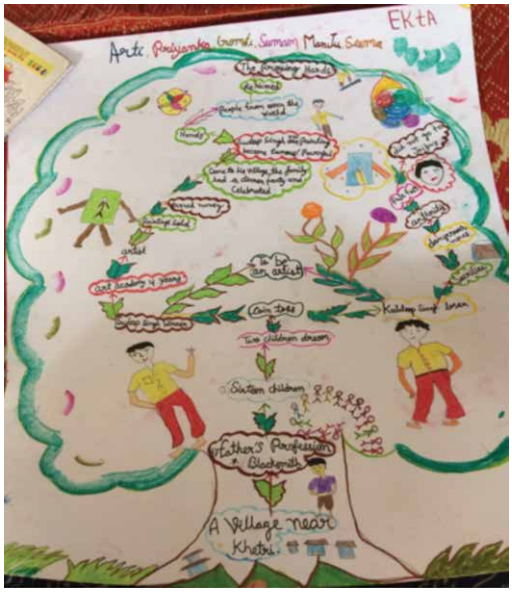

चित्र कहानी

बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि उन्होंने कहानी से जो कुछ समझा/महसूस किया या याद रहा, उसका चित्र बनाएँ। बड़े बच्चों को शिक्षक की सहायता से अपने स्तर और रुचि के आधार पर शब्द मानचित्र, स्टोरीबोर्ड, रोल प्ले या सार लेखन के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। भाषा सीखने की प्रारम्भिक अवधि के दौरान, दोहराव वाली कहानियाँ बच्चों को भाषा अभ्यास के अवसर प्रदान करती हैं। एनसीईआरटी[5] द्वारा प्रकाशित एक पूरक पाठ्यपुस्तक रेनड्रॉप की *छोटू* नाम की कहानी को, जिसमें छोटू नामक चूहा भाग जाता है, कक्षा में अलग-अलग तरीक़े से इस्तेमाल किया गया। सुबह स्कूल की प्रार्थना सभा में प्रस्तुत रोल प्ले में बच्चों ने सरल वाक्यों का प्रयोग किया जैसे *कम बैक छोटू, कम बैक नाउ!* शिक्षक ने फिर इसे एक ऐसे खेल में बदल दिया, जिसमें बच्चे एक लाइन में खड़े होते हैं और उनमें से एक बच्चा अपने दोस्तों को बुलाता है। पाठ के अन्त में दी गई कुछ गतिविधियों का भी शिक्षक उपयोग करते हैं, लेकिन वे कक्षा का प्रमुख बिन्दु नहीं होतीं। जिन गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी ज़रूरी होती है, वे अधिक उपयोगी पाई गई हैं।

[5] यह पुस्तक राजस्थान के पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं है। एनसीईआरटी के एक सलाहकार द्वारा साझा की गई इस पुस्तक से बहुत सहायता मिली।

समूह कार्य शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। यहीं पर विद्यार्थी बहु-स्तरीय कक्षा का लाभ लेने में सक्षम हो पाते हैं। कभी-कभी लगभग एक समान स्तर वाले बच्चों को एक समूह में रखा जाता है और कभी अलग-अलग स्तरों वाले बच्चों का एक समूह बनाया जाता है। ये समूह गतिशील होते हैं, विषय के अनुसार बदलते रहते हैं। समूह पठन, शब्द मानचित्र, प्रश्न बनाने जैसी गतिविधियाँ की जाती हैं ताकि बच्चे सामूहिक समझ तक पहुँच सकें। बच्चे अकसर एक समूह में बैठते हैं और एक-दूसरे को पाठ पढ़कर सुनाते हैं। वे कहानी के अर्थ पर चर्चा करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर शिक्षक से मदद लेते हैं। अर्थ समझते हुए पढ़ना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। अकसर यह देखा जाता है कि बच्चे पूरा पाठ पढ़ तो लेते हैं, लेकिन पूरी तरह से यह नहीं जान पाते कि उसका मतलब क्या है। बड़े और छोटे समूह में विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से शिक्षक बच्चों को अर्थ समझते हुए पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। जिन बच्चों को पढ़ने में कठिनाई होती है, वे स्वयं पाठ पढ़ने की कोशिश करने से पहले एक-दो बार पाठ को सुन सकते हैं। बच्चे समूह में वर्कशीट भी पूरी करते हैं। असल विचार यह है कि सीखना प्रतिस्पर्धा के बजाए आपसी सहयोग के रूप में हो।

कक्षाएँ बहुस्तरीय हैं और वहाँ कुछ दिशा-निर्देशों का पालन किया जाता है। *पहले स्तर*, में अधिकतर प्री-स्कूल स्तर के बच्चे शामिल हैं। चूँकि ये बच्चे पहली बार द्वितीय भाषा का परिचय प्राप्त कर रहे हैं, इसलिए उन्हें मौखिक रूप से, कविता, गीतों और कुछ सरल कहानियों के माध्यम से, द्वितीय भाषा का माहौल दिया जाता है। आमतौर पर कक्षा में जो डिस्प्ले या सामग्री रखी होती है वे द्विभाषी होती हैं। बच्चों से शायद ही कभी ख़ुद पढ़कर या समझकर उत्तर देने के लिए कहा जाता हो। इस स्तर पर हमें इस बात से सरोकार रहता है कि भाषा के साथ सम्पर्क एवं परिचय बढ़ाया जाए। बच्चे अभिनय करते हुए बहुत सारे बालगीत एवं कविताएँ गाते हैं और छोटे-छोटे वाक्य बोलते हैं जैसे *'माई नेम इज़ रानी एंड आई ईट चपाती'*। प्राथमिक वर्षों के दौरान घर में बोली जाने वाली भाषा को मज़बूत

करना महत्त्वपूर्ण होता है। शोधकार्य सदा यही इंगित करते रहे हैं कि द्वितीय भाषा में दक्षता हासिल करने के लिए घर में बोली जाने वाली भाषा में प्रवीणता ज़रूरी है। इसलिए शिक्षा का माध्यम घर में बोली जाने वाली भाषा है।

दूसरे स्तर, में अकसर ऐसे बच्चे होते हैं, जो शुरुआती एक से दो साल तक अँग्रेज़ी के सम्पर्क में आ चुके होते हैं। वे सरल निर्देशों का पालन करने में सक्षम होते हैं और सामान्य रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले शब्दों को समझते हैं। इस स्तर पर बच्चे पढ़ना और लिखित सामग्री के साथ जुड़ना शुरू कर देते हैं। इस स्तर पर, वर्तनी या व्याकरण पर अत्यधिक ज़ोर दिए बिना, बच्चों को मौखिक और लिखित रूपों में भाषा का इस्तेमाल करने को प्रोत्साहित किया जाता है। हाँ, लेकिन ज़रूरत पड़ने पर शिक्षक उनकी ग़लतियों को ठीक ज़रूर करते हैं। बच्चे अपने परिवेश को देखते हैं और वाक्यांशों की रचना करते हैं। उदाहरण के लिए बच्चों को रंगों के नाम सिखाते समय एक शिक्षक ने उन्हें कक्षा से बाहर जाकर विभिन्न चीज़ों के रंग देखने के लिए कहा। बच्चे कक्षा में वापस आए और बताया कि उन्होंने *व्हाइट क्लाउड्स, ब्राउन स्टोन्स, ग्रीन ट्रीज़, ग्रीन ग्रास, व्हाइट टैंक, ब्लू स्काई, रेड क्लासरूम* आदि देखे। बच्चे अपने अनुभवों से सरल वाक्य बनाते हैं जैसे *'आई सॉ अ व्हाइट क्लाउड'*। इस स्तर पर बच्चे भाषा की संरचना के बारे में समझने लगते हैं। इस स्तर पर (जैसा कि हर स्तर के साथ किया जाता है) शिक्षक बच्चों को विभिन्न कहानियों और पाठ्यों के सम्पर्क में लाते हैं। यह स्तर, कक्षा पहली और दूसरी के बच्चों के स्तर के बराबर है।

तीसरा स्तर – तीसरी, चौथी और पाँचवीं कक्षा के अनुरूप है। इस स्तर पर बच्चों की शब्दावली में काफ़ी बढ़ोतरी हो गई होती है और इसलिए वे अधिक जटिल विचारों वाले पाठ्य को समझने में सक्षम होते हैं। वे सवालों के जवाब अँग्रेज़ी में दे पाते हैं और अपने अनुभवों का वर्णन अधिक विस्तार से करने में सक्षम होते हैं।

चूँकि ये स्तर आयु के अनुसार निर्धारित नहीं हैं, इसलिए दूसरी कक्षा के बच्चे पहली कक्षा के स्तर पर हो सकते हैं और पहले स्तर की गतिविधियों से अधिक लाभ उठा सकते हैं। शिक्षक को बच्चों के भाषा-अधिग्रहण के स्तर की पहचान करने में कुशल होना पड़ता है। कक्षा में दिन-प्रतिदिन के अवलोकन से इस बात का पता लगाया जाता है। शिक्षक प्रत्येक बच्चे के लिए पोर्टफ़ोलियो बनाते हैं जो उनकी प्रगति को अंकित करने में भी मदद करता है।

शैक्षणिक चुनौतियाँ

अँग्रेज़ी सिखाने में आने वाली चुनौतियों का एक कारण पूर्व में अँग्रेज़ी भाषा से रूबरू होने के अवसरों का अभाव है, ख़ासकर ग्रामीण क्षेत्रों में। अधिकांश शिक्षकों ने ख़ुद भी ऐसे ही तरीक़ों से पढ़ाई की है जो व्याकरण के नियमों को रटकर भाषा सीखने को प्रोत्साहित करते हैं। वे संज्ञा/सर्वनाम/विशेषण को पहचान तो लेते थे, लेकिन किसी विचार को एक साथ जोड़ना और उसे अँग्रेज़ी में प्रस्तुत करना अधिकांश के लिए एक चुनौतीपूर्ण बात थी। जो लोग अँग्रेज़ी में बात कर सकते हैं, उनका ग्रामीण क्षेत्र में मिलना मुश्किल है, जो मिलते हैं वे लोग शहरों/क़स्बों में नौकरी की तलाश करते हैं। इसलिए शिक्षकों के साथ उनकी भाषा सम्बन्धी दक्षताओं पर काम करने की ज़रूरत महसूस की गई। शिक्षकों ने अपनी ख़ुद की क्षमताओं को बढ़ाने के लिए भाषा सीखने की प्रक्रिया में भाग लिया। कार्यशालाओं में उन्होंने रोल-प्ले, वाद-विवाद करने, पकवान बनाने की विधियाँ लिखने, कहानियाँ लिखने और इसी तरह की कई गतिविधियों में भाग लिया। लेकिन अभी भी, उनके अधिगम के स्तर को और बेहतर बनाने के लिए बहुत कुछ करना बाक़ी है।

भाषा सीखने के लिए प्रासंगिक सामग्री की कमी एक और बड़ी चुनौती है। विशेष रूप से अँग्रेज़ी के लिए निर्धारित की गई पाठ्यपुस्तकें बच्चों के स्तर से बहुत ऊँची हैं। राजस्थान राज्य की नीति के अनुसार पाँचवीं कक्षा में बोर्ड की परीक्षा होती है जिसमें पास होना पड़ता है। समस्या सिर्फ़ स्तर की नहीं, बल्कि पाठ्यपुस्तकों की सामग्री की भी है। इनमें ग्रामीण जीवन के चित्रण का अभाव हैं। हाल

के दिनों में पाठ्यपुस्तकों की सामग्री की व्यापक रूप से आलोचना की गई है। पाठ्यपुस्तकों को ऐसा होना चाहिए जो विद्यार्थियों को स्व-अधिगम के अवसर प्रदान करें, लेकिन ऐसा है नहीं।

अन्य शैक्षणिक चुनौतियाँ भी हैं, लेकिन ऊपर वर्णित चुनौतियों जितनी प्रमुख कोई नहीं है।

आगे की राह

शैक्षणिक वर्ष 2016 से ही जीएसके इसी दृष्टिकोण के साथ काम कर रहा है और समय के साथ इसे सुधारता भी गया है। यहाँ तक कि मूल टीम में कुछ बदलाव भी हुए हैं।

शिक्षक प्रशिक्षण की ऐसी कार्यपद्धति कारगर रही – जिसमें प्रशिक्षण के बाद, शिक्षकों ने स्वतंत्र रूप से या टीम के सहयोग से बच्चों के साथ काम किया और समय-समय पर उनके काम का अवलोकन किया।

समग्र भाषा शिक्षण दृष्टिकोण कक्षा-5 की बोर्ड परीक्षा देने वाले लगभग सभी बच्चों के लिए सही साबित हो रहा है क्योंकि उन्हें अँग्रेज़ी में ए या बी ग्रेड मिल रहे हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इस दृष्टिकोण के लिए उपयोग की जाने वाली सामग्री निर्धारित पाठ्यपुस्तकों तक ही सीमित नहीं है और शिक्षकगण अपने प्रशिक्षणों और गतिविधि-बैंकों के माध्यम से सुझाए गए विभिन्न प्रकार के पाठ्यों के आधार पर अपनी पाठ योजनाओं को विकसित करने के लिए स्वतंत्र हैं। शिक्षक सहायता सामग्री के रूप में बनाया गया गतिविधि बैंक इस कार्यक्रम के प्रमुख परिणामों में से एक है। यह गतिविधि बैंक उन लोगों के लिए एक संसाधन के रूप में कार्य करता है जो पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों को अँग्रेज़ी पढ़ाने में रुचि रखते हैं। इससे कक्षा के अन्दर और बाहर दोनों जगह अँग्रेज़ी का अधिक उपयोग हुआ है।

वे क्षेत्र जिन पर ध्यान देने की ज़रूरत है उनमें पूर्व समीक्षित अँग्रेज़ी शिक्षण-अधिगम मॉड्यूल (एप्रोच पेपर, गतिविधि-बैंक और संसाधनों सहित) को सुदृढ़ बनाना शामिल है। ऐसा करने से हम अपनी सीख को ऐसे अधिक-से-अधिक लोगों के साथ साझा करने में सक्षम हो सकेंगे जो पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों को अँग्रेज़ी सिखाने में रुचि रखते हैं।

एकता धनकर अँग्रेज़ी प्रोग्राम टीम के साथ ग्रामीण शिक्षा केन्द्र में काम करती हैं। उन्होंने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय से शिक्षा में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की है। उनसे dhankher@graminshiksha.org.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

ज्योत्स्ना लाल ग्रामीण शिक्षा केन्द्र के संस्थापक सदस्यों में से एक हैं। वे अँग्रेज़ी कार्यक्रम के लिए एक सलाहकार के रूप में काम करती हैं। उनसे jyotsna.lall@akdn.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

शिप्रा सुनेजा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं। वे बाल विकास और प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा के कोर्स पढ़ाती हैं। वे ग्रामीण शिक्षा केन्द्र में अँग्रेज़ी कार्यक्रम के सलाहकार के रूप में भी कार्य करती हैं। उनसे shipra.suneja@gmai.com सम्पर्क किया जा सकता है।

वर्धना पुरी दिल्ली विश्वविद्यालय में पीएचडी की अध्येता हैं। वे ग्रामीण शिक्षा केन्द्र में अँग्रेज़ी कार्यक्रम के सलाहकार के रूप में कार्य करती हैं। उनसे vardhna@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** सात्विका ओहरी **कॉपी एडिटर :** अंजना राव

लेखन के माध्यम से पाठ्यपुस्तक के विचार का विस्तार

मुरारी झा

परिचय

मुख्यधारा के स्कूलों की कक्षा के सामने यह चुनौती कभी नहीं आती कि क्या पढ़ाया जाए, क्योंकि उनके पास हमेशा एक निर्धारित पाठ्यक्रम होता है और ख़ासकर जब *पाठ्यक्रम* और *पाठ्यपुस्तक* शब्द एक-दूसरे का पर्याय बन गए हों तब तो दिक़्क़त की कोई बात ही नहीं होती। लेकिन पाठ्यक्रम का सन्दर्भीकरण हमेशा ही चुनौती का विषय रहा है। बतौर शिक्षक हमें स्कूल में अपने बच्चों के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम का पालन करना होता है। हम विविधतापूर्ण राष्ट्र का हिस्सा हैं और इसलिए किसी भी संस्थान के लिए एक ऐसा पाठ्यक्रम विकसित करना सम्भव नहीं है जो इस देश में रहने वाले लोगों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करता हो। पाठ्यक्रम के सन्दर्भीकरण में स्कूल और शिक्षक की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

निम्नलिखित अनुच्छेद में विंच (Winch) पाठ्यक्रम को बच्चों के सन्दर्भ में मज़बूत आधार देने के महत्व के बारे में बात करते हैं ताकि पाठ्यक्रम लोगों के विविध समूह की आवश्यकताओं को पूरा कर सके :

"यदि युवा लोगों को वयस्क जीवन के लिए तैयार रहना है तो मज़बूत आधार आवश्यक है। लेकिन कोई व्यक्ति किस तरह का जीवन जिएगा, यह बात कई प्रकार के कारकों पर निर्भर होती है, और इसके लिए यह वांछनीय है कि उनमें से कई कारक सम्बन्धित व्यक्ति के नियंत्रण में हों। यह बात विशेष रूप से वांछनीय है कि लोगों को एक ऐसा जीवन जीना चाहिए जिसमें उनकी क्षमताओं का सर्वोत्तम उपयोग सम्भव हो सके ताकि वे और अन्य लोग भी फल-फूल सकें। सम्भावित व्यवसायों की विविधता और लोगों की विभिन्न क्षमताओं तथा रुचियों की विविधता को देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि वे सभी वयस्क जीवन के लिए किसी एक ही तरीक़े की तैयारी से लाभान्वित होंगे"। *(विंच सी, पृ; 51)*

हम पाठ्यपुस्तक के माध्यम से पाठ्यक्रम को सम्पादित करते हैं और पाठ्यपुस्तकीय संस्कृति भारत में बहुत प्रभावी है। भारत में शिक्षा की स्थिति और निर्धारित पाठ्यक्रम के रूप में पाठ्यपुस्तक की प्रधानता पर चिन्तन करते हुए एक सदी पहले एम.के. गाँधी ने लिखा था :

"यदि पाठ्यपुस्तकों को शिक्षा का साधन समझ लिया जाए तो शिक्षकों की सक्रिय दुनिया का कोई मूल्य नहीं रह जाएगा। जो शिक्षक पाठ्यपुस्तक से पढ़ाता है, वह अपने विद्यार्थियों में मौलिकता का बीज नहीं बो सकता। सच पूछा जाए तो वह पाठ्यपुस्तक का ग़ुलाम बन जाता है और उसके पास मौलिक बने रहने का कोई अवसर या कारण नहीं रह जाता। इसलिए ऐसा लगता है कि कम पाठ्यपुस्तकों का होना शिक्षक और उनके विद्यार्थियों के लिए बेहतर है"*(एम. के. गाँधी, हरिजन 9 सितम्बर, 1913)*

इसे और स्पष्ट करते हुए कृष्ण कुमार (1988) लिखते हैं : "पाठ्यपुस्तक संस्कृति पर आधारित शिक्षा प्रणाली में, शिक्षकों को पाठ्यचर्या के व्यवस्थापन, गति और अन्तिम मूल्यांकन के तरीक़े में कोई विकल्प नहीं दिया जाता है। प्रत्येक विषय के लिए पाठ्यपुस्तकें निर्धारित की जाती हैं और शिक्षिका से यह अपेक्षा की जाती है कि वह दिए गए क्रम में हर पाठ को स्पष्ट करें; वह यह सुनिश्चित करें कि बच्चे पाठ्य (text) को देखे बिना पाठ्यपुस्तक के किसी भी पाठ के आधार पर प्रश्नों के उत्तर लिखने में सक्षम हों क्योंकि जब वे परीक्षा देने जाएँगे तब अन्ततः उन्हें यही तो करना होगा।"*(कुमार, पृष्ठ 452)*

एनसीएफ़ (2005) उन शिक्षकों की बात करता है जो पाठ्यचर्या में जान डाल सकते हैं।

"सीखने की प्रक्रिया में रत एक बालक या बालिका अपने ज्ञान का सृजन ख़ुद करता/ती है। बच्चों को ऐसे प्रश्न पूछने की अनुमति देना जिनसे वे स्कूल में सिखाई जाने वाली चीज़ों का सम्बन्ध बाहरी दुनिया से स्थापित कर सकें, उन्हें एक ही तरीक़े से उत्तर

रटने और देने की बजाए उन्हें अपने शब्दों में जवाब देने और अपने अनुभव बताने के लिए प्रोत्साहित करना – ये सभी बच्चों की समझ विकसित करने में छोटे किन्तु बेहद महत्त्वपूर्ण क़दम हैं।" *(एनसीएफ़ 2005, पृ. 17)*।

रोचक बात यह है कि पाठ्यचर्या की जितनी भी परिभाषाएँ दी गई हैं उनमें से अधिकांश परिभाषाओं में बच्चों की आवाज़ नदारद है। लगता है कि वयस्क लोगों के ज्ञान को विद्यार्थियों पर थोप दिया गया है। यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि पाठ्यचर्या के निर्माण में शिक्षकों और विद्यार्थियों की आवाज़ शामिल ही नहीं है।

शिक्षा के क्षेत्र में आलोचनात्मक विचारधाराएँ भी पाठ्यचर्या निर्माण में बच्चों और शिक्षकों की आवाज़ को शामिल करने के तर्क का समर्थन करती हैं।

बतौर एक शिक्षक मुझे हमेशा यही लगता है कि पाठ्यपुस्तक से पाठ पढ़कर सुनाना किसी रस्म को निभा देने जैसा है और इससे कोई लाभ नहीं होता। मैंने हमेशा कुछ ऐसी क्रियाविधियों को विकसित करने की कोशिश की है जो विद्यार्थियों को अपने स्वयं के अर्थ गढ़ने में मदद करें। इस सन्दर्भ में मैंने अपने विद्यार्थियों से दैनिक लेखन कार्य करवाना शुरू किया।

यह सब कैसे शुरू होता है?

दिल्ली के एक सरकारी स्कूल में शिक्षक के रूप में मेरे सामने एक बड़ी चुनौती यह है कि बच्चे लेखन के माध्यम से अपने विचारों को व्यक्त करने में सक्षम नहीं हैं। परम्परागत रूप से, उन्हें लिखने के नाम पर जो प्रशिक्षण दिया जा रहा है, वह ब्लैकबोर्ड या पाठ्यपुस्तक से, किसी पुस्तक की सहायता लेते हुए या किसी अन्य विद्यार्थी की नोटबुक से टेक्स्ट की नकल करने तक सीमित है। यदि विद्यार्थियों से स्वतंत्र रूप से कुछ वाक्य लिखने के लिए कहा जाए तो उन्हें यह बहुत मुश्किल लगता है और अकसर वे यह बहाना बनाते हैं कि उन्होंने इसे याद नहीं किया है।

मैं चाहता था कि मेरे विद्यार्थी लिखना सीखें। मेरा मतलब यह नहीं है कि वाक्य कैसे लिखें या व्याकरणिक रूप से सही वाक्य कैसे लिखें। लेखन से मेरा अभिप्राय यह है कि मेरे विद्यार्थी लेखन के माध्यम से अपनी राय और विचार व्यक्त करने में सक्षम हो जाएँ।

मैंने क्या किया

मेरा मानना है कि यदि विद्यार्थी को अपनी पसन्द के विषय पर लिखने के लिए कहा जाए तो उनके लिए प्रतिदिन एक पृष्ठ लिखने की शुरुआत करना आसान होगा। मुझे पता था कि कक्षा में कुछ विद्यार्थी ऐसे हैं जो लिखना नहीं जानते और केवल कहीं और से नकल करके लिख सकते हैं। ऐसे विद्यार्थियों की दिक़्क़त को ध्यान में रखते हुए मैंने उन विद्यार्थियों को कहीं और से नकल करने की अनुमति तो दी लेकिन साथ ही मैंने यह भी कहा कि मैं बिना नक़ल किए हुए लिखे को पसन्द करूँगा और उसे ही प्रोत्साहित करूँगा। इस स्तर पर, मेरे दिमाग़ में स्पष्ट रूप से दो उद्देश्य थे : विद्यार्थियों को अपना लेखन कौशल बढ़ाने के लिए नियमित रूप से लिखने के लिए प्रोत्साहित करना, और उन्हें स्वतंत्र रूप से लिख पाने में सक्षम बनाना ताकि वे परीक्षा में आसानी से उत्तर दे सकें।

चूँकि विद्यार्थियों को इस तरह के काम की आदत नहीं थी, इसलिए उन्हें यह सब बहुत मुश्किल लगा और उन्होंने आग्रह किया कि उन्हें लिखने के लिए कोई विषय दिया जाना चाहिए, लेकिन मैं विषय न देने की अपनी बात पर अड़ा रहा। मेरा मानना था कि विषय देकर उसके बारे में लिखने की कुछ सीमाएँ होती हैं। एक तो यह कि विषय देने से सभी विद्यार्थी उस एक विषय पर लिखने के लिए प्रेरित होंगे जिसे लेकर कुछ तो सहज हो सकते हैं और कुछ नहीं। दूसरे, मैंने पाया कि किसी विषय के बारे में लिखने के लिए सोचना अपने आप में एक अद्भुत यात्रा है क्योंकि यह उनकी विचार प्रक्रिया की शुरुआत है। उनमें से कई विद्यार्थियों ने अपने लेखन के ज़रिए बताया है कि लिखने के लिए किसी विषय को चुनना कितना कष्टदायक है! शुरुआत में मैंने उन चीज़ों के बारे में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन किया जिनके बारे में मैं उनसे लिखने की अपेक्षा

करता हूँ और सुझाव दिया कि वे अपने लेखन की शुरुआत करने के लिए अपनी देखी हुई किसी फ़िल्म की कहानी लिख सकते हैं, किसी धारावाहिक की कहानी लिख सकते हैं या घर से स्कूल और स्कूल से घर आते-जाते समय जो कुछ देखते हैं, उसके बारे में या अपने आस-पास चल रही तरह-तरह की बातों आदि के बारे में लिख सकते हैं।

उन्होंने इस तरह के विषयों पर लिखना शुरू किया और मेरे द्वारा दिए गए फ़ीडबैक के आधार पर धीरे-धीरे वे अपने लेखन कौशल को सुधारते रहे। यहाँ पर हम इस गतिविधि को करने में आने वाली कठिनाइयों का एक नमूना देखते हैं।

सातवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तक में एक अध्याय है- *ग्रोइंग अप एज़ बॉयज़ एंड गर्ल्स*।

इस पाठ में अन्तर्निहित विचार यह है कि विद्यार्थियों को लैंगिक रूढ़ियों के बारे में जागरूक किया जाए और यह बताया जाए कि लैंगिक समानता के आधार पर समाज का निर्माण कैसे किया जाए। इस अध्याय में प्रशान्त महासागर के सामोआ द्वीप में बड़े हो रहे एक लड़के और लड़की की कहानी बताई गई है। इसी अध्याय में 1960 के दशक में मध्य प्रदेश के एक गाँव में एक लड़के के बड़े होने की कहानी भी है।

मुझे लगा कि इन कहानियों से विद्यार्थियों को उनके अपने जीवन की लिंग से सम्बन्धित वास्तविकताओं पर चिन्तन करने में मदद मिलेगी और इसलिए मैंने उन्हें इसे लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। लेकिन यह आसान नहीं था। तब मैंने अपनी कहानी साझा की कि लिंग के बारे में मेरी समझ क्या है और मैं अपने आस-पास और अपने परिवार में भेदभावपूर्ण व्यवहारों को कैसे देखता हूँ। मैंने उन्हें कमला भसीन द्वारा लिखित *लड़का क्या है लड़की क्या है* पुस्तक भी पढ़कर सुनाई।

इन प्रयासों के बाद कुछ विद्यार्थियों ने लिखना शुरू कर दिया। एक विद्यार्थी ने अपने व्यक्तिगत अनुभव के बारे में लिखा कि उसके पड़ोस में एक लड़के और लड़की के साथ अलग-अलग तरह का व्यवहार किया जाता है, जिसका शीर्षक था *'अपने आस-पास लड़के तथा लड़कियों से भेदभाव'*।

"मेरे पड़ोस में एक चाचा और चाची रहते थे। उनके दो बेटे और एक बेटी थी। लड़की 12 साल की थी, छोटा लड़का 11 साल का और बड़ा वाला 14 साल का था। उन्होंने अपनी बेटी को केवल सातवीं कक्षा तक पढ़ने की अनुमति दी। उनका बेटा नौवीं कक्षा में पढ़ता था। एक बार उनके परिवार में किसी बात पर झगड़ा शुरू हो गया। उस दिन लोगों को पता चला कि उनकी बेटी आगे पढ़ना चाहती है लेकिन उसे पढ़ने की अनुमति नहीं दी गई। वे केवल अपने बेटों को पढ़ाई करने की अनुमति दे रहे थे। वे हमेशा अपने बेटे को सैर के लिए बाहर ले जाते थे। बेटी को बाहर जाने की अनुमति नहीं थी।"

पन्द्रह दिनों में ही, मैंने देखा कि विद्यार्थी अपने परिवेश में होने वाली घटनाओं को कक्षा में पढ़ाई जाने वाली बातों के साथ जोड़ पा रहे थे। वैसे विद्यार्थियों को शुरू में अपने स्वयं के जीवन के अनुभवों पर चिन्तन करने में बहुत समय लगता है।

कभी-कभी मैंने यह भी देखा कि उन्होंने मासिक धर्म के दौरान अपने परिवार में होने वाली भेदभावपूर्ण प्रथाओं के बारे में लिखा और अपनी माताओं से इस बारे में प्रश्न भी किए। यहाँ इस बात पर ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि यह एक प्रक्रिया है और विद्यार्थी अपने जीवन के अनुभवों पर चिन्तन करना तब शुरू करते हैं जब वे अपने शिक्षकों को ऐसा करते हुए देखते हैं।

मैंने यह कैसे सुनिश्चित किया कि वे सभी लिख रहे हैं?

मैंने यह सुनिश्चित करने के लिए कई तरीक़े अपनाए कि सभी विद्यार्थी हर रोज़ लिखें।

कक्षा में मेरा पहला काम यही होता था कि विद्यार्थियों की रचनाओं को देखूँ। धीरे-धीरे विद्यार्थियों को पता चल गया कि पहली बात सर यही पूछते हैं कि आपने एक पृष्ठ लिखा है या नहीं!

मैंने विद्यार्थियों से एक चैकलिस्ट बनाने के लिए कहा ताकि हमें पता चल सके कि कौन लिख रहा है और कौन नहीं। जब कोई विद्यार्थी किसी दिन एक पृष्ठ लिखकर नहीं लाता था तो मैं उससे कारण बताने को कहता था और चैकलिस्ट के द्वारा ही मुझे

यह पता चला कि एक विद्यार्थी कई दिनों से कुछ लिख नहीं रहा था।

कभी-कभी मैं अभिभावकों को बुलाकर उनके बच्चों द्वारा लिखे हुए अद्भुत लेख उन्हें दिखाता और उन्हें बधाई देता था। मैं विद्यार्थियों से पूछता था कि क्या वे चाहते हैं कि मैं पूरी कक्षा के सामने उनके लेख पढ़ूँ। यदि वे हामी भरते तो मैं इसे कक्षा में और कभी-कभी स्कूल की प्रार्थना सभा में भी पढ़कर सुनाता था। मैं उन लेखों की तस्वीर खींचकर शिक्षकों के व्हाट्सएप ग्रुप पर साझा करता था। मैंने चैकलिस्ट के लेखों पर चिन्तन-मनन करना भी शुरू किया।

चूँकि कक्षा में चैकलिस्ट के लेखों पर चर्चा की जाती थी, इसलिए कक्षा की प्रक्रियाओं के साथ उनका जुड़ाव बढ़ा। हम उनकी राय, विचारों और ज्ञान का उपयोग कक्षा की चर्चाओं के लिए मान्य सामग्री के रूप में करते थे। इस अभ्यास ने उन्हें एक ऐसे महत्वपूर्ण एजेंट का स्थान दिया जो ज्ञान के निर्माण में योगदान दे सकते थे और उस सन्दर्भ में, इस प्रक्रिया ने उन्हें ज्ञान के निष्क्रिय प्राप्तकर्ता से ज्ञान के निर्माण में योगदानकर्ताओं के रूप में बदल दिया।

उनकी लेखनी उनके जीवन में आने वाली विभिन्न चुनौतियों पर प्रकाश डालती है और ऐसी चुनौतियों के बारे में उनकी महत्त्वपूर्ण जागरूकता को दिखाती है। चूँकि वे अपनी पसन्द के विषयों पर लिखने के लिए स्वतंत्र थे, इसलिए बहुत से लेखों को पाठ्यक्रम के विस्तार के रूप में नहीं देखा जा सकता था, लेकिन उन्होंने अपने आस-पास के जीवन के बारे में अपनी बढ़ती हुई महत्त्वपूर्ण चेतना को सिद्ध किया और यही पाठ्यक्रम का अन्तिम उद्देश्य है। इस प्रक्रिया ने कक्षा में शक्ति के आयामों को भी प्रभावित किया : शक्ति के वे आयाम जो शिक्षक और विद्यार्थी के बीच और स्वयं विद्यार्थियों के बीच होते हैं, हालाँकि कई बार उन्होंने अपने लेखों में मेरे पढ़ाने के ग़ैर-परम्परागत तरीक़े पर भी सवाल उठाए।

बतौर शिक्षक मुझे जो अनुभव हुए उनमें मैंने देखा है कि शिक्षक दो समूहों में विभाजित होते हैं। एक समूह मानता है कि पाठ्यपुस्तकें परम पवित्र हैं और उनके साथ कुछ भी बदलाव नहीं किया जा सकता है। दूसरे समूह का मानना है कि वे पूरी तरह से निरर्थक हैं क्योंकि वे बच्चों की ज़रूरतों की परवाह नहीं करतीं। मेरा प्रस्ताव इस प्रकार है : पाठ्यपुस्तक को जानकारियों का एक स्रोत बना रहने दें, पर *एकमात्र* स्रोत नहीं। पाठ्यपुस्तक में उठाए गए विचारों को अपने स्वयं के प्रयास और अतिरिक्त पाठ्यसामग्री द्वारा आगे बढ़ाएँ! पाठ्यपुस्तक में जो भी गुण हों, उसका मूल्य उस शिक्षक पर निर्भर करता है जो इसका उपयोग करता है।

References

Kumar, K. (n.d.). Origin of India's textbook Culture. Comparative education review (Vol. 32, p. 452). the comparative and International Education Society.

N.(2005).NCF2005.New Delhi, Delhi: NCERT.

Winch, C. (1996). Quality and education. Oxford, UK: Blackwell.

मुरारी झा दिल्ली के एक सरकारी स्कूल में सामाजिक विज्ञान पढ़ाते हैं। वर्तमान में वे एक सलाहकार शिक्षक हैं और कक्षा-शिक्षण पद्धति को बेहतर बनाने में अपने सहयोगियों की मदद कर रहे हैं। वे पीएचडी कर रहे हैं और उनके शोध का क्षेत्र 'बच्चों की आवाज़ और पाठ्यक्रम' पर आधारित है। 2018 में उन्होंने फुलब्राइट के शिक्षण फेलो के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका का दौरा किया। उनसे murarijha1984@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** कामिनी उपाध्याय

पाठ्यपुस्तक : एक नज़र में

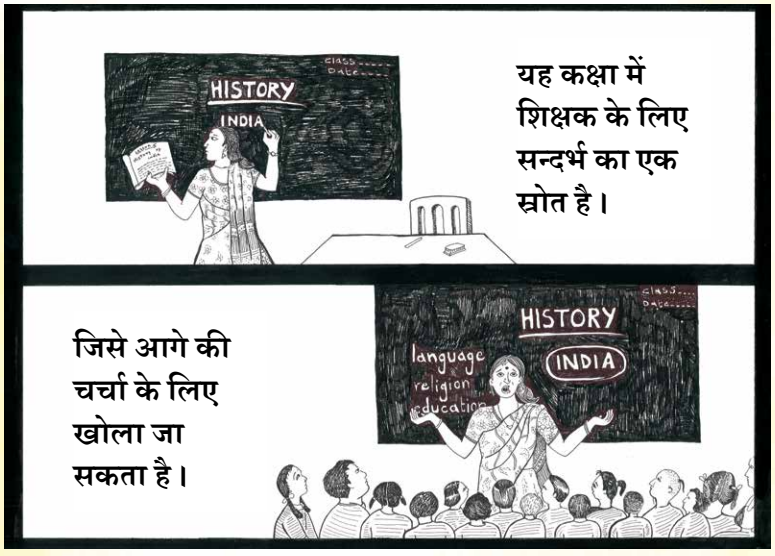

ओज़ा वासवी मयंक कुमार
vasvi.oza@apu.edu.in

शिक्षक-शिक्षार्थी के आपसी सम्बन्धों के निर्माण के लिए उपकरण के रूप में पाठ्यपुस्तकें : एक परिप्रेक्ष्य

राजराजेश्वरी टी.

सिंहावलोकन : इस लेख में कक्षा में शिक्षण-अधिगम सामग्री के रूप में पाठ्यपुस्तकों की उपयोगिता का पता लगाने का प्रयास किया गया है। लेख यह समझने की कोशिश करता है कि क्या पाठ्यपुस्तकों का डिज़ाइन और उपयोग शिक्षक और शिक्षार्थी के आपसी सम्बन्धों को सुधारने में मदद करता है।

लोकतांत्रिक प्रणाली में स्कूल का महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्थूल स्तर के समाज को सूक्ष्म स्तर की प्रक्रियाओं से जोड़ने के लिए कक्षा एक लघु जगत के रूप में कार्य करती है। लेकिन अकसर यह सवाल उठता है कि क्या महज़ स्कूल जाना और कक्षा में भाग लेने से समाज बदल जाएगा? यदि ऐसा है, तो कक्षा अभ्यासों के वे कौन-से उपकरण हैं जो मुक्ति का अनुभव कराने की दिशा में सहायता करते हैं? बाल-केन्द्रित शिक्षा पर ध्यान दिए जाने से देश में पाठ्यपुस्तकों पर बहुत चर्चा होने लगी है। स्कूली शिक्षा प्रणाली के भीतर पाठ्यपुस्तकों का एक प्रमुख स्थान है ताकि शिक्षक अपने विद्यार्थियों के लिए विशिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अधिगम के अवसरों को डिज़ाइन कर सकें और विशेष अध्ययन की माँग कर सकें।

सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में पाठ्यपुस्तक सम्बन्धी चर्चाओं में अकसर पाठ्यचर्या उद्देश्यों के कार्यान्वयन में गुणवत्ता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के आधार पर उनकी आवश्यकता पर ज़ोर दिया जाता है। निर्धारित पाठ्यपुस्तक पर एक शिक्षक की निर्भरता शैक्षिक आदर्शों को प्राप्त करने में उनके प्रतीकात्मक कार्य और दिन-प्रतिदिन कक्षा के संचालन के व्यावहारिक उपयोग में उनकी सार्वभौमिकता को दर्शाती है। हर विषय एक पाठ्यपुस्तक के साथ निर्धारित होता है, और शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वे एक शैक्षिक वर्ष में उसे पूरा करें, इसका उपयोग करके अपनी शैक्षिक योजनाएँ बनाएँ, यह सुनिश्चित करें कि विद्यार्थी इसके भीतर निर्धारित अभ्यास पूरा करें, और इसके दायरे में विद्यार्थियों के ज्ञान का मूल्यांकन करने के लिए परीक्षाएँ डिज़ाइन करें। राज्य, स्कूल के अधिकारी, अभिभावक और यहाँ तक कि विद्यार्थी भी यह स्वीकार नहीं करते कि पाठ्यपुस्तक से हटकर कुछ किया जाए। पाठ्यपुस्तक ऐसे अधिकार का प्रतीक है जिसे शिक्षा प्रणाली के भीतर शिक्षक नकार नहीं सकते। हमारे देश में सार्वजनिक शिक्षा के केन्द्रीकृत परीक्षा ढाँचे के भीतर विकसित पाठ्यपुस्तक का यह अधिकार, विशाल प्रणाली के भीतर शिक्षक और शिक्षार्थी की एक विशेष स्थिति बनाता है और उनके बीच एक विशेष सम्बन्ध बनाता है।

'पाठ्यपुस्तक संस्कृति' के क्षेत्र में (शिक्षक-पाठ्यपुस्तक मतभिन्नता, पाठ्यपुस्तक संस्कृति की औपनिवेशिक जड़ें, राष्ट्र निर्माण में पाठ्यपुस्तक की भूमिका और ज्ञान का निर्माण आदि पर) बहुत से शोध और विवाद होते रहे हैं। ये सभी शैक्षिक प्रक्रिया में इसकी भूमिका और लोकतंत्र के लिए 'आदर्श' नागरिकों के निर्माण में इसके महत्त्व के बारे में विवेचनात्मक और प्रासंगिक प्रश्न उठाते हैं। पाठ्यपुस्तकों को 'आधिकारिक ज्ञान' के रूप में माना जाता है और वे अकसर विकास के सामाजिक-संज्ञानात्मक चरणों में कई बच्चों के लिए ज्ञान का एकमात्र स्रोत बनी रहती हैं। पाठ्यपुस्तकों के विन्यास के भीतर और कक्षाओं में उनके उपयोग से शिक्षार्थियों को जानकारी, अवधारणाओं, अभ्यासों, दृश्य-सामग्री आदि के माध्यम से शिक्षा के बड़े लक्ष्य से परिचित कराया जाता है। दुनिया के बारे में बच्चे की संकल्पना, उसका व्यवस्थापन और कार्य आदि को पाठ्यपुस्तक डिज़ाइन और कक्षा में इसके उपयोग के तरीक़ों द्वारा महत्त्वपूर्ण तरीक़ों से आकार दिया जाता है।

एक ऐसी शैक्षिक प्रणाली में, जिसमें समय का

बन्धन हो और जो इसमें शामिल प्रमुख लोगों को दिन-प्रतिदिन एक विषय से दूसरे विषय पर कूदने के लिए नियमबद्ध करता हो, अनुभव का प्रश्न गौण हो जाता है। ऐसे में एक बड़ा सवाल यह सामने आता है कि क्या स्कूलों में पाठ्यपुस्तकों का वर्तमान डिज़ाइन और उपयोग, शिक्षार्थी और शिक्षक दोनों के लिए समान रूप से, कक्षा के अनुभव को स्वतंत्र बनाने में सफल है। आज पाठ्यपुस्तकों को केन्द्रीय शिक्षण-अधिगम सहायक के रूप में माना जाता है तो इस बात की जाँच करने की माँग उभरती है कि वे शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच किस प्रकार का सम्बन्ध बनाते हैं।

स्कॉटलैण्ड के दार्शनिक अलासैयर मैकइंटायर (1985) कहते हैं कि कोई भी सामाजिक प्रथा जटिल, सामाजिक रूप से स्थापित और सहकारी मानवीय गतिविधि है। किसी गतिविधि का लाभ साकार करने के लिए उस गतिविधि के लिए परिभाषित और उपयुक्त मानकों में भाग लेकर उत्कृष्टता प्राप्त करनी होती है। मैकइंटायर का दावा है कि इस लाभ को प्राप्त करने के लिए उन लोगों के बीच मज़बूत सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता है जो गतिविधि में भाग लेते हैं। प्रतिभागियों को एक-दूसरे के साथ ईमानदारी से व्यवहार करना चाहिए और दृढ़ विश्वास के साथ कार्य करना चाहिए। किसी भी अभ्यास की निरन्तरता के लिए ये गुण आवश्यक शर्तें हैं। मैकइंटायर की संकल्पना के अन्तर्गत हम इस बात को विश्वास के साथ मान सकते हैं कि शिक्षा एक सामाजिक अभ्यास है। उत्कृष्टता की तलाश करने के लिए शिक्षकों की यह ज़िम्मेदारी होती है कि वे अधिगम के ऐसे अवसर डिज़ाइन करें जो विद्यार्थियों को संवेदना, नैतिक और बौद्धिक स्वायत्तता तथा अपने साथियों की परवाह करने की नैतिकता विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करें। अधिगम के ऐसे अवसर शिक्षकों और विद्यार्थियों को अपने जीवन के साथ सम्बन्ध बनाने, अपनी सामाजिक दुनिया का अवलोकन करने, अन्तःविषयी दृष्टिकोण रखने और अपने परिवेश के साथ सहानुभूतिपूर्ण सम्बन्ध बनाने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। इस प्रकार, शिक्षक और शिक्षार्थी का आपसी सम्बन्ध किसी भी शैक्षिक अभ्यास का मूल है। क्या पाठ्यपुस्तक केन्द्रित पाठ्यचर्या इस तरह के रिश्तों के निर्माण और कक्षाओं में इस तरह के अनुभव पैदा करने के लिए एक समर्थक का काम करती है?

आइए, हम पाठ्यपुस्तक के विन्यास में चित्र/दृश्य निरूपण और कक्षा में इसके उपयोग का एक उदाहरण लें। चित्र या दृश्य, निरूपण की एक प्रक्रिया को प्रस्तुत करते हैं तो शब्द और वाक्य दूसरी को। ज्ञान के निर्माण और आत्मसात करने की संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ तब होती हैं जब शिक्षार्थी को निरूपण की संस्कृतियों के भीतर अनुभवात्मक प्रक्रियाओं के माध्यम से समाजीकृत किया जाता है। उदाहरण के लिए, सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तक पढ़ते समय उसमें दिए गए शब्द और चित्र संकेत सीखने वाले की इस बात में सहायता करते हैं कि वे घटना को समझ सकें और चरित्रों के सामाजिक निरूपण (लिंग, वर्ग, जाति आदि) को त्वचा के रंग, कपड़ों के डिज़ाइन और साझा की गई घटना के विवरण आदि के द्वारा जान सकें। दृश्य संकेतों और अभ्यास के साथ प्रस्तुत जानकारी को एक शैक्षणिक उपकरण के रूप में कार्य करना चाहिए। इसे शिक्षार्थियों को अपने स्वयं के जीवन के साथ सम्बन्ध बनाकर ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया को विकसित करने में सक्षम बनाना चाहिए। इस प्रकार पाठ्यपुस्तकों में प्रदान की गई ठोस जानकारी, अवधारणाओं और अभ्यासों का अर्थ समझने का कार्य सरल प्राकृतिक प्रक्रिया नहीं है। यह जटिल संज्ञानात्मक, सामाजिक-सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं की ज़रूरत पर ज़ोर देता है। एक उपकरण के रूप में पाठ्यपुस्तक को इन दृश्य और लिखित संकेतों की ओर विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित करने में शिक्षक की सहायता करनी चाहिए। पाठ्यपुस्तकों का डिज़ाइन ऐसा होना चाहिए कि उसके भीतर शैक्षणिक घटक निहित हों जो शिक्षक को अधिगम की प्रक्रिया के दौरान अनुभव के सृजन में सहायता करें। इस शैक्षणिक घटक की अनुपस्थिति में शिक्षक अकसर निर्धारित पाठ्यक्रम के एक निष्क्रिय वितरक बनकर रह जाते हैं और बच्चे ज्ञान के निष्क्रिय प्राप्तकर्ता बन जाते हैं। कक्षा का अनुभव अकसर अध्याय को पढ़ने, साझा की गई जानकारी का सार प्रस्तुत करने और आगामी

परीक्षा के लिए अभ्यास पूरा करने तक सीमित हो जाता है। अनुभव सृजन न कर पाने की स्थिति में ये पाठ्यपुस्तकें अकसर एक उपकरण के रूप में अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में विफल रहती हैं।

एक उपकरण या सहायक सामग्री अपने अनुभव सृजन के गुण द्वारा ज्ञान और उसके गुणों सम्बन्धी मतभिन्नता और विवादों को सामने लाती है। शिक्षार्थी अपने शिक्षक पर भरोसा करके और अपने साथियों के साथ मिलकर काम करके इन मतभिन्नताओं से गुज़रते हैं। पाठ्यपुस्तक के भीतर इन प्रक्रियाओं के अन्तर्निहित न होने से एकरूप, आंशिक ज्ञान बिना किसी जाँच के बच निकलता है।

बच्चे एक से दूसरी वैज्ञानिक घटना, एक से दूसरी ऐतिहासिक घटना और एक सूत्र से दूसरे सूत्र तक चलते चले जाते हैं, बिना उन्हें आत्मसात किए, जिससे उन्हें सीखने का कोई परिणाम नहीं मिलता है और अधिगम एक निर्वैयक्तिक कार्य बनकर रह जाता है।

पाठ्यपुस्तक की इस अवधारणा से, इसके डिज़ाइन और उपयोग से, शिक्षक-शिक्षा, मूल्यांकन, जवाबदेही आदि के क्षेत्रों में किसी अन्य शैक्षिक सुधार की गुंजाइश नहीं होती। पिछले वर्षों में एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों के साथ-ही-साथ निजी प्रकाशकों द्वारा डिज़ाइन की गई पाठ्यपुस्तकों के डिज़ाइन में भी बदलाव हुए हैं। पाठ अधिक अन्तर्क्रियात्मक हो गए हैं और विषयों को एकीकृत करने का प्रयास किया गया है। इसके बावजूद अधिकांश कक्षाओं में उनका उपयोग अभी भी उसी बँधे-बँधाए तरीक़े से होता है और पाठ्यपुस्तकें अभी भी विद्यार्थी-शिक्षक के सम्बन्धों पर हावी हैं। अगर हम कक्षाओं में शिक्षकों की नैतिक और बौद्धिक स्वायत्तता की कल्पना करते हैं तो शिक्षक और पाठ्यपुस्तकों को देखने के लिए एक नए तरह के रिश्ते की संकल्पना करनी होगी। अगर शिक्षकों को अपनी कक्षाओं में सहायक सामग्री के रूप में पाठ्यपुस्तकों के प्रभावी उपयोग को समझना है तो उनकी शैक्षणिक सामग्री का ज्ञान सशक्त होना चाहिए। पाठ्यपुस्तकों की ऐसी समझ विकसित करने और अनुभवात्मक अधिगम अभ्यासों का निर्माण करने हेतु इसके उपयोग के लिए, शिक्षक-शिक्षा को शिक्षकों में समीक्षात्मक साक्षरता का विकास करने पर ध्यान देना चाहिए।

References:

Kumar, Krishna. “Textbooks and Educational Culture.” *Economic and Political Weekly* (1986):1309-1311.

Kumar, Manoj. “Visual Literacy is Fundamental to Teacher Education Curriculum.” 16 April 2018. *thenewleam.com*. <http://thenewleam.com/2018/04/visual-literacy-fundamental- teacher-education-curriculum/>.

MacIntyre, Alaisdair. *After virtue: A study in moral theory*. London: Duckworth, 1985.

राजेश्वरी टी. चेन्नई में एक शिक्षिका हैं। उन्होंने विभिन्न कार्यक्रमों के तहत कक्षाओं में शैक्षणिक उपकरण के रूप में समीक्षात्मक साक्षरता का उपयोग करने की दिशा में शिक्षकों और बच्चों के साथ काम किया है। सम्प्रति वे सीड अकादमी, चेन्नई में बतौर अकादमिक समन्वयक कार्यरत हैं। उन्होंने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय से शिक्षा में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। उनसे rajarajeshwari.t13@apu.edu.in या rajeshwarit975@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण** : प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर** : ज्योति चौरड़िया

‘हनीकॉम्ब’ की विषय-सामग्री में सन्दर्भ की पड़ताल

रवि प्रताप सिंह

इस लेख में, मैं एनसीईआरटी द्वारा प्रकाशित सातवीं कक्षा की अँग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक हनीकॉम्ब का विश्लेषण करूँगा।

औपचारिक स्कूली शिक्षा में पाठ्यपुस्तक की भूमिका

कोई भी इस तथ्य से इन्कार नहीं कर सकता कि औपचारिक स्कूली शिक्षा में पुस्तकों की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। दूसरी ओर, यह भी सच है कि ज्ञान केवल किताबों की दुनिया तक सीमित नहीं है। अतः, हमें स्थिति का विश्लेषण करना होगा : शिक्षण में पुस्तकें किस स्तर पर एक आवश्यक उपकरण बन जाती हैं और कब शिक्षार्थी पाठ्यपुस्तक की सहायता के बिना सीखते हैं? प्रारम्भिक अवस्था में बच्चा यह सीखता है कि कैसे पढ़ना है और एक बार जब उसमें पढ़ने की क्षमता आ जाती है तो वह अपने जीवन में विभिन्न चीज़ों को सीखने के लिए विभिन्न स्रोतों से पढ़ने लगता है। इससे यह पता चलता है कि बच्चों के लिए पठन कौशल कितना महत्त्व रखता है। स्कूल में जब हम सीखने के शुरुआती चरणों में किसी बच्चे को देखते हैं तो हम पाते हैं कि लक्ष्य भाषा में ऐसी किताबें हैं जो उन्हें पढ़ने में मदद करती हैं। यह साबित हो चुका है कि मातृभाषा विभिन्न विषयों को सीखने में मदद करती है। इस प्रकार लगभग हर शिक्षाविद यही कहेगा कि लक्ष्य भाषा (हमारे मामले में हिन्दी और अँग्रेज़ी दोनों) को पढ़ाने और उन्हें मज़बूत करने के लिए मातृभाषा (हमारे मामले में गढ़वाली) का उपयोग करना चाहिए। जब हम इस बात पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि मातृभाषा विषय-सामग्री के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करती है। यह सम्बन्ध सामग्री की समझ के लिए आवश्यक है। इसके साथ ही यदि सामग्री शिक्षार्थियों के लिए सन्दर्भोचित हो तो अधिगम स्थाई होता है।

अब हम स्थिति को दो दृष्टिकोणों से देख सकते हैं। पहली तो है पाठ्यपुस्तक, जिसका हम (सुगमकर्ता) अपने स्कूलों या कक्षाओं में उपयोग करते हैं, और दूसरा है शैक्षणिक दृष्टिकोण, जिसका उपयोग हम अपने कक्षा-शिक्षण में करते हैं। पहले परिप्रेक्ष्य पर चिन्तन करते हुए हम इस बात का विश्लेषण करेंगे कि हमारी पाठ्यपुस्तकों की सामग्री हमारे शिक्षार्थी के लिए सन्दर्भोचित और प्रासंगिक है या नहीं। दूसरे, क्या यह सामग्री ऐसी दिलचस्प गतिविधियों में भाग लेने का अवसर प्रदान करती है जो बच्चों के अधिगम में सहायक हो सके। इसका मतलब यह हुआ कि क्या अभ्यास इस प्रकार के हैं जो मज़ेदार तरीक़े से सीखने में बच्चों की मदद करें। दूसरे दृष्टिकोण का सम्बन्ध शिक्षकों की ग्रहणशीलता, शिक्षण-अधिगम के बारे में उनकी मान्यताओं से है और साथ ही यह देखना भी आवश्यक है कि वे लक्ष्य भाषा को मज़बूत करने में स्थानीय भाषा का उपयोग कैसे करते हैं।

इस पृष्ठभूमि के साथ मैं अब सातवीं कक्षा में अपने अँग्रेज़ी शिक्षण के अनुभव को साझा करना चाहूँगा। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि आजकल हम अपने स्कूलों में एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों का उपयोग कर रहे हैं। सातवीं कक्षा की अँग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक का शीर्षक *हनीकॉम्ब* है।

नीचे पुस्तक की विषय-वस्तु का सारांश दिया गया है :

इकाई-1	श्री क्वेश्चन्स (कहानी) द स्क्वैरल (कविता)	लियो टॉल्स्टॉय मिल्ड्रेड बॉवर्स आर्मस्ट्रांग	*श्री क्वेश्चन्स* टॉल्स्टॉय द्वारा लिखित एक कहानी है। द स्क्वैरल कविता है।	अच्छी कहानी है, बच्चे को सोचने का मौक़ा देती है और यह कविता भी अच्छी है।
इकाई-2	ए गिफ्ट ऑफ़ चप्पल्स (कहानी) द रिबेल (कविता)	वसन्ता सूर्या डी. जे. एनराइट	*ए गिफ्ट ऑफ चप्पल्स* दक्षिण भारतीय साहित्य पर आधारित कहानी है। द *रिबेल* बच्चों के नटखटपन पर प्रकाश डालने वाली एक कविता है।	कहानी की पृष्ठभूमि एक दक्षिण भारतीय परिवार है। बच्चों के लिए इससे जुड़ पाना मुश्किल था।
इकाई-3	गोपाल एंड द हिल्सा फिश (हास्य चित्रकथा) द शेड (कविता)	फ्रैंक फ्लिन	*गोपाल एंड द हिल्सा फिश* एक हास्य चित्रकथा है। द *शेड* कविता में भाई-बहनों के बीच की बातचीत का वर्णन किया गया है।	गोपाल और हिल्सा मछली एक अच्छी हास्य चित्र कथा है।
इकाई-4	द एशेज़ दैट मेड ट्रीज़ ब्लूम(कहानी) चिवी (कविता)	विलियम इलियट ग्रिफिस माइकेल रोज़न	द *एशेज़ दैट मेड ट्रीज़ ब्लूम* एक जापानी कहानी है। *चिवी* एक कविता है जो बच्चों के लिए बड़ों द्वारा बताई जाने वाली बातों के बारे में है।	जादुई भावों वाली जापानी कहानी सुनने और आनन्द लेने के लिए अच्छी है।
इकाई-5	क्वालिटी (कहानी) ट्रीज़ (कविता)	जॉन गाल्स्वर्थी शर्ली बौर	*क्वालिटी* कहानी लन्दन की पृष्ठभूमि पर आधारित है। *ट्रीज़* एक कविता है जो हमें पेड़ों के विभिन्न उपयोगों को समझने में मदद करती है।	क्वालिटी एक कहानी है जो अच्छा सन्देश देती है लेकिन यह विदेशी पृष्ठभूमि पर आधारित है।
इकाई-6	एक्सपर्ट डिटेक्टिव्स (कहानी) मिस्ट्री ऑफ़ द टॉकिंग फैन (कविता)	शारदा द्विवेदी मौड रुबिन	*एक्सपर्ट डिटेक्टिव्स* एक अच्छी कहानी है।	बच्चों ने इसका आनन्द लिया।
इकाई-7	द इन्वेंशन ऑफ़ वीटा-वोंक (फंतासी) डैड एंड द कैट एंड द ट्री (कविता)	रोआल्ड डाह किट राइट	यह काल्पनिक कहानी है। यह मज़ेदार कविता है।	कहानी काल्पनिक है। हालाँकि कुछ वाक्यांश ऐसे हैं जिनमें कठिनाई का स्तर बहुत अधिक है। कविता में सन्दर्भ की कमी है।

इकाई-8	फायर : फ्रेंड एंड फो (जानकारीपूर्ण) मेडो सरप्राइज़ेज़ (कविता)	लुइस ब्रैंड फिलिप्स	यह पाठ अग्नि की दोहरी प्रकृति को समझने के लिए अच्छा है। यह कविता घास के मैदान के आश्चर्यों को प्रकट करती है।	सन्दर्भ के हिसाब से अच्छी है।
इकाई-9	ए बाइसिकल इन गुड रिपेयर (कहानी) गार्डन स्नेक (कविता)	जेरोम के. जेरोम म्यूरियल एल. सोन	एक हास्य कहानी	बच्चा इससे जुड़ सकता है।
इकाई-10	द स्टोरी ऑफ़ क्रिकेट	रामचन्द्र गुहा	एक ज्ञानपूर्ण पाठ	बच्चा इसके साथ आसानी से जुड़ जाएगा। हालाँकि इसका लम्बा टेक्स्ट उसके लिए उबाऊ सकता है।

अब मैं एक-एक करके उपर्युक्त अध्यायों के लिए अपने अनुभव साझा करने का प्रयास करूँगा :

इकाई-1 : *थ्री क्वेश्चन्स (कहानी),* द स्क्वैरल *(कविता)*

थ्री क्वेश्चन्स, टॉल्सटॉय की एक दार्शनिक कहानी है। जब मैंने कक्षा से तीसरा प्रश्न पूछा, जो इस प्रकार है कि उसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात क्या है? तो बच्चों की प्रतिक्रियाएँ इस प्रकार थीं – पढ़ना, खेलना आदि। जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ रही थी, वैसे-वैसे सभी बच्चे वैरागी द्वारा पूछे गए इन सवालों के जवाब जानने के लिए उत्सुक थे। कहानी के अन्त में जब वैरागी ने जवाब दिए तो सभी हैरान हो गए। फिर मैंने उनसे कहा कि कहानी के अन्तिम भाग को फिर से पढ़ें। तब उनमें से कुछ को बात समझ में आई। चूँकि यह टॉल्स्टॉय की कहानी है इसलिए स्पष्ट है कि उसे समझ पाना आसान नहीं है। मुझे ख़ुद इस अध्याय में थोड़ी कठिनाई हुई।

द *स्क्वैरल* एक छोटी कविता है। बच्चे गिलहरियों से परिचित होते हैं और उनके पास साझा करने के लिए ख़ुद के बहुत सारे अनुभव होते हैं जैसे कि गिलहरी बहुत शर्मीली होती है, हमें देखते ही जल्दी-से भाग जाती है। कविता की सामग्री बच्चों के जीवन के सन्दर्भ से जुड़ी हुई है। इसलिए वे इसे आसानी से समझ गए।

इकाई-2 : *ए गिफ्ट ऑफ चप्पल्स (कहानी),* द *रिबेल (कविता)*

ए गिफ्ट ऑफ चप्पल्स दक्षिण भारतीय पृष्ठभूमि की कहानी है। कहानी लम्बी है और बच्चों को पाठ से जुड़ने में मुश्किल हुई। अभ्यास काफी अच्छे हैं, विशेष रूप से बोलने और लिखने वाले हिस्से।

द *रिबेल* एक बहुत ही दिलचस्प कविता है। बच्चों ने कहा कि हमारी कक्षा में एक से अधिक विद्रोही हैं!

इकाई-3 : *गोपाल एंड द हिल्सा फिश (हास्य चित्रकथा), द शेड (कविता)*

बच्चों ने हास्य कथा का आनन्द लिया क्योंकि उसमें गोपाल, बीरबल और तेनालीरामन के चरित्र थे। बच्चों ने कहानी के रोल प्ले का आनन्द लिया।

द *शेड* को समझने में बच्चों को आसानी हुई क्योंकि बच्चों ने उन्हें अपने गाँव में देखा है और वे उससे परिचित हैं। अध्याय के अन्त में दिए गए अभ्यासों से उन्हें अपने इलाक़े में डरावनी जगहों के बारे में बात करने का मौक़ा मिलता है।

इकाई-4 : द *एशेज़ दैट मेड ट्रीज़ ब्लूम (जापानी कहानी), चिवी (कविता)*

द *एशेज़ दैट मेड ट्रीज़ ब्लूम* जापानी कहानी है जिसमें

जादुई शक्ति है जिसे बच्चे समझ गए। *चिवी* शीर्षक कविता से जुड़ना आसान है क्योंकि अधिकांश बच्चों को बड़ों से इस प्रकार की बातें सुनने का अनुभव है।

इकाई-5 : *क्वालिटी (कहानी), ट्रीज़ (कविता)*

क्वालिटी की पृष्ठभूमि लन्दन है। यह दो भाइयों की कहानी है जो जर्मनी में पैदा हुए और लन्दन में बस गए। कहानी का सन्देश अच्छा है, हालाँकि बच्चों के लिए एक मोची से जूते ख़रीदने के बारे में समझना मुश्किल था क्योंकि उन्होंने ऐसा नहीं देखा था। उन्होंने केवल दुकान से जूते ख़रीदे थे।

ट्रीज़ को समझना आसान है क्योंकि बच्चों को पेड़ों का अनुभव होता है। पाठ के अन्त में दिए गए अभ्यास दिलचस्प हैं, विशेष रूप से पानी और हवा पर कविताएँ लिखना।

इकाई-6 : *एक्सपर्ट डिटेक्टिव्स (कहानी), मिस्ट्री ऑफ़ टॉकिंग फैन (कविता)*

एक्सपर्ट डिटेक्टिव्स एक भारतीय की कहानी है जिसमें एक भाई और बहन एक आदमी के बारे में जानकारी इकट्ठा करने की कोशिश कर रहे हैं। वे उसके बारे में कुछ सन्दिग्ध जानकारी पाते हैं। कहानी को पढ़ते समय बच्चों ने सोचा कि कहानी के अन्त में उन्हें कहानी का चरम बिन्दु (क्लाइमेक्स) पता चलेगा। पर अन्त का निर्णय पाठकों पर छोड़ दिया गया था ताकि बच्चे अलग-अलग राय दे सकें।

मिस्ट्री ऑफ टॉकिंग फैन कविता को समझना आसान था क्योंकि बच्चे शोर मचाने वाले पंखों से परिचित थे। उन्होंने इस विचार को और आगे तक बढ़ाते हुए कहा कि यदि साइकिल में ठीक से तेल न डाला जाए तो वह भी बहुत शोर करती है।

इकाई-7 : *द इन्वेंशन ऑफ वीटा-वोंक* (फंतासी), *डैड एंड द कैट एंड द ट्री* (कविता)

द इन्वेंशन ऑफ वीटा-वोंक एक फंतासी है, लेकिन सामग्री में प्रयुक्त शब्दावली बहुत कठिन है। बच्चों के लिए इसकी पृष्ठभूमि से जुड़ना मुश्किल था, हालाँकि कहानी का विषय दिलचस्प है। अध्याय के अन्त में दिए गए अभ्यास स्थानीय भाषा का उपयोग करने के अवसर देते हैं।

डैड एंड द कैट एंड द ट्री एक कविता है जिसमें एक पिता एक पेड़ से बिल्ली को नीचे लाने की कोशिश कर रहा है। इस स्थिति को ग्रामीण सन्दर्भ में बच्चे नहीं समझ पाए।

इकाई-8 : *फायर : फ्रेंड एंड फो* (जानकारीपूर्ण), *मेडो सरप्राइज़ेज़* (कविता)

फायर : फ्रेंड एंड फो शिक्षाप्रद है क्योंकि यह आग के कारणों और उसे बुझाने के तरीक़े बताता है। बच्चे आग के ख़तरों को समझते हैं और इस सामग्री से जुड़ने में उन्हें आसानी हुई। *मेडो सरप्राइज़ेज़* कविता को समझना आसान है।

हमें अभी भी निम्नलिखित अध्यायों को पूरा करना है :

इकाई-9 : *ए बाइसिकल इन गुड रिपेयर* (कहानी), *गार्डन स्नेक* (कविता)

ए बाइसिकल इन गुड रिपेयर एक हास्य कहानी है और बच्चों के लिए इसे समझना आसान है क्योंकि उन्हें साइकिल का अनुभव होता है और इससे उन्हें कहानी को समझने में मदद मिलेगी।

गार्डन स्नेक एक कविता है जो बताती है कि अधिकांश साँप मनुष्य को हानि नहीं पहुँचाते हैं। अधिकांश बच्चों ने साँपों को देखा है और वे इस दृश्य से परिचित हैं। इससे उन्हें कविता की सामग्री को समझने में मदद मिलेगी।

इकाई-10 : *द स्टोरी ऑफ क्रिकेट*, क्रिकेट के इतिहास के बारे में बताती है। वैसे तो बच्चों के लिए क्रिकेट हमेशा ही पसन्दीदा विषय होता है, लेकिन यह पाठ बहुत लम्बा है और बच्चे इससे ऊब सकते हैं।

दस में से पाँच इकाइयाँ ऐसी हैं जो मुझे कक्षा-शिक्षण के दौरान कठिन लगीं। इस कठिनाई के मुख्य कारण इस प्रकार हैं – ग़ैर-प्रासंगिक सामग्री, लम्बे पाठ्य और जटिल शब्दावली।

नीचे लेखकों के बारे में तालिका दी गई है।

लेखक/लेखिका का नाम	संक्षिप्त नोट
लियो टॉल्स्टॉय	सुप्रसिद्ध रुसी लेखक
वसन्ता सूर्या	तमिलनाडु में जन्म और तमिल फिल्म उद्योग में निर्देशिका और अभिनेत्री के रूप में भी काम किया।
मिल्ड्रेड बॉवर्स आर्मस्ट्रांग	न्यूयॉर्क, अमरीका में जन्म, इन्हें कार्बन साइंस की रानी के रूप में भी जाना जाता है।
फ्रैंक फ्लिन	सिडनी में जन्म, पेशे से डॉक्टर
विलियम इलियट ग्रिफिस	फिलाडेल्फिया, पेंसिल्वेनिया अमरीका में जन्म, शिक्षक
माइकेल रोज़न	लन्दन, ब्रिटेन में जन्म, बच्चों के उपन्यासकार
जॉन गाल्स्वर्थी	इंग्लैण्ड में जन्म, लेखक
शर्ली बौर	न्यूयॉर्क में जन्म, लेखिका
शारदा द्विवेदी	मुम्बई में जन्म, लेखिका
मौड रुबिन	अमरीका के कोलोराडो में जन्म, लेखिका
किट राइट	यूके के क्रॉकहैम हिल में जन्म, लेखक
रोआल्ड डाह	कार्डिफ़ यूके में जन्म, लेखक
लुइस ब्रैंड फिलिप्स	लोवेल, मैसाचुसेट्स यूएसए में जन्म, लेखक
जेरोम के. जेरोम	इंग्लैंड के कैल्डमोर, वाल्साल में जन्म, लेखक
म्यूरियल एल. सोन	कनाडा में जन्म, लेखिका
रामचन्द्र गुहा	देहरादून में जन्म, लेखक

उपर्युक्त तालिका से पता चलता है कि सोलह लेखकों में से केवल तीन भारतीय लेखक हैं : एक तमिलनाडु से, एक मुम्बई से और एक देहरादून से।

जब मैं इस लेख के पहले भाग में उल्लिखित संकेतों के आधार पर हनीकॉम्ब को देखता हूँ तो मेरा ध्यान निम्नलिखित बिन्दुओं की ओर जाता है :

- पुस्तक में प्रासंगिक सामग्री की कमी है, ख़ासकर जब हम ग्रामीण पृष्ठभूमि के स्कूलों में इस पुस्तक का उपयोग कर रहे हैं। हालाँकि इसे नए अधिगम के सम्पर्क में आने के अवसर के रूप में भी देखा जा सकता है।
- पुस्तक में शिक्षक के लिए नोट्स नामक भाग बहुत अच्छा है जो शिक्षक को अध्याय विशेष की सामग्री को समझने में मदद करता है।
- पुस्तक बच्चों को मनोरंजन के साथ सीखने के पर्याप्त अवसर प्रदान करती है।
- पुस्तक में स्थानीय भाषा को कक्षा में प्रयुक्त करने के अवसर भी उपलब्ध हैं।

अन्तिम टिप्पणी

मैंने इस पुस्तक का अपने स्कूल में पहली बार उपयोग किया है और ये मेरे विचार हैं।

चूँकि यह पुस्तक एनसीईआरटी द्वारा प्रकाशित की गई है, इसलिए यह सातवीं कक्षा के लिए अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तक के लिए निर्धारित कुछ मापदण्डों का ध्यान रखने का प्रयास करती है। किन्तु यदि पूरे भारत के स्कूलों में इस पुस्तक का उपयोग किया जाए तो, विविधता के कारण, इसकी सामग्री में निश्चित रूप से प्रासंगिकता की कमी महसूस होगी।

इस पुस्तक में विदेशी लेखकों का प्रभाव बहुत स्पष्ट है तथा इसमें और अधिक भारतीय लेखकों को शामिल करने की आवश्यकता है, हालाँकि एक ही पुस्तक में पूरे देश की सन्दर्भ सामग्री रखना लगभग असम्भव है।

अन्य दृष्टियों से यह पुस्तक सन्तुलित है क्योंकि इसमें सुगमकर्ताओं को मज़ेदार गतिविधियों के साथ पढ़ाने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं और इसके साथ ही बच्चों के लिए रचनात्मकता की भी गुंजाइश है। मुझे लगता है कि एनसीईआरटी की किताबों को बेहतर तरीक़े से समझने में बच्चों की मदद करने के लिए कम स्तर वाली अन्य पुस्तकों की आवश्यकता है।

एक अन्य सुझाव है कि : इस पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने के लिए एससीईआरटी को चाहिए कि वह ऐसे कुछ पाठों को शामिल करे जो उनके क्षेत्रों के लिए प्रासंगिक हों। फिर यह पुस्तक शिक्षार्थियों और सुगमकर्ताओं के लिए वरदान साबित होगी।

रवि प्रताप सिंह पिछले सात सालों से अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली से जुड़े हुए हैं। वे सातवीं और आठवीं कक्षा को अँग्रेज़ी पढ़ाते हैं। उनसे ravi.singh@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** ज्योति चौरड़िया

पाठ्यपुस्तकों का दायरा बढ़ाकर, सोच का दायरा बढ़ाना

साची खण्डपुर

पाठ्य (text) की परिभाषा करते हुए हम कह सकते हैं कि इससे हमें ऐसी प्राथमिक या द्वितीयक सूचना मिलती है जो किसी विषय विशेष के अध्ययन में सहायक होती है। संयुक्त राज्य अमरीका के कॉलेज में मुझे अपनी पहली कुछ कक्षाओं में यही बात पढ़ाई गई थी। यह सुनकर मैं तो भ्रम में पड़ गई क्योंकि भारत में स्कूली शिक्षा के दौरान मुझे सिखाया गया था कि पाठ्य का सम्बन्ध केवल पाठ्यपुस्तकों से है। ऐसी पाठ्यपुस्तक जिसका अनुसरण किसी विशेष पाठ्यक्रम के अध्ययन में मानक के रूप में किया जाए। मुझे बड़ा आश्चर्य होता था क्योंकि कॉलेज में मेरी अधिकांश कक्षाओं में किसी भी पाठ्यपुस्तक का उपयोग नहीं किया जाता था। मुझे देखने के लिए फ़िल्में, पढ़ने के लिए भाषण और आत्मसात करने के लिए कहानी व गद्य लेखों की पुस्तकें दी जाती थीं। मैं इस बात से बिल्कुल अपरिचित थी कि इस प्रकार की सामग्री किसी कोर्स के शिक्षण-अधिगम में यदि अधिक नहीं तो उतनी ही प्रभावी हो सकती है।

मुझे तो इस बात की आदत थी कि पाठ्यपुस्तक से कुछ पढ़कर सुना दिया जाए और यह कहा जाए कि मेरे उत्तर पाठ्यपुस्तक की सामग्री से मेल खाते हुए होने चाहिए वरना मैं अकादमिक रूप से कुशल नहीं मानी जाऊँगी। पाठ्यपुस्तक की जानकारी सही मानी जाती थी, भले ही वह पुरानी और अप्रचलित हो। उदाहरण के लिए बारहवीं कक्षा में उद्यमिता की पाठ्यपुस्तक में हमें कम्पनी अधिनियम 1956 के बारे में पढ़ाया गया था। हमें बताया गया था कि हमें अधिनियम के सभी प्रावधानों को याद रखना होगा। हमें यह कभी नहीं सिखाया गया कि इस अधिनियम की जगह पर कम्पनी अधिनियम 2013 लागू हो चुका है। कक्षा में प्राप्त ज्ञान अप्रचलित और अनुपयुक्त था क्योंकि विद्यार्थियों को प्रामाणिक और उपयोगी ज्ञान देने से अधिक महत्त्वपूर्ण इस बात को माना जाता था कि पाठ्यपुस्तक का पालन किया जाए।

मेरा मानना है कि शिक्षा के शुरुआती चरणों में पाठ्यपुस्तकें बहुत महत्त्वपूर्ण होती हैं। वे एक ऐसी रूपरेखा प्रदान करती हैं जिसके भीतर शिक्षक अपने विद्यार्थियों को अनुदेश देते हैं। पाठ्यपुस्तकें विद्यार्थियों को कक्षा में सिखाई गई सामग्री को अधिक आसानी से सीखने में सक्षम बनाती हैं क्योंकि सामग्री को बेहतर ढंग से सीखने के लिए इनको सन्दर्भ बिन्दु के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इसके बावजूद मुझे लगता है कि पाठ्यपुस्तकों को बेहतर ढंग से संरचित किया जाना चाहिए। उपर्युक्त उदाहरण में यदि पाठ्यपुस्तक को नए अधिनियम के विशोधन के बाद सम्पादित कर दिया जाता तो वह आज की वास्तविकताओं के लिए अधिक प्रासंगिक होती। इस बात को शायद पाठ्यपुस्तकों की समयबद्ध समीक्षाओं द्वारा सुनिश्चित किया जा सकता है जिससे कि यह सुनिश्चित हो सके कि अप्रचलित सामग्री के स्थान पर अधिक प्रामाणिक जानकारी दे दी गई है।

मेरा यह भी मानना है कि निरर्थक जानकारी पर विद्यार्थियों की परीक्षा नहीं ली जानी चाहिए। उदाहरण के लिए मेरी बारहवीं कक्षा की राजनीति विज्ञान की पाठ्यपुस्तक में 1989 के बाद बनी गठबन्धन सरकारों और सम्बन्धित प्रधानमंत्रियों का एक फ्लो-चार्ट (प्रवाह तालिका) दिया गया था। उस वर्ष की बोर्ड परीक्षा के प्रश्नपत्र में इस फ्लो-चार्ट के लिए चार अंक निर्धारित थे। अगर आगे चलकर हममें से कोई भी राजनीतिक, वैज्ञानिक और नीति-निर्माता बने तो हमें इस जानकारी से मदद मिलेगी कि सरकार की किसी प्रणाली विशेष के विभिन्न फ़ायदे और नुक़सान क्या हैं, न कि इससे कि हमारे जन्म से एक दशक पहले कौन प्रधानमंत्री था। पाठ्यपुस्तकें तभी सहायक होती हैं जब वे हमारे समय की वास्तविकताओं को दर्शाएँ।

इसके साथ ही यह बात भी समझ लेनी चाहिए कि पाठ्यपुस्तक एकमात्र ऐसी सामग्री नहीं है जो हमारे समय की वास्तविकताओं को दर्शाती है। फ़िल्म, डॉक्यूमेन्ट्री, लेख, भाषण और सोशल मीडिया

प्लेटफ़ॉर्म जैसे अन्य माध्यम भी हैं जिनका उपयोग शिक्षण के तरीक़ों के रूप में किया जा सकता है। अधिकांश विद्यार्थी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में अपने आस-पास और विश्व स्तर पर होने वाली घटनाओं के बारे में अधिक जानकारी पाने के लिए इन स्रोतों का उपयोग करते हैं। इसलिए शिक्षा अधिक प्रभावी तब होगी जब विद्यार्थियों को उन तरीक़ों के माध्यम से पढ़ाया जाए जिन्हें वे स्वयं सक्रिय रूप से खोजते हैं। हो सकता है कि किसी टॉक शो में किसी प्रासंगिक मुद्दे पर एक हास्य अभिनेता की टिप्पणी उतनी ही महत्त्वपूर्ण हो जितनी कि एक पाठ्यपुस्तक में विशिष्ट रूप से दर्शाए गए उसी मुद्दे के आँकड़े। ये तरीक़े विद्यार्थियों को उस मुद्दे के बारे में बहु-सांस्कृतिक और बहु-आयामी परिप्रेक्ष्य विकसित करने में सक्षम कर सकते हैं।

पढ़ाने का कोई भी तरीक़ा विलग रूप से इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। हर तरीक़े के अपने अनूठे फ़ायदे और कमियाँ हैं। प्रत्येक विधि की कमियों को कम किया जा सकता है, यहाँ तक कि किसी अलग विधि का उपयोग पूरक के रूप में करके उसे पूरा भी किया जा सकता है। इससे विद्यार्थियों का तनाव कम होगा जो हमारे देश की व्यापक समस्या है। मीडिया और प्रिंट के विविध रूपों का उपयोग करने से यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि विद्यार्थियों में थकान कम हो और जानकारी को आत्मसात करना तनावपूर्ण होने की बजाए एक आनन्ददायक गतिविधि बन जाए।

एक हद तक शायद शिक्षकों को भी पाठ्यक्रम निर्धारित करने की थोड़ी अधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। पाठ्यक्रम और कोर्स की अवधि के दौरान किया जाने वाला कोई भी परिवर्तन विशेषज्ञों और शिक्षकों के एक बोर्ड द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए। इससे क्षेत्रीय वास्तविकताओं और विभिन्नताओं के हिसाब से पाठ्यपुस्तक का अधिक लचीले तरीक़े से उपयोग हो सकेगा। आख़िरकार, किसी भी जानकारी की प्रासंगिकता उस क्षेत्र पर निर्भर करती है जहाँ इसका उपयोग किया जाता है। पाठ्यपुस्तक के भीतर ही एक अन्य विकल्प उपयोगी साबित हो सकता है। उदाहरण के लिए, बारहवीं कक्षा की उद्यमिता की पाठ्यपुस्तक में व्यवसाय स्थापित करने वाले अनुभाग में मुम्बई शहर को लेकर विशिष्ट जानकारियाँ दी गई थीं। दिल्ली में रहने वाली मुझ जैसी विद्यार्थी के लिए इन जानकारियों का कोई वास्तविक महत्त्व नहीं था। इसलिए पाठ्यपुस्तक में देश के सभी महानगरीय शहरों में व्यवसाय स्थापित करने के बारे में जानकारी शामिल की जानी चाहिए थी, जिससे विद्यार्थियों को अपने क्षेत्र के लिए सबसे अधिक प्रासंगिक तरीक़ों का अध्ययन करने का विकल्प मिल सके या फिर इस तरह के अनुभाग को पूरी तरह से समाप्त कर दिया जाना चाहिए था। काम के इस तरह के बोझ का कोई मतलब नहीं है जिसका भविष्य में कोई उपयोग न हो।

मेरी पढ़ाई पारम्परिक प्रणाली में हुई जिसमें कोर्स का अध्ययन करने के लिए मैंने केवल कक्षा के लिए निर्धारित पाठ्यपुस्तकों का उपयोग किया। इस प्रणाली का यह फ़ायदा था कि मेरे सहपाठियों और मैंने कभी चिन्ता नहीं की क्योंकि हमें पता था प्रत्येक प्रश्न पाठ्यपुस्तक से ही पूछा जाएगा। और इसमें ख़राबी भी यही थी : हमने यह चिन्ता नहीं की कि हमें वास्तव में कुछ समझ आया बस, पाठ याद कर लें – यही काफ़ी था। हम जानते थे कि हमें बहुत अधिक आलोचनात्मक चिन्तन में नहीं उलझना है। यह बात कॉलेज की संरचना के एक़दम विपरीत रही : वहाँ याद करने के लिए बहुत कम या कोई सामग्री नहीं होती। हर चीज़ के बारे में पढ़ना, देखना और सुनना होता है और उसका आलोचनात्मक विश्लेषण करना होता है। इससे हमें विचार-विमर्श करने और कक्षा की चर्चाओं में विविध दृष्टिकोण लाने की स्वतंत्रता मिलती है, जो सभी की सोच के दायरे को व्यापक करती है, जिसमें प्राध्यापक भी शामिल हैं और शायद यह बात सबसे महत्त्वपूर्ण है।

साची खण्डपुर मैसाचुसेट्स के पायनियर वैली में माउण्ट होलिओक कॉलेज में बैचलर ऑफ़ आर्ट्स प्रोग्राम के प्रथम वर्ष की छात्रा हैं। उन्होंने 2018 में दिल्ली पब्लिक स्कूल, नोएडा से अपनी स्कूली शिक्षा पूरी की। उनसे khand22s@mtholyoke.edu पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** प्रीति मिश्रा **कॉपी एडिटर :** ज्योति चौरड़िया

प्रारम्भिक कक्षाओं में पाठ्यपुस्तकों के साथ काम करने का अनुभव

सौरभ सोम, अर्चना द्विवेदी, मोनू कुमार और प्रमोद काण्डपाल

भारतीय कक्षाओं को अकसर इस बात के लिए दोषी ठहराया जाता कि वे पाठ्यपुस्तक द्वारा निर्धारित की जाती हैं *(कुमार, 1988)*। *शिक्षा बिना बोझ के (भारत सरकार, 1992)* रिपोर्ट ने भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिक्षण-अधिगम की निराशाजनक स्थिति का अवलोकन किया। यह बताती है कि कक्षा में विद्यार्थियों को जिस तरह से पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है, वह उनके लिए अर्थहीन और अप्रासंगिक दोनों होता है और इसलिए उनका बाल मन शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में नहीं जुड़ता। जिन एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकों *(एनसीईआरटी, 2006, 2007)* को राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 *(एनसीईआरटी, 2005)* के बाद तैयार और प्रकाशित किया गया, वे इस कमी को सम्बोधित करती हुई प्रतीत होती हैं।

इस लेख में हम अपने स्कूल में पहली और दूसरी कक्षा में एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकों के इस्तेमाल का अपना अनुभव प्रस्तुत करेंगे।

पहले हम स्कूल के बारे में बताएँगे। फिर कक्षा में एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों की शुरुआत करने; कक्षा में हमारे सामने मौजूद शैक्षणिक चुनौतियों; कक्षा में हम जिन शिक्षणशास्त्रीय पहलुओं को स्थापित करने की कोशिश कर रहे थे; एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकों ने किस तरह से हमारे परिकल्पित शिक्षणशास्त्र को वास्तविकता में बदलने में मदद की और पाठ्यपुस्तकों की सीमाएँ आदि पहलुओं पर चर्चा करेंगे। अन्त में हमने अपने इस अनुभव से सीखे हुए सबक़ और भविष्य के काम की योजना पर भी चर्चा की है।

स्कूल का सन्दर्भ

अज़ीम प्रेमजी स्कूल उत्तराखण्ड के एक गाँव में स्थित है। यह स्कूल शिक्षा का अधिकार अधिनियम *(भारत सरकार, 2009)* के मानदण्डों और प्रकृति का पालन करते हुए प्राथमिक स्तर पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने हेतु प्रतिबद्ध है। यहाँ के विद्यार्थी निम्न से मध्यम आय वर्ग के परिवारों से आते हैं और उनमें से कई विद्यार्थियों को घर में अकादमिक सहायता उपलब्ध नहीं होती।

यह स्कूल राज्य बोर्ड से सम्बद्ध है और 2012 में अपनी स्थापना के बाद से राज्य बोर्ड की पाठ्यपुस्तकों का उपयोग कर रहा है। वर्तमान शैक्षिक वर्ष में उत्तराखण्ड सरकार ने सभी स्कूलों को एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों को लागू करने के लिए कहा है। राज्य शिक्षा विभाग ने पुस्तकों को राज्य स्तर पर छापा और उन्हें बाज़ार में उपलब्ध कराया। हालाँकि हमने ये पुस्तकें एनसीईआरटी प्रकाशन से सीधे ही ख़रीदीं और उन्हें विद्यार्थियों में वितरित किया।

पहली और दूसरी कक्षा में पढ़ाने का सन्दर्भ

हमने पहले उल्लेख किया है कि हमारे कई विद्यार्थियों को घर पर अकादमिक सहायता नहीं मिल पाती और उनमें से कई पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी हैं। विद्यार्थियों की भाषा और पाठ्यपुस्तक की भाषा भी काफ़ी हद तक भिन्न होती है। इसलिए शिक्षकों को लगातार बहु-स्तरीय कक्षाओं की वास्तविकता को सम्बोधित करना पड़ता है और विद्यार्थियों के सीखने की गति सुनिश्चित करनी होती है। कई प्रयासों के बावजूद हमें लगा कि पहली और दूसरी कक्षा के अधिकांश विद्यार्थियों के अधिगम

स्तर को कक्षा के उपयुक्त स्तर तक लाना कठिन काम था।

हमारे स्कूल में निरन्तर शिक्षक पेशेवर विकास पहलक़दमियाँ और प्रक्रियाएँ होती रहती हैं। बतौर शिक्षक समुदाय, शिक्षा के बारे में हमारा दृष्टिकोण है कि शिक्षा को समस्या खड़ी करने वाली (Problem-posing), प्रामाणिक *(फ्रेरे, 1968)*, वास्तविक दुनिया से जुड़ी और विद्यार्थियों के लिए प्रासंगिक और अर्थपूर्ण होना चाहिए। शिक्षण योजनाओं में समूह कार्य, विद्यार्थियों की आवाज़ को शामिल करने और रचनात्मक मूल्यांकन *(ब्लैक एंड विलियम, 1998)* करने के अवसर होने चाहिए। शिक्षण इकाइयों को अलग-अलग विषयों के रूप में पेश करने के बजाए थीमों के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए *(डिवी, 1923)*। शोध साहित्य में विषय एकीकरण, समूह कार्य, मूल्यांकन और कक्षा-प्रबन्धन पर फोकस करते हुए पाठ्यक्रम को एनसीएफ़ 2005 *(एनसीईआरटी, 2005)* द्वारा निर्धारित अपेक्षाओं के साथ-ही-साथ भारतीय कक्षा की वास्तविकताओं के अनुकूल बनाने का सुझाव दिया गया है *(सोम और नटराजन, 2013)*। इस सन्दर्भ में हमने पाया कि एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकें हमारी कई चुनौतियों का समाधान प्रदान करती हैं और हमारे परिकल्पित शिक्षणशास्त्र के उपयुक्त हैं।

एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकें और शिक्षण-शास्त्र की परिकल्पना

शैक्षिक वर्ष की शुरुआत में जब हमने पहली और दूसरी कक्षा में पाठ्यपुस्तकों को काम में लाना शुरू किया तो हमने महसूस किया कि दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों को इसके साथ तालमेल बिठाने में मुश्किल हो रही है क्योंकि दूसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक लगातार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पहली कक्षा में सिखाई गई अवधारणाओं से सम्बन्धित थी। इसलिए हमने दोनों कक्षाओं को मिलाने और सभी विद्यार्थियों के समक्ष इन पाठ्यपुस्तकों को सिलसिलेवार प्रस्तुत करने का निर्णय लिया। इसके अतिरिक्त इस लेख के लेखकों ने इन कक्षाओं के सभी विषयों की पाठ्यपुस्तकों को मिलकर पढ़ा और शिक्षण इकाइयों की योजना बनाई। इन शिक्षण इकाइयों में पाठ्यपुस्तकों के उपयोग के सम्बन्ध में आगे चर्चित पहलुओं पर ध्यान दिया गया।

समस्या खड़ी करना और गतिविधि आधारित शिक्षण

कुल मिलाकर, पाठ्यपुस्तकों के उपयोग से कक्षा में विद्यार्थियों और शिक्षकों दोनों के लिए कई समस्याओं का समाधान हुआ। हमने पूरी कक्षा के साथ सभी गतिविधियाँ कीं जैसे पाठ्यपुस्तक से कविता पाठ करना, प्रश्नोत्तर आदि। कभी-कभी तो हम पहले पूरी कक्षा के सामने सभी गतिविधियों का प्रदर्शन करते और बाद में सवाल पूछते जैसे कि क्या तैरता है और क्या डूबता है? क्या भारी है और क्या हल्का है? गतिविधि-आधारित शिक्षण के तहत विद्यार्थियों ने कैलेण्डर बनाए, प्रत्येक कक्षा में कितने विद्यार्थियों को अण्डा पसन्द है और कितनों को दूध, कक्षाओं में दरवाज़ों और खिड़कियों की संख्या आदि विषयों पर आँकड़ों का संग्रहण किया और बाद में उन्होंने अपना काम बाल शोध मेले में प्रस्तुत किया। इसी तरह विद्यार्थियों ने गमलों में बीज बोए और दो महीने तक अंकुरण तथा पौधे की वृद्धि का अवलोकन किया।

पाठ के अन्त में दिए गए अभ्यास दिलचस्प हैं। अभ्यास करते समय विद्यार्थी पढ़ने, लिखने और अपने विचारों को तर्क के साथ प्रस्तुत करने में सक्षम होते हैं। अँगूठे की छाप, बूझो मेरा रंग, हाट का खेल, क्या भाता है, क्या नहीं भाता है जैसे पाठों ने विद्यार्थियों को खेलते समय सीखने के पर्याप्त अवसर प्रदान किए।

समूह कार्य

विद्यार्थियों को समूहों में काम करने के कई अवसर दिए गए। समूह कार्य का प्रमुख तरीक़ा पाठ्यपुस्तकों को पढ़ते समय इसमें दी गई समस्याओं को एक साथ मिलकर हल करना था।

पाठ को वास्तविक दुनिया से जोड़ना

पाठ्यपुस्तकों की सामग्री का वास्तविक दुनिया से भरपूर जुड़ाव है, विशेष रूप से गणित और हिन्दी में। उसमें दिए हुए चित्र विद्यार्थियों के अनुभवों

से सम्बन्धित हैं : रसोई, कक्षा-कक्ष, स्कूल, मध्यावकाश और गाँवों के दृश्य दिए गए हैं जिन्हें वे अपने आस-पास देखते रहते हैं। हिन्दी और गणित की पाठ्यपुस्तक में प्रयुक्त सभी शब्द सरल हैं और विद्यार्थी उनसे परिचित हैं। इससे न केवल विद्यार्थियों को विषय-सामग्री के साथ जुड़ने में मदद मिली, बल्कि इससे उन्हें अवधारणाओं को बेहतर ढंग से समझने में भी मदद मिली। उदाहरण के लिए शुरुआती कक्षाओं में स्थानीय मान की अवधारणा को पढ़ाना हमेशा मुश्किल होता है। करेंसी नोटों और सिक्कों के उपयोग ने विद्यार्थियों को वास्तविक जीवन के लेन-देन की स्थिति से जोड़कर अवधारणा को विकसित करने में मदद की। विद्यार्थियों ने यह बात समझी कि एक रुपए के दस सिक्के, दस रुपए के एक सिक्के या एक नोट के बराबर होते हैं।

इसी तरह अँग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक में चक्कर देने वाले हिण्डोले (merry-go–round) का जाना-पहचाना उदाहरण है, जिसके बाद वृत्त पर एक पाठ है जो वृत्त का उपयोग करके विभिन्न छवियों को बनाने का अवसर प्रदान करता है और अन्त में अन्य आकृतियों का परिचय देता है।

गणित की पाठ्यपुस्तक में वास्तविक दुनिया की समस्याओं को पढ़ने और समझने पर ध्यान दिया गया है, जिसके लिए गणितीय संक्रियाओं या गणितीय सोच की आवश्यकता होती है। अधिकांश संख्यात्मक समस्याओं को सन्दर्भ के अनुसार और बहुत सारे टेक्स्ट के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह विद्यार्थियों के पढ़ने और समझने के कौशल को भी बढ़ाता है, बशर्ते शिक्षक पढ़ने में विद्यार्थियों की मदद करें और उन्हें अपनी गति के हिसाब से पाठ्यपुस्तक की समस्याओं को हल करने दें। विद्यार्थियों के लिए इस बात की भी पर्याप्त गुंजाइश है कि वे ख़ुद सामग्री के साथ जुड़ें और आँकड़े एकत्र करें जैसे कि चटाई या अपनी कक्षा की लम्बाई को मापने के लिए अपने स्वयं के पैरों का उपयोग करना।

विषयों का एकीकरण

इस प्रकार गणित, हिन्दी और अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकों में थीमगत समन्वय है। सभी पाठ्यपुस्तकों में पर्यावरण जागरूकता, संवेदनशीलता और सक्रियतावाद से जुड़े विषय हैं जो बाद में जाकर यानी तीसरी से पाँचवीं कक्षा में एक अलग विषय के रूप में पढ़ाए जाने वाले पर्यावरण अध्ययन के साथ जुड़ेंगे। मुख्य रूप से गणित में डूबने और तैरने, लुढ़कने और फिसलने के प्रकरण हैं और फिर दोनों भाषा की पाठ्यपुस्तकों में इनका उल्लेख है जिससे भौतिकी में बहुत जटिल या गूढ़ अवधारणाओं का विकास हो सकता है। अन्य उदाहरण कविताएँ हैं जो हमारे और अन्य जानवरों के जीवन में पेड़ों के महत्त्व को दिखाने के लिए हैं। अँग्रेज़ी और हिन्दी दोनों में कुछ अन्य विचार भी दिए गए हैं जैसे बीज बोना और पशुओं की देखभाल, गति, बादल, वर्षा, इन्द्रधनुष, विभिन्न प्रकार के घर, पशु और उनके शिशु तथा उनके निवास स्थान, परिवार, शरीर के अंग आदि।

अँग्रेज़ी और गणित दोनों में और कुछ हद तक हिन्दी में भी सामान्य अवधारणाएँ जैसे आकृति, अवस्थिति (location) का वर्णन करना : ऊपर, नीचे, निकट, दूर, अन्दर और बाहर आदि प्रस्तुत की गई हैं।

पाठ्यपुस्तकें विद्यार्थियों की अभिव्यक्ति और शैक्षणिक विधियों के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करने के अवसर प्रदान करती हैं। जैसे कविता को हाव-भाव के साथ गाना, कहानी सुनाना, रोल प्ले, कला और हस्तकौशल के काम (उदाहरण के लिए पेड़, इन्द्रधनुष, पतंग, फूल आदि बनाना), नाटक और खेल की तस्वीरें, मधुबनी और वरली जैसी कला विधाएँ आदि। एक प्रकार से देखा जाए तो यह शैक्षिक और सृजनात्मक क्षेत्र के पारम्परिक विचारों के बीच अन्तर को ख़त्म करता है।

मूल्यों और कौशलों को प्रोत्साहन देना

विषय-सामग्री और प्रस्तुति दोनों ही तरह से पुस्तक लोकतांत्रिक समाज के लिए आवश्यक मूल्यों से परिचित करवाती है। उदाहरण के लिए अँग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक में एक दर्ज़ी एक सुअर से एक-दूसरे की मदद करने के बारे में बात करता है। एक अन्य कहानी में एक बाघ और एक मच्छर यह दिखाते हैं कि हर किसी में कुछ-न-कुछ विशेषता होती है और किसी को भी पूरी तरह से मज़बूत या कमज़ोर के रूप

में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। पाठ्यपुस्तकों में कहानियाँ रचनात्मक सन्देशों के साथ समाप्त होती हैं। यह पाठ्यपुस्तक तर्क, अनुमान, विश्लेषण, अपने विचारों को अभिव्यक्त करने और कल्पना करने की क्षमता को बढ़ावा देने में मदद करती है।

लैंगिक सन्तुलन और पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता

पाठ्यपुस्तक में लैंगिक सन्तुलन बनाए रखने की कोशिश की गई है, हालाँकि कहीं-कहीं अपवाद भी मिल जाते हैं, जैसे कि एक कविता में 'ए नाइस बॉय लाइक मी' का उल्लेख किया गया है, या पशुओं के बारे में बताते समय उन्हें अधिकतर *नर* (he) के रूप में इंगित किया गया है।

एक प्रभावी उपकरण के रूप में पाठ्यपुस्तकें

हमारे सन्दर्भ में अधिगम के लिए उपयुक्त और बने-बनाए साधन प्राप्त करना एक बड़ी चुनौती है। वैसे ये पाठ्यपुस्तकें आवश्यक सहायता प्रदान करती हैं और हमारे आस-पास के वातावरण में आसानी से उपलब्ध संसाधन भी सुझाती हैं। इसके अलावा, विभिन्न सामग्रियों को प्रस्तुत करते हुए पाठ्यपुस्तकों ने कक्षा में उपयोग के लिए समृद्ध साहित्य की उपलब्धता को औचित्य प्रदान किया है।

हिन्दी और अँग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक में विशेष अक्षरों और शब्दों को परिचित करवाने पर स्पष्ट रूप से ध्यान दिया गया। उदाहरण के लिए हिन्दी पाठ्यपुस्तक में *आम की कहानी* नामक एक चित्र-कथा थी, जिसने विद्यार्थियों को चित्र-कथा के आधार पर अपने विचार व्यक्त करने, प्रश्न पूछने और जवाब देने के लिए सक्षम बनाया। पत्तियों पर एक और पाठ पढ़ाते हुए हमने स्कूल परिसर से विभिन्न प्रकार के पत्ते एकत्र किए, इसके बाद पत्तियों के आकार और उनकी भिन्नता पर चर्चा की और पुस्तक में लिखे नामों के साथ प्रत्येक की तुलना की, इस प्रकार उन्हें अक्षरों को पहचानने और पूरे शब्द का अनुमान लगाने में मदद मिली।

पाठ्यपुस्तक के बारे में समग्र टिप्पणियाँ

पाठ्यपुस्तक का डिज़ाइन ऐसा है जो अधिगम को आसान बनाता है। अक्षरों के फॉण्ट का आकार छोटे बच्चों के लिए उपयुक्त है। काग़ज़ की गुणवत्ता वर्कशीट के रूप में उपयोग करने के लिए काफ़ी अच्छी है। रंग संयोजन में विविधता है और प्रत्येक पाठ की थीम के साथ ठीक बैठता है।

पुस्तक की सामग्री और प्रस्तुति में रचनात्मक मूल्यांकन की गुंजाइश है। हमने विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त किए गए अधिगम के स्तर पर नज़र रखने के लिए एनसीईआरटी अधिगम के प्रतिफल सूचकों (एनसीईआरटी, 2017) का उपयोग किया है। विषयों को थीम, सामग्री, अवधारणाओं, कौशल और मूल्यों में एकीकृत करना शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों के पाठ्यक्रम के बोझ को कम करता है। भाषा और गणित की पाठ्यपुस्तकें विद्यार्थियों की रुचि बनाए रखने में मदद करती हैं और उन्हें बहुत सारी गतिविधियों, दिलचस्प लेकिन चुनौतीपूर्ण कार्यों तथा विचारों के एक नेटवर्क के रूप में बहुत गूढ़ अवधारणाओं को व्यवस्थित करती हैं जिससे विद्यार्थी सीखने में व्यस्त रहते हैं। परिणामस्वरूप हम प्रत्येक विषय के लिए हर दिन अपनी कक्षा की अवधि को डेढ़ घण्टे या उससे अधिक तक बढ़ा सके। कभी-कभी तो हम एक विषय के लिए पूरा दिन भी लगा देते थे।

अन्त में, यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि कोई भी एक पाठ्यपुस्तक विद्यालय अधिगम के किसी भी स्तर के लिए पर्याप्त नहीं है और एनसीईआरटी पाठ्यपुस्तकें भी इसका अपवाद नहीं हैं। हालाँकि, यह दिलचस्प बात है कि पाठ्यपुस्तक के रूप में विविध समृद्ध संसाधन प्राप्त हुए जिन्होंने शिक्षकों के सामने स्रोतों का एक संसार खोलकर रख दिया ताकि वे अपने शिक्षण में उनकी सहायता ले सकें और उन्हें कक्षा में ले जा सकें।

हमने इस लेख के शुरू में उल्लेख किया है कि अपने विद्यार्थियों और स्कूल के सन्दर्भ को देखते हुए पहली और दूसरी कक्षा के शुरुआती चरणों में अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तक को पढ़ाना हमारे लिए मुश्किल है। इन कक्षाओं में अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकों का बेहतर रूप से उपयोग करने के लिए यह ज़रूरी है कि हमारे पास तृतीय भाषा शिक्षण का एक भली-

भाँति परिभाषित शैक्षणिक तरीक़ा हो। हम यह भी कहना चाहेंगे कि हमने आमतौर पर *प्रथम भाषा* के अलावा सभी भाषाओं के लिए *द्वितीय भाषा* शब्द का उपयोग किया है। इस लेख में हमने तृतीय भाषा शब्द का इस्तेमाल ऐसी भाषा के लिए किया है जो द्वितीय भाषा से भी काफ़ी दूर है, जो कि हमारे सन्दर्भ में हिन्दी है। हमारे विद्यार्थियों की प्रथम भाषा गढ़वाली है। हम अँग्रेज़ी को तृतीय भाषा मानते हैं क्योंकि यह माना जाता है कि विद्यार्थियों के पास इसके बेहद सीमित अनुभव हैं : उन्हें दैनिक वार्तालाप या उपयोग में अँग्रेज़ी व्याकरण सीखने और उपयोग करने का अवसर नहीं मिलता है।

भविष्य की योजनाएँ

इस लेख के लेखकगणों में से एक ने यह विचार प्रकट किया कि एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकें शुरुआत में भले ही कठिन लगती हों, लेकिन समय के साथ आगे बढ़ने का रास्ता दिखाती हैं और हम सभी इस बात से सहमत हैं। अगले शैक्षिक वर्ष के लिए हम पाठ्यपुस्तकों के लिए थीमपरक इकाइयों पर अधिक ध्यान देंगे, कक्षा में पढ़ाने के लिए कई शिक्षण इकाइयों को तैयार करने के साथ-साथ उसके लिए आवश्यक शिक्षण-अधिगम सामग्री की एक सूची तैयार करेंगे और ये सारे कार्य एनसीईआरटी अधिगम प्रतिफलों को ध्यान में रखते हुए किए जाएँगे।

आभार : हम खरुल निशा, कल्पना पँवार, और अल्पना माहोर को उनके सहयोग के लिए और अपने विद्यार्थियों को, हमें प्रयोग करने एवं सीखने में मदद करने के लिए धन्यवाद देते हैं।

References:

1. *Black, P. and Wiliam, D. (1998). Assessment and Classroom Learning. Assessment in Education: Principles, Policy & Practice, 5(1), 7-74.*
2. *Dewey, J. (1923). Democracy and Education. USA: Macmillan.*
3. *Freire. P. (1968). Pedagogy of the Oppressed. New York: Seabury.*
4. *Government of India (1992). Learning without Burden: Report of the national advisory committee. New Delhi: Ministry of Human Resource Development.*
5. *Government of India (2009). The Right of Children to Free and Compulsory Education Act 2009. New Delhi: Government of India.*
6. *Kumar, K. (1988). Origin of India's Textbook Culture. Comparative Education Review, 32 (4), 452-464.*
7. *NCERT (2006, 2007). Textbooks of Class I and II. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.*
8. *NCERT (2005). National Curriculum Framework. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.*
9. *NCERT (2017). Learning Outcome Indicators for Elementary Level. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.*
10. *Shome and Natarajan (2013). Ideas and Attitudes towards Projects and Changing Practices: Voices of four teachers. Australian Journal of Teacher Education, 38(10), 64-81.*

सौरभ सोम सम्प्रति अज़ीम प्रेमजी स्कूल से जुड़े हुए हैं। उनके वर्तमान शोध कार्यों में परियोजना आधारित शिक्षण, शिक्षक पेशेवर विकास और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा शामिल हैं। उनसे saurav.shome@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अर्चना द्विवेदी पिछले एक साल से अज़ीम प्रेमजी स्कूल में विज्ञान और अँग्रेज़ी पढ़ा रही हैं। अज़ीम प्रेमजी स्कूल से पहले उन्होंने पाँच वर्षों तक केन्द्रीय विद्यालय में विज्ञान पढ़ाया। वे विद्यार्थियों के लिए शिक्षण-अधिगम सामग्री बनाने में रुचि रखती हैं। उनसे archana.dwivedi@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

मोनू कुमार पूर्व प्राथमिक स्तर पर पढ़ाते हैं। वे उच्च प्राथमिक स्तर पर संस्कृत भी पढ़ाते हैं। वे समाजोपयोगी उत्पादक कार्य और शारीरिक शिक्षा में रुचि रखते हैं। उनसे monu.kumar@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

प्रमोद काण्डपाल पूर्व प्राथमिक स्तर पर पढ़ाते हैं। पुस्तकालय से सम्बन्धित कार्यों में उनकी रुचि है। उनसे pramod.kandpal@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** कामिनी उपाध्याय

विज्ञान की पाठ्यपुस्तक से सवाल

उमाशंकर

ऑक्सीजन केवल जलने में सहायक है? या स्वयं भी ख़त्म हो जाती है!

प्राथमिक कक्षाओं से हम पढ़ते आए हैं कि वायु हमारे लिए कितनी महत्त्वपूर्ण है। इससे जुड़े हुए कई तरह के प्रयोग हैं जैसे काग़ज़ की चकरी बनाकर उड़ाना और हवा के बहने को महसूस करना या ख़ाली गिलास को पानी में उल्टा रखकर यह प्रदर्शित करना कि ख़ाली गिलास वास्तव में ख़ाली नहीं बल्कि हवा से भरा है।

जैसे-जैसे हम आगे की कक्षाओं में पहुँचते हैं हम हवा की विभिन्न विशेषताओं मसलन घुलनशीलता के बारे में सीखते हैं। यह दिखाने के लिए कि हवा पानी में घुल जाती है, हम एक बर्तन में पानी लेकर गर्म करते हैं। पानी में उबाल आने के तुरन्त पहले हमें बर्तन की भीतरी सतह पर बुलबुले नज़र आते हैं। यह बुलबुले पानी में घुली हुई हवा की वज़ह से बनते हैं। हम यह भी साबित कर सकते हैं कि हवा एक पदार्थ है। हाँ! वही दो गुब्बारों को फुलाकर लकड़ी के सिरों से बाँधकर किया जाने वाला प्रयोग जो यह बताता है कि हवा में भी भार होता है और वह स्थान भी घेरती है।

इन प्रयोगों और प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर हम यह मानते हैं कि हमारे चारों ओर एक अदृश्य और जीवन के लिए अत्यावश्यक पदार्थ मौजूद है, जिसका सभी जीवित और निर्जीव पदार्थों पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है। इस तरह की गतिविधियाँ विज्ञान को बच्चों के वास्तविक जीवन से जोड़कर उन्हें विज्ञान की अवधारणाएँ समझाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

कई बार बच्चों के अवलोकन, तर्क, प्रश्न उस स्तर के होते हैं जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। ऐसा ही अनुभव मुझे कक्षा आठवीं में 'वायु' अध्याय को पढ़ाने के दौरान हुआ। कक्षा आठवीं में 'वायु' अध्याय का पहला भाग मूलतः ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और कार्बन डाइऑक्साइड गैस की विशेषता और उपयोगिता पर समझ बनाने के बारे में है और यह बच्चों को खोज-बीन, गतिविधियों और प्रयोगों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है। अध्याय का दूसरा भाग वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दों जैसे ग्रीन हाउस प्रभाव, अम्ल वर्षा के प्रति जागरूकता और संवेदनशीलता उत्पन्न करता है। इस अध्याय की शुरुआत मैंने एक गतिविधि के द्वारा की।

मैं (शिक्षक) : चलो आज हम हवा को रोकने की कोशिश करते हैं और देखते हैं कि क्या होता है?

बच्चे (आश्चर्य से) : सर! हवा को कैसे रोका जा सकता है!

मैंने कहा : अरे, हमें अपने आस-पास की हवा नहीं रोकनी है। अपनी साँस को रोकने की कोशिश करनी है और देखना है कि हम कब तक यह कर पाते हैं और कैसा अनुभव होता है?

(बच्चे आपस में इसकी चर्चा करने लगे और कहने लगे मैं ज़्यादा समय तक नहीं रोक पाऊँगा... नहीं मैं नहीं कर सकता!)

मैं (गतिविधि के बाद) : बच्चों, कैसा अनुभव हुआ?

बच्चे : सर, हमें घुटन महसूस होने लगी थी और हवा की कमी को पूरा करने के लिए अन्त में ज़ोर की साँस लेनी पड़ी।

(इस गतिविधि से जब साँस रोकने का औसत समय निकाला गया तो लगभग 12-15 सेकंड के लगभग आ रहा था।)

मैं : क्या नाक के द्वारा अन्दर खींची गई हवा और बाहर छोड़ी गई हवा में कुछ अन्तर होता है?

बच्चे : हाँ हम ऑक्सीजन अन्दर लेते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड बाहर छोड़ते हैं।

वहीं कुछ बच्चे यह बोलने लगे - नहीं हम जो लेते हैं वही छोड़ते हैं।

मैंने पूछा : इसकी जाँच कैसे की जा सकती है?

होमू : सर! क्षारीय फिनॉलाफ्थेलिन द्वारा शरीर से निकलने वाली कार्बन डाईऑक्साइड गैस की जाँच रंग परिवर्तन के आधार पर की जा सकती है। (यह उत्तर सम्भवतः पिछले सत्र में पढ़े गए अम्ल-क्षार अध्याय में किए प्रयोग के आधार पर था।)

उपरोक्त सुझाव के आधार पर हमने उसी समय यह प्रयोग करके देखा और पाया कि क्षारीय फिनालाफ्थेलिन (गुलाबी) मुँह द्वारा निकाली गई हवा के प्रभाव से रंगहीन हो जाता है। इससे यह निष्कर्ष निकला कि हमने अलग-अलग तरह की हवा का उपयोग किया। मतलब हवा में भी कई तरह की गैसें मौजूद हैं।

मोनी : सर! हम कैसे जान सकते हैं कि वायु किससे बनी है और इसमें और क्या-क्या मौजूद है?

लोमू : सर किताब में दिया है कि वायु में बहुत सारी गैसें मौजूद हैं। जैसे - नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड, आर्गन आदि।

मैं : हाँ आपने सही कहा। चलो इसे समझने के लिए एक और प्रयोग करके देखते हैं।

हमने 6-6 बच्चों के 5 समूह बनाए और बेल-जार प्रयोग करके देखा। प्रयोग से हमने यह निष्कर्ष निकाला कि हवा में कोई ऐसी चीज़ है जो मोमबत्ती को जलने में मदद करती है और जिसके बेल-जार में ख़त्म होते ही मोमबत्ती बुझ जाती है। इसी बीच एक समूह के द्वारा कुछ अलग तरह का प्रयोग करने की कोशिश की गई...

वीनू (मोमबत्ती को ढककर, गिलास को झटककर, फूँक मारकर जलाने में मदद करने वाली हवा को निकालने का प्रयास करते हुए) : अरे देखो! मोमबत्ती तो तुरन्त ही बुझ गई।

उस समूह ने फिर से गिलास को मोमबत्ती के ऊपर उल्टा रखा और उन्होंने पाया कि मोमबत्ती पहले की अपेक्षा काफ़ी तेज़ी से बुझ गई साथ ही जल का स्तर भी बहुत कम उठा। इस तरह बच्चे यह अनुमान लगा पा रहे थे कि हवा में पाई जाने वाली एक गैस मोमबत्ती को जलने में मदद करती है और दूसरी उसे बुझा देती है।

मैं : क्या हम इन गैसों को प्रयोगशाला में बना सकते हैं?

कुछ बच्चे (ख़ुश होकर) : हाँ! चलो बनाएँ।

मैं : पर कैसे?

बच्चे : प्रयोगशाला में उपलब्ध सामग्री और पुस्तक में दी गई गतिविधियों की मदद से!

मैं : हाँ! पर हमें बहुत सावधानी से काम करना होगा।

बच्चे समूह में स्वयं से प्रयोग करने लगे। वे जब ऑक्सीजन गैस का निर्माण करने के लिए पोटेशियम परमैंगनेट को गर्म कर रहे थे तब उन्होंने देखा कि पानी से भरी टेस्ट ट्यूब में पानी का स्थान कोई गैस ले रही थी।

मैं : बच्चो! पोटेशियम परमैंगनेट को गर्म करने से बनी गैस ऑक्सीजन ही है! इसकी पुष्टि कैसे की जाए?

कोकी : सर! ऑक्सीजन की उपस्थिति में चीज़ें तेज़ी से जलती हैं और ऑक्सीजन ख़त्म होते ही बुझ जाती है। इसलिए यदि टेस्ट ट्यूब में ऑक्सीजन है तो जलती हुई माचिस की तीली ले जाने पर तीली को और तेज़ी से जलना चाहिए।

फिर बच्चे अपने-अपने समूह में गैस का परीक्षण करने लगे। माचिस की तीली जो कि टेस्ट ट्यूब तक ले जाने के दौरान कुछ बुझ चुकी थी, अन्दर ऑक्सीजन के पास जाते ही चिंगारी के साथ जलने लगी और फिर कुछ समय बाद बुझ गई।

दीपू (टेस्ट ट्यूब में तीली को बार-बार अन्दर बाहर करते हुए) : अरे! यह तो बाहर निकालने पर बुझने लगती है और अन्दर ले जाने पर जल उठती है।

परन्तु कुछ समय बाद जब टेस्ट ट्यूब में माचिस की जलती तीली को वापस ले जाकर देखा तो पाया कि तीली के साथ पहली जैसी घटना नहीं घटी।

मोनी : सर अब तो तीली नहीं जल रही! टेस्ट ट्यूब की ऑक्सीजन कहाँ गई होगी?

बच्चे प्रयोग करते हुए

चेतु : टेस्ट ट्यूब की ऑक्सीज़न वहीं नहीं रहेगी! वह तो हवा में मिल गई होगी।

सना : टेस्ट ट्यूब में उपस्थित ऑक्सीजन माचिस की तीली को जलाने में उपयोग हो गई और वह ख़त्म हो गई होगी।

मोनी : लेकिन, पुस्तक में दिया गया है कि ऑक्सीजन जलने में मदद करती है न कि स्वंय जलती है। इस हिसाब से ऑक्सीजन को समाप्त नहीं होना चाहिए। और यदि ऑक्सीजन ख़त्म होती जा रही है तो अब तक तो पृथ्वी की सारी ऑक्सीजन को ख़त्म हो जाना चाहिए।

प्रश्न स्वाभाविक था। जब हम कहते हैं कि ऑक्सीजन ज्वलन-सहायक गैस है तब हम यही मान लेते हैं कि ऑक्सीजन तो केवल जलाने में मदद करती है जबकि सच तो यह है कि वह स्वयं भी ख़त्म हो जाती है। मैंने बच्चों से चर्चा करते हुए यह समझाने का प्रयास किया कि ऑक्सीजन, दहनशील पदार्थ (लकड़ी, कोयला, जीवाश्म तेल) जिनमें अधिकांशतः कार्बन के अंश मौजूद होते हैं, के साथ मिलकर उष्मा और कार्बन डाइऑक्साइड गैस का निर्माण करती है। इसके बारे में हम और विस्तार से समझेंगे जब हम कार्बन के बारे में पढ़ेंगे। फिर उस बच्चे के द्वारा पुनः यह प्रश्न किया गया।

मोनी : यदि गर्म लोहे को टेस्ट ट्यूब के भीतर ले जाया जाए तब क्या होगा?

प्रश्न भले ही उस बच्चे का था परन्तु पूरी कक्षा यह समझने के लिए उत्सुक थी।

मैं : हमें यह करके देखना चाहिए।

हमने फिर से टेस्ट ट्यूब में ऑक्सीजन गैस इकट्ठा की और लाल गर्म लोहे की पतली छड़ टेस्ट ट्यूब से गुजारी। अवलोकन में हमने पाया कि गैस के सम्पर्क में आते ही लोहे की चमक में वृद्धि हो जाती है किन्तु बार-बार प्रक्रिया दोहराने पर ऐसा नहीं होता। बच्चे आश्चर्यचकित थे।

होमू : ओह! ऑक्सीजन अब भी ख़त्म होती जा रही है।

मोनी (तार्किक ढंग से) : सर! या तो लोहे में कार्बन मौजूद है अथवा लोहे में भी कार्बन जैसा ही दहनशीलता का गुण है।

सना : मतलब! ऑक्सीज़न जलने में मदद तो करती है लेकिन नया पदार्थ बनाकर ख़ुद भी ख़त्म हो जाती है। तो हम यह नहीं कह सकते कि आक्सीजन केवल ज्वलन सहायक है।

मैं : हम आगे धातु-अधातु और कार्बन के बारे में पढ़ेंगे, शायद तब इनके और सटीक निष्कर्ष मिल पाएँ!

मेरे लिए यह काफ़ी रोचक अनुभव था और बच्चों के लिए भी। इस गतिविधि के बाद हमने आगे सिरका और सोडे के द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड का निर्माण किया और उसकी आग बुझाने वाली प्रकृति की जाँच की। साथ ही नाइट्रोजन गैस के अनुप्रयोग को भी जाना। इसके अलावा हमने वायु प्रदूषण के वैश्विक मुद्दों पर समाचार, अख़बार की कटिंग और वाद-विवाद प्रतियोगिता के माध्यम से समझ बनाने का प्रयास किया जिसकी चर्चा फिलहाल मैं यहाँ नहीं करूँगा। वायु को लेकर किए गए इतने रोचक

प्रयोग, तार्किक सवाल-जवाब, प्रायोगिक पुष्टि और निष्कर्ष तक पहुँचने का क्रम बच्चों में वैज्ञानिक सोच और दृष्टिकोण विकसित करने की दिशा में मददगार साबित हुए। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन अनुभवों के आधार पर बच्चों को अन्य अध्याय जैसे कि रासायनिक अभिक्रियाएँ, कार्बन, धातु और अधातु पढ़ाने और समझाने में मुझे काफ़ी मदद मिली।

इस तरह पाठ्यपुस्तकें कक्षा में चर्चा प्रारम्भ करने का माध्यम हो सकती हैं और बच्चों को विषयवस्तु को गहराई से सीखने की ओर अग्रसर कर सकती हैं।

उमाशंकर 2016 से अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी में विज्ञान विषय के शिक्षक के रूप में कार्यरत हैं। उन्होंने बायो-टेक्नोलॉजी से स्नातक और प्राणीविज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि हासिल की है। एक शिक्षक के रूप में वे बच्चों के साथ दोस्ती करने और उनके साथ मिलकर वैज्ञानिक प्रक्रियाओं को सीखने-सिखाने के साझा प्रयास में रुचि रखते हैं। उनसे umashankar@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

कॉपी एडिटर : स्वाति भदौरिया

कक्षा में भारत

विजयाश्री पीएस

शैक्षिक वर्ष समाप्त होने को था और कर्नाटक राज्य की पाँचवीं कक्षा की पर्यावरण विज्ञान की पाठ्यपुस्तक इस बात का इन्तज़ार कर रही थी कि बच्चे इसके पृष्ठों को पूरा पढ़ लें।

मैं *हमारा भारत – भौतिक विविधता* शीर्षक पाठ को पढ़ाने के लिए हमेशा उत्साहित रहती हूँ क्योंकि यह भारत के विभिन्न क्षेत्रों के ऐतिहासिक स्थानों और वहाँ की वनस्पतियों तथा जीवों की विशेषताओं को दर्शाता है। ऐसे ही एक अनुभव का लेखा-जोखा यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

पाठ्यपुस्तक के प्रत्येक अध्याय की शुरुआत में उस पाठ के विशेष उद्देश्यों के बारे में जानकारी दी गई होती है। इस अध्याय के लिए जो उद्देश्य दिए गए हैं वे इस प्रकार है कि इसमें *विद्यार्थी भारत की अनूठी प्राकृतिक स्थिति के बारे में जानेंगे*।

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद आप,

- भारत के भौतिक मानचित्र को समझेंगे।
- हिमालय पर्वत, पठारों, मैदानों, तटीय मैदानों, नदियों के बेसिन और रेगिस्तान के बारे में जानेंगे।
- समझेंगे कि प्राकृतिक पर्यावरण के कारक लोगों के जीवन को कैसे प्रभावित करते हैं।
- कला और वास्तुकला पर भौतिक कारकों के प्रभाव को जानेंगे।
- भारत के मौसम और जलवायु की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं के बारे में जानेंगे।
- भारत के पौधों और पशुओं के बारे में जानेंगे।

मैं पाठ्यपुस्तक से लैस होकर कक्षा में गई। भारत का भौतिक मानचित्र खुलने की प्रतीक्षा में, कक्षा के कोने में रखा हुआ था। मैंने विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान को समझने की कोशिश करते हुए अपना कार्य शुरू किया। लिहाजा सत्र एक साधारण प्रश्न के साथ शुरू हुआ कि *भारत क्या है*? विद्यार्थियों ने जवाब दिया, *यह हमारा देश है*। फिर मैंने पूछा कि भारत की विशिष्टता क्या है और यह सोचा कि शायद विद्यार्थी अनेकता में एकता के बारे में कुछ बताएँगे क्योंकि मैंने उसी समय नवीं कक्षा को वैसा ही एक पाठ पढ़ाया था। लेकिन मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि विद्यार्थी चुपचाप बैठे रहे। मुझे लगा कि ये विद्यार्थी अभी छोटे हैं और इसलिए मैंने अपने प्रश्न को बदलकर फिर से पूछा कि आप किन-किन स्थानों पर घूमने गए हो। एक लड़के ने कहा कि वह मैसूर गया और एक लड़की ने कहा कि वह गर्मियों की छुट्टियों में अपने दादा-दादी के घर गई थी। फिर क्या था, कक्षा का हर विद्यार्थी बेहद उत्साह के साथ अपने पारिवारिक भ्रमण और यात्राओं के बारे में बताने को उत्सुक था। उस समय मैंने निर्णय लिया कि मैं इस अध्याय के लिए एक स्पष्ट उद्देश्य के साथ एक प्रारम्भिक गतिविधि करूँगी जिससे विद्यार्थियों को विविधता का अर्थ समझ में आ जाए।

शुरुआत करने के लिए मैंने अपना परिचय दिया और बताया कि मैं कहाँ की रहने वाली हूँ और मेरे घर में कौन-सी भाषा बोली जाती है आदि। इसके बाद विद्यार्थियों ने अपने मूल स्थान और अपनी मातृभाषा के बारे में बताया।

कुल सात विद्यार्थी थे। इसलिए मैंने उन्हें तीन समूहों में बाँटा। मैंने समूहों से चॉक का एक टुकड़ा लेने के लिए कहा और ब्लैकबोर्ड पर तीन विशिष्ट स्थान (प्रत्येक समूह के लिए एक स्थान) चिह्नित किए। समूह के सदस्यों को मेरे द्वारा पूछे गए प्रश्न पर चर्चा करके बोर्ड पर अपने उत्तरों को लिखना था।

प्रत्येक समूह ने बोर्ड पर एक विशिष्ट भाग (उसे अपना स्थान मानते हुए) चुना और प्रश्नों के लिए तैयार हो गए। इसके बाद उन्होंने अपने-अपने

समूहों के लिए एक स्थान का नाम चुना। एक समूह ने बेंगलूरु, दूसरे ने तमिलनाडु और तीसरे समूह ने मैसूर को चुना। ये वे जगहें थीं जिनके बारे में वे जानते थे या जहाँ वे पहले रहते थे। विद्यार्थियों को अपनी चुनी हुई विशिष्ट जगहों के बारे में सभी प्रश्नों के जवाब देने थे।

इस गतिविधि का उद्देश्य इन स्थानों के बीच कुछ विभिन्नताओं का पता लगाना और फिर विविधता की अधिक जटिल धारणा की ओर बढ़ना था। उनसे मेरा पहला प्रश्न था कि *उस जगह की मिट्टी का रंग क्या है*? विद्यार्थी असमंजस में दिखे! मैंने उन्हें अपने-अपने समूहों में चर्चा करके उत्तर देने के लिए कहा। उन्हें कुछ मिनट लगे लेकिन अन्त में सर्वसम्मति से वे अपने उत्तरों के साथ तैयार हो गए। उनके उत्तर इस प्रकार थे कि उस जगह की मिट्टी का रंग लाल है, काला है और भूरा है।

अगला प्रश्न था, *उस जगह पर पानी का रंग क्या है*? शुरू में उन्होंने कहा कि सफ़ेद है। लेकिन थोड़ी जाँच-पड़ताल और प्रोत्साहन के बाद उन्होंने कहा कि पानी का रंग नारंगी, नीला और गहरा भूरा है! तीसरे प्रश्न तक आते-आते विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ने लगा। धीरे-धीरे उन्होंने जो कुछ भी अनुभव किया उसे लिखना शुरू कर दिया क्योंकि उन्हें इस बात की तसल्ली थी कि उनके उत्तरों के आधार पर उनके बारे में कोई राय नहीं बनाई जाएगी। आख़िरी दो प्रश्न उस जगह पर पाए जाने जानवरों और हरी पत्तेदार सब्जियों के बारे में थे।

गतिविधि के अन्त में विद्यार्थियों को यह देखकर बड़ी ख़ुशी हुई कि पूरा बोर्ड उनके उत्तरों से भरा हुआ था, ज़रा-सी भी जगह खाली नहीं थी।

विद्यार्थी इस बात से बेहद प्रभावित हुए कि जो जगहें एक-दूसरे से ज़्यादा दूर नहीं थीं और जिनके बीच यात्रा करने में छह घण्टे से अधिक समय नहीं लगता, उन जगहों में भी कितना अन्तर था। अब मैं देख पा रही थी कि विविधता की धारणा का बीज बोया जा चुका था। इस गतिविधि ने देश की भौतिक विविधता पर पाठ शुरू करने की तैयारी का काम किया था।

हमने इस बात पर भी चर्चा की कि भोजन, मौसम, मिट्टी का रंग, पानी का स्वाद आदि की दृष्टि से यह संसार कितना अलग है। इस बिन्दु पर आकर हमने तमिलनाडु, बेंगलूरु, मैसूर और कावेरी नदी का पता लगाने के लिए भारत के नक़्शे का उपयोग किया। विद्यार्थियों को राष्ट्रीय सीमाओं और देशों के बीच की सीमाओं के सीमांकन का बोध भी हुआ।

मैं आगे आने वाले एक बड़े पाठ की शुरुआत के लिए एक सन्दर्भ स्थापित करके उस दिन की कक्षा को समाप्त करना चाहती थी। पाठ्यपुस्तक देश के विभिन्न क्षेत्रों के भौतिक पहलुओं, जलवायु और कला एवं वास्तुकला पर तथ्यात्मक जानकारी प्रदान करती है। मुझे लगा कि पाठ को केवल तथ्यों तक सीमित न रहकर उसके परे जाना चाहिए तथा उसे और अधिक रोचक बनाना चाहिए। विद्यार्थियों को देश में विविधता की सराहना करते हुए विषय के साथ जुड़ना चाहिए। इस गतिविधि के अन्त में वे हमारे देश की विविधता के बारे में और अधिक जानने के लिए उत्साहित नज़र आ रहे थे।

इस गतिविधि ने पृथ्वी की विशालता के बारे में जानने के लिए भी विद्यार्थियों की रुचि और जिज्ञासा बढ़ाई। गतिविधि के बाद कक्षा में बड़े जोशो-ख़रोश के साथ चर्चा हुई और विद्यार्थियों ने भारत के नक़्शे पर शहरों और नदियों के बारे में और ग्लोब पर संसार के अन्य देशों के बारे में जानना चाहा। मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही जब वे कई दिलचस्प प्रश्न पूछने लगे। सत्र के अन्त में एक लड़की ने पूछा कि अगर हम ज़मीन से दूर जाते जाएँ तो क्या होगा? आख़िर हम कहाँ पहुँचेंगे? और काफ़ी देर से चुप बैठे एक लड़के ने कहा, क्या तुम पृथ्वी से दूर सूरज, चाँद पर जाना चाहती हो? इस बात पर सब हँसने लगे। बच्चों को खुलकर बोलते हुए देखकर मुझे ख़ुशी हुई। मैंने वादा किया कि अगली बार इस चर्चा को आगे बढ़ाएँगे और इस तरह से कक्षा समाप्त हुई।

विजयाश्री पीएस एक स्रोत व्यक्ति हैं और वे बेंगलूरु डिस्ट्रिक्ट इंस्टिट्यूट इनिशिएटिव, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के रूरल स्कूल इनिशिएटिव में कार्यरत हैं। उनसे vijayashree.ps@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल **पुनरीक्षण :** कामिनी उपाध्याय

Printed and Published by Manoj P on behalf of Azim Premji Foundation for Development; Printed at Suprabha Colorgrafix (P) Ltd., No. 10, 11, 11-A, J.C. Industrial Area, Yelachenahalli, Kanakapura Road, Bangalore 560062.

Published at Azim Premji University Pixel B Block, PES College of Engineering Campus, Electronics City, Bangalore 560100;
Editor: Prema Raghunath

अगला अंक

कक्षा के बाहर सीखना

Azim Premji University
Pixel Park, PES Campus, Electronic City, Hosur Road
Bangalore - 560100

080-6614 5136
www.azimpremjiuniversity.edu.in

Facebook: /azimpremjiuniversity
Instagram: @azimpremjiuniv
Twitter: @azimpremjiuniv